ज्ञानपीठ'-लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी-ग्रंथांक २४

द्विवेदी-पत्रावली

श्री बैजनाथसिंह विनोद

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक

लक्ष्मीचन्द्र जैन एम. ए.

प्रकाशक

अयोध्याप्रसाद गोयलीय,
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

****

प्रथम संस्करण
१९५४
मूल्य ढाई रुपये

****

मुद्रक
पं० प्यारेलाल भार्गव
राजा प्रिंटिंग प्रेस,
कमच्छा, बनारस

विषय-सूची

आमुख

द्विवेदी पत्रावलीके सम्बन्धमे दो-चार शब्द लिखनेमे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। मैं समझता हूँ कि ऐसा करके आधुनिक हिन्दीके निर्माताओ मे से एक प्रमुख साहित्यकारके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट कर सकूँगा।

वास्तवमे पत्रलेखन एक कला है, यद्यपि प्रत्येक व्यक्तिके पत्र कलाकी ऊँचाईको नही छू पाते। किसी पत्रका सौष्ठव और महत्त्व लेखकके व्यक्तित्व पर अवलम्बित है। लेखकका प्रयोजन रुचि और योग्यता आदि तत्त्व ही किसी पत्रको कलाकी वस्तु बनाकर सुरक्षित रख सकते हैं अथवा उसे रद्दी की टोकरीमे डाल सकते है। साहित्यकार तथा कलाकारके पत्र भी उनकी अन्य कलात्मक कृतियोकी तरह कलाके नमूने होते है। यह सच है कि किसी ग्रन्थके प्रणयन अथवा मूर्तिके निर्माणमे साहित्यकार अथवा कलाकार समाजको अपने ध्यानमे रखता है और पत्र लिखनेमे किसी व्यक्ति-विशेष को। परन्तु पत्रकी अपील कुछ क्षणके लिए व्यक्तिगत होते हुए भी उसका मूल स्रोत लेखकके कलात्मक व्यक्तित्वमे होता है। अतः वह पत्र किसी भी पाठकके हृदयमे रसका उद्रेक कर सकता है। स्व० द्विवेदीजी इसी प्रकार के साहित्यकार थे। अतः उनके पत्र भी साहित्यिक और सामाजिक महत्त्वके है। उनके पत्र प्रायः समसामयिक कवियो और साहित्यकारोको लिखे गये है। इसलिए उनका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कुछ व्यक्तिगत प्रसंगो को छोडकर द्विवेदीजीके पत्र किसी न किसी भाषासम्बन्धी प्रश्न अथवा साहित्यिक समस्यापर लिखे गये है। फलतः आधुनिक हिन्दी भाषा और साहित्यके विकास पर इन पत्रोंसे काफी प्रकाश पड़ता है।

स्व० द्विवेदीजीके साहित्यिक जीवनका अधिकाश 'सरस्वती'के सम्पादन मे बीता। प्रायः इसी पदसे वे पत्र-व्यवहार भी करते थे, यद्यपि अन्य साहित्यकारोसे व्यक्तिगत परिचयके कारण कुछ व्यक्तिगत प्रसंग भी आ जाते थे। अपने पत्रोमे भी द्विवेदीजी सम्पादकके रूपमे ही दिखायी पड़ते है। उनके पत्रोके अधिकाश वे ही विषय थे जो उस समय हिन्दीकी समस्याएँ, अर्थात् प्रादेशिक भाषाओके स्थान पर सार्वदेशिक हिन्दीके निर्माणका प्रश्न, खड़ी बोलीको गद्य और पद्य दोनोमे साहित्यका माध्यम बनानेका प्रश्न, संस्कृतनिष्ठ और सुबोध हिन्दीका प्रश्न, हिन्दीके व्याकरण और शब्द-विन्यासका प्रश्न, हिन्दी-साहित्यमे विषयोके चुनाव और सुरुचिका प्रश्न, हिन्दीमे स्वस्थ तथा निर्भीक पत्रकारिताका प्रश्न, हिन्दी साहित्यको लोक-मगलका वाहक बनानेका प्रश्न आदि। संक्षेप और स्फुट रूपसे द्विवेदीजीके पत्रोमे ये सभी विषय आलोकित होते है। वे जागरूक शिल्पीके समान अपने ज्ञान, तर्क तथा रुचिसे हिन्दी भाषा और साहित्यका संस्कार करते हुए दिखायी पड़ते है।

पत्रोमे द्विवेदीजीके साहित्यिक रूपके साथ-साथ उनके व्यक्तिगत जीवनकी भी झाँकी मिलती है। दृढ निश्चय और लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए सतत प्रयत्न उनके जीवनकी आधार-शिला थी। ससारका कोई प्रलोभन अथवा कठिनाई उनको पथभ्रष्ट नही कर सकती थी। सादगी और गरीबी उनके जीवनका संबल था। मितव्ययिता और त्याग तथा निर्भीकता और स्पष्टवादिताके साथ शिष्टाचार और सौजन्यका उनमे अद्भुत समन्वय था। प्राचीनताके प्रति आदरके साथ नवीनका स्वागत करनेकी उनमे विलक्षण क्षमता थी। पत्रोके छोटे-छोटे प्रसंगोमे ये बाते स्पष्ट रूपसे झलकती है।

आजतक द्विवेदीजीके पत्रोका सग्रह उपलब्ध नही था। खेदका विषय है कि अभी तक हिन्दी साहित्यमे विशिष्ट साहित्यकारोके पत्र-संग्रह

प्रकाशित करनेकी ओर ध्यान नही गया है। श्री 'विनोद' जीने इन पत्रोका सम्पादन कर हिन्दीमे एक बड़े अभावकी पूर्ति का है। यह संग्रह अपने ढंगका प्रथम ही है। आशा है द्विवेदीजीके अन्य पत्रोका प्रकाशन वे शीघ्र करा सकेंगे। स्व० द्विवेदीजीके जीवन-चरित्रको जोड़कर श्री विनोद जीने एक प्रकारसे पत्रोकी भूमिका लिख दी है। द्विवेदीजीके गुणोके प्रति जो उनकी आत्मीयता और सहानुभूति है शायद वही उनकी मूल प्रेरणा है।

इस प्रकाशनके लिए श्री विनोदजी तथा उसके प्रकाशक ज्ञानपीठ दोनो ही साधुवादके पात्र है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वैशाख प्रतिपद, वि० सं० २०११

राजबली पाण्डेय

निवेदन

कभी-कभी बेकारीकी हालतमे भी आदमी अच्छा काम कर जाता है। इतिहासमे तो ऐसे अनेक उदाहरण है ही। प्रस्तुत पुस्तक 'द्विवेदी-पत्रावली' भी इसीका प्रमाण है।

कुछ समयसे 'जनपद'का काम शिथिल पड़ जानेसे मैं एक प्रकारसे बेकार-सा था। सौभाग्यसे मेरे मित्र प्रियवर श्री राय आनन्दकृष्णजीको कुछ सूझा और उन्होने एक दिन मुझसे कहा—'विनोद' जी आप स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके चुने हुए पत्रोका संकलन कर दे। आपको सभीका सहयोग मिल जायगा। इससे आप हिन्दी साहित्यका एक बड़ा उपकार करेंगे। मुझे भी यह काम जॅचा। इसी बीच एक दिन श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीयसे मिलनेका अवसर मिला। संयोगसे उस समय भी श्री राय आनन्दकृष्णजी साथ थे। गोयलीयजी तो साक्षात् उर्दू साहित्य है। उर्दू-साहित्यकी चर्चा करते समय वे थकते ही नहीं। घंटो साहित्य-चर्चा होती रही। इसी समय गोयलीयजीने उर्दूके साहित्यकारोकी चर्चा की। मौलवी महेशप्रसादजीने 'खतूते-ग़ालिब' का सम्पादन कर दिया। और भी अनेक उर्दू-साहित्यकारोके पत्र प्रकाशित हो चुके है। मौका हाथ आ गया था। आनन्दकृष्ण भला कब चूकते! उन्होने झट कहा—विनोदजीने स्व० आचार्य महावीरप्रसादजी द्विवेदीके कुछ चुने हुए पत्रोका सग्रह कर लिया है। आप यदि प्रकाशित करना चाहे, तो यह काम पूरा हो सकता है।' गोयलीयजी तो चाहते ही थे।

'द्विवेदी-पत्रावली' की यही मूल प्रेरणा है।

× × ×

द्विवेदीजीके पत्रोके सग्रहमे लग गया। इस काममे सबसे पहले

श्रद्धेय राय कृष्णदासजीकी सहायता मिली। 'भारत कला-भवन' मे द्विवेदीजीके पत्रोका जो संग्रह था, उसे देखने और उसमेसे कुछ चुने हुए पत्रोकी प्रतिलिपि करनेकी अनुमति मुझे राय साहबने दे दी। 'भारत कला-भवन'से द्विवेदीजीके चुने हुए पत्रोका सग्रह कर लेनेके बाद मैंने नागरी-प्रचारिणी सभा काशीके संग्रहालयमे सुरक्षित द्विवेदीजीके काग़ज़-पत्रोको एक एक कर देखा। उक्त संग्रहमे कुछ ऐसे पत्र भी मिले, जिनकी पीठ पर अथवा अलग स्लिपो पर भी द्विवेदीजीने अपने कुछ पत्रोकी स्वयं प्रतिलिपि कर दी है। कुछ विवादास्पद मसौदे भी मिले। ऐसे उन्नीस पत्र सभाके महावीरप्रसाद द्विवेदी संग्रहमे मिले। उनकी प्रतिलिपि भी मैंने ले ली। पर अनेक कारणोसे उनका प्रकाशन उचित न जान पड़ा। अतः उन पत्रोको इस संग्रहमे नहीं दिया जा रहा है।

प्रयागसे द्विवेदीजीके पत्रोके सग्रहमे बन्धुवर डॉ० उदयनारायण तिवारीजीने बड़ी सहायता की। तिवारीजीकी कृपासे ही मुझे लल्लीप्रसाद पाण्डेयका सहयोग मिल सका। लल्लीप्रसाद पाण्डेय स्व० आचार्य महावीर प्रसादजी द्विवेदीके निकटके सहकर्मी थे। उनके पास द्विवेदीजीके बहुत महत्त्वपूर्ण पत्र है। इनका उल्लेख तक कहीं नही हुआ था। वे सभी पत्र मुझे मिल गये। मैंने सबको पढ़कर कुछ पत्र चुन लिये। यही नहीं, पाण्डेयजीने और भी पत्रोको प्राप्त करनेमे मेरी सहायता की। पं० देवीदत्त शुक्लजीसे भी मैं प्रयागमे मिला। अब उनकी आँखे नही रही। पर उनकी स्मृतिमे द्विवेदीजीसे संबंधित अनेक घटनाएँ है, जिन्हे सुनाते-सुनाते उनका हृदय भर जाता था। शुक्लजीने अपने पत्रोका संग्रह सम्मेलनको दे दिया है। पं० रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, सहायक मन्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलनने भी कृपा करके सम्मेलनके सग्रहालयमे सुरक्षित द्विवेदीजीके सभी पत्रोंको मेरे निकट सुलभ कर दिया। पं० ब्रजमोहन व्यासजीने स्व० श्रीधर पाठकजीको लिखे गये द्विवेदीजीके पत्रोको देकर मेरी बड़ी सहायता की।

श्री मुरारीलाल केडिया (काशी) के पास भी अपना एक छोटा-सा संग्रहालय है। उन्होने अनेक वस्तुएँ जुटा भी ली है। श्री केडियाजीने भी मेरी सहायता की। पर केडियाजीके संग्रहमे सुरक्षित द्विवेदीजीके अनेक पोस्टकार्डोंमे कैंची लग गई है। किसी बुद्धिमान्ने टिकट-संग्रहके लोभसे पोस्टकार्डोंके स्टाम्पको कैंचीसे काट लिया है। स्टाम्पोंकी पीठ पर प्रायः पत्र लिखनेकी तिथि थी। फलतः स्टाम्पोंके साथ ही पत्र लिखनेकी तिथि भी गायब है। द्विवेदीजी-द्वारा पं० केशवप्रसाद मिश्रजीको लिखे गये कुछ महत्त्वपूर्ण पोस्टकार्डोंकी तिथि गायब है। ऐसे पत्रोको मैने छोड़ दिया।

श्री राय कृष्णदासजी तथा कुछ और महानुभावोकी कृपासे मुझे स्व० आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके ११६७ पत्र देखनेको मिले। प्राप्त पत्रोमे ७२ प्रकाशित है; शेष सभी अप्रकाशित। इन सभी पत्रोको पढ़कर और उनमे-से कुछको चुनकर मैंने प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली'का संकलन किया है।

जिन व्यक्तियोके पत्र मुझे मिल सके, वे तो प्रस्तुत संग्रहमे सुरक्षित ही है। पर इनके अलावा कुछ और व्यक्तियोके पास भी द्विवेदीजीके पत्र होने चाहिएँ। मुझे मालूम हुआ कि स्व० बा० शिवप्रसादजी गुप्तके साथ भी द्विवेदीजीका पत्र-व्यवहार हुआ था जिसमे सम्भवतः गुप्तजी-द्वारा द्विवेदीजीको सहायता मिलनेकी बाते भी होगी। किन्तु यह ज्ञात न हो सका कि वे पत्र अब कहाँसे उपलब्ध हो सकेगे। इनके अलावा पं० कृष्णदत्त वाजपेयी (मथुरा), पं० रामचन्द्र शुक्ल एम० ए०, पं० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, पं० गिरजा प्रसाद द्विवेदी (जयपुर) के पास भी कुछ पत्र होगे। प० बनारसीदास चतुर्वेदीजीके पास भी कुछ पत्रोका संकलन होगा। पं० श्रीराम शर्माके पास, पं० गिरजाप्रसाद वाजपेयीके वंशजोके पास, श्री सुरेश सिंहजीके पास, रायगढके राजाके पास और श्री कालिदासजी कपूरके पास कुछ पत्रोका संकलन होगा। निश्चय इन पत्रोमे कुछ महत्त्वपूर्ण पत्र भी होगे।

यदि इन सभी महानुभावोके पत्रोको पढ़कर, उन पत्रोमे से कुछ पत्र चुननेका मुझे अवसर मिलता, तो निश्चय ही यह संग्रह और भी बड़ा होता। फिर यह संग्रह अपने आपमे पूर्ण भी होता। मैने कुछ लोगोके पास सुरक्षित पत्रोको पानेका प्रयत्न भी किया। पर मुझे एक ऐसे व्यक्तिने निराश कर दिया, जिनके द्वारा मै अनेक व्यक्तियोंके पास सुरक्षित पत्रोकी प्रतिलिपि पानेकी आशा करता था। वे व्यक्ति बडे है, बुजुर्ग है, संग्रही है अनेक व्यक्तियोसे सम्बद्ध है और मेरे हितचिन्तक भी है। उन्होने मुझे लिखा कि वे स्वयं द्विवेदीजीके पत्रोको प्रकाशित करेगे। यदि वे सभी व्यक्तियोके पास सुरक्षित पत्रोको प्रकाशित कर देंगे, तो निश्चय ही हिन्दीका बड़ा उपकार होगा। पर जबतक वे स्वयं द्विवेदीजीके पत्रोको प्रकाशित न कर दे, तबतक भी हिन्दी-प्रेमी जनताको द्विवेदीजीके पत्रोका रस मिलता रहे, लोग द्विवेदीजीके कार्यो और उनकी परिस्थितियोसे भी परिचित होते रहे, इसलिए यह 'द्विवेदी-पत्रावली' प्रस्तुत है।

× × ×

बंगला, गुजराती, मराठी और उर्दू भाषामे साहित्यकारोके पत्रोके अनेक प्रकाशन हैं। पर हिन्दीमे वैसी स्थिति नही है। जहाँ तक मुझे मालूम है हिन्दीमे शरतबाबूके पत्रोका अनुवाद श्रीनाथूराम प्रेमीने प्रकाशित कराया है। सुना है स्व० स्वामी दयानन्दजीके पत्रोका सग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। बापूके पत्र मीरा बहनके नाम भी प्रकाशित है। पर अभी तक हिन्दीके एक भी साहित्यकारके पत्र पुस्तक रूपमे नहीं प्रकाशित हुए।

प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली' हिन्दीका प्रथम पत्र-साहित्य है। कालकी दृष्टिसे यह पूर्ण है। जिस समय स्व० आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी जगत्मे आये और जबतक वे कुछ करने लायक थे, तबतकके उनके चुने हुए पत्रोका संकलन प्रस्तुत सग्रहमे है। विषयकी दृष्टिसे भी यह संकलन पूर्ण है। द्विवेदीजीकी सम्पूर्ण साहित्यिक प्रवृत्तियोसे सम्बन्धित कुछ न

कुछ पत्र इस संग्रहमे है। इस तरह द्विवेदीजीके काल और उनके सम्पूर्ण साहित्यिक प्रवृत्तियोंका प्रतिनिधित्व उनके प्रस्तुत पत्रोंमे है। यही नहीं, द्विवेदीजीके पत्रोंका चुनाव करते समय, द्विवेदीजीकी परिस्थिति, प्रवृत्ति और उनके व्यक्तित्वका भी बराबर ध्यान रखा गया है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत 'द्विवेदी-पत्रावली' द्विवेदी युग और द्विवेदीजीके व्यक्तित्वके सम्बन्धमे प्रामाणिक रिकार्ड है। यह मैं नही कहता कि इसमे सभी रिकार्ड मौजूद हैं, क्योंकि कुछ पत्र मुझे नहीं मिले। पर इतना कहा जा सकता है कि जितना है, वह पूर्णका प्रतिनिधित्व करता है। मैंने अपनी ओरसे ऐसा ही प्रयत्न भी किया है, किन्तु यह मै कैसे कहूँ कि मेरा प्रयत्न निर्दोष है—इसमे कुछ कमी नही है। कमी है और कुछ कमी का उल्लेख भी मैं कर चुका हूँ। उनके अलावा भी यदि कुछ कमी रह गई हो, तो विद्वान् आलोचक उसकी ओर ध्यान खींचकर हिन्दीका उपकार करेंगे।

× × ×

प्रस्तुत ग्रन्थ 'द्विवेदी-पत्रावली'के सम्पादन तथा द्विवेदीजीकी संक्षिप्त जीवनीके लिखनेमे डा० उदयभानुसिंहजी पी० एच-डी० के निबन्ध—महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग—से बहुत सहायता ली गई है। इसके लिए लेखक डॉ० उदयभानुसिंहजीके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अपना धर्म समझता है।

बन्धुवर श्री लक्ष्मीचन्द्रजीने अपने सत्परामर्श-द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थको कंटकरहित बनानेका प्रयत्न किया है। इसलिए उनके प्रति भी लेखक कृतज्ञ है।

काशी
१७—४—५४

बैजनाथसिंह विनोद

आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी

[संक्षिप्त जीवनी]

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीके पितामह पं० हनुमन्त द्विवेदी संस्कृतके अच्छे पण्डित थे। उनके तीन पुत्र थे—दुर्गाप्रसाद, रामसहाय और रामजन्न। पं० हनुमन्त द्विवेदीकी मृत्यु असमयमे ही हो गई। इस कारण उनके पुत्रोंकी शिक्षा न हो सकी। सबसे छोटे बालक रामजनकी भी मृत्यु हो गई। दुर्गाप्रसादने बैसवाड़ेमे ही गौराके तालुकेदारके यहाँ नौकरी कर ली और रामसहाय ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी सेना मे भर्ती हो गये।

अंग्रेजोकी प्रसार-नीतिके कारण देशके छोटे-छोटे राजाओंमे असन्तोष था। असन्तोषने षड्यन्त्रका रूप धारण किया। अंग्रेज़ी सेनामे विद्रोहकी आग धधकी। १८५७ का समय था। कम्पनीकी जिस सेनामे रामसहाय थे, वह होशियारपुर (पंजाब) मे थी। विद्रोहकी चिनगारी वहाँ भी पहुँची। विद्रोह जब फैलता है तो संक्रामक रूपमे फैलता है। देखते-देखते उसने होशियारपुरके भारतीय सैनिकोको अपनेमें समेट लिया। पर अंग्रेज बहुत सावधान थे। उन्होने ताड़ लिया कि सिपाहियोंके मनमे क्या है! और समय रहते ही विद्रोहको कुचलकर धर दिया। हिन्दुस्तानी फ़ौजमे भगदड़ मच गई। भागनेवालोमे रामसहाय भी थे। उन्होने देखा कि आगे सत-लजकी उमड़ती धारा है और पीछे तोप। दोनो ही ओर मृत्यु है। किन्तु साहस करके, मृत्युसे बचनेके प्रयत्नमे सतलजसे तो बचा भी जा सकता है, पर रुकनेसे तोप द्वारा कायरतापूर्ण मृत्यु निश्चित है। अतः वह सतलज

की वेगवती धारामे कूद पडे। मृत्युके निकट भी साहसीका सम्मान होता है। सतलजके वेगने सैनिक रामसहाय द्विवेदीकी अच्छी तरह परीक्षा करके—अपनी लहरों द्वारा तोड़-मरोड़कर—उस पार फेंक दिया। माँगते-खाते रामसहाय अपने घर दौलतपुर, जिला रायबरेली (उत्तर प्रदेश) पहुँचे।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीका जन्म सिपाही-विद्रोहसे सात वर्ष बाद वैशाख शुक्ल ४ संवत् १६२१ को दौलतपुरमे हुआ। उनके पिता रामसहाय हनुमानजीके भक्त थे। इसलिए उन्होंने बालकका नाम रखा महावीरसहाय।

रामसहाय द्विवेदी बम्बईमे नौकरी करते थे। इसलिए बालककी शिक्षाकी व्यवस्थाकी देखरेखका भार दुर्गाप्रसाद पर पड़ा। चचाकी देख-रेखमे बालकने 'शीघ्रबोध', 'दुर्गासप्तशती', 'विष्णुसहस्रनाम', 'मुहूर्त्त-चिन्तामणि' और 'अमरकोश' को कंठ कर लिया। इस प्रकार संस्कृत भाषा से महावीरप्रसाद द्विवेदीकी शिक्षाका प्रारम्भ हुआ। संस्कृतके इस प्रारम्भिक ज्ञानके बाद बालकको गाँवकी पाठशालामे भर्ती कराया गया। वहाँ उन्हें हिन्दी, उर्दू और गणितकी प्रारम्भिक शिक्षा मिली। कुछ फ़ारसीका भी अभ्यास कराया गया। इतनेमे ग्राम-पाठशालाकी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त हो गई। किन्तु उनके परिवारके लोग समयकी गतिको समझते थे। वह जानते थे कि अंग्रेज़ी राज्यमे बिना अंग्रेजीके किसी भी व्यक्तिका पूर्ण विकास सम्भव ही नही है। अतः महावीरसहायको अंग्रेज़ी शिक्षाके लिए हाईस्कूलमे भर्ती करानेका निश्चय किया गया। इसके लिए गाँवके स्कूलसे प्रमाण-पत्रकी ज़रूरत थी। प्रमाण-पत्र लिखते समय अध्यापकने भूलसे महावीरसहायकी जगह महावीरप्रसाद लिख दिया। इसी नामसे १३ वर्षकी उम्रमे अपने गाँवसे ३६ मील दूर बरेली जिला-स्कूलमे द्विवेदीजी भर्ती हुए और आगे उनका यही नाम हो गया। उनके

गाँवसे रायबरेली बहुत दूर था। इसलिए वह उन्नाव जिलेके रनजीत-पुरवा स्कूलमे भर्ती किये गये। पर वह स्कूल शीघ्र ही टूट गया। इसके बाद फतहपुर भेजे गये। पर वह डबल प्रोमोशन चाहते थे और डबल प्रोमोशन वहाँ मिला नहीं, इस कारण उन्नाव चले गये। किन्तु ये सभी स्थान उनके गाँवसे दूर थे। इस कारण उनके पिताने उन्हे अपने पास बुलानेका निश्चय किया।

अपनी स्कूली शिक्षाका अनुभव स्वयं द्विवेदीजीने इस प्रकार लिखा है—" 'बरेलीके ज़िला-स्कूलमे अंग्रेजी पढ़ने गया। आटा, दाल घरसे पीठपर लादकर ले जाता था। दो आने फीस देता था। दाल ही मे आटेके पेडे या टिकियाएं पका करके पेट-पूजा करता था। रोटी बनाना तब मुझे आता ही न था। संस्कृत भाषा उस समय उस स्कूलमें वैसी ही अछूत समझी गई थी, जैसे कि मद्रासके नम्बूदरी ब्राह्मणोमे वहाँ की शूद्र जाति समझी जाती है। विवश होकर अंग्रेजीके साथ फारसी पढता था। एक वर्ष किसी तरह वहाँ काटा। फिर पुरवा, फतेहपुर और उन्नावके स्कूलोंमे चार वर्ष काटे। कौटुम्बिक दुरवस्थाके कारण मै उससे आगे न पढ सका। मेरी स्कूली शिक्षा वही समाप्त हो गई।" डॉ० उदयभानु सिहजीने अपने निबन्धमे द्विवेदीजीकी इस समयकी एक घटना लिखी है, जिससे उनकी आर्थिक स्थितिपर भी प्रकाश पडता है। उन्होने लिखा है " एक बार तो जाड़ेकी ऋतुमे सारी रात पैदल चलकर पाँच बजे सबेरे घर पहुँचे। द्वार बन्द था, माँ चक्की पीस रही थी। बालककी पुकार सुनकर ससम्भ्रम दौड पडी। " इस प्रकार कठिन परिश्रम और घरवालोंके उद्योगके बावजूद भी घोर ग़रीबीके कारण महावीरप्रसाद द्विवेदीकी शिक्षा उचित रूपसे न हो सकी।

अपने पिताके बुलाने पर वह उनके पास बम्बई चले गये। बम्बई उसी समय औद्योगिक शहर हो गया था। वहाँ वह विभिन्न भाषाभाषियोंके

सम्पर्कमे आये। विद्याके प्रति अनुराग उनके मनमे पहले ही जग चुका था। सिर्फ़ ग़रीबीसे पैदा हुई असुविधाके कारण उनकी पढ़ाई रुक गई थी। बम्बईमें वह मराठी और गुजराती भाषाभाषी लोगोके सम्पर्कमे आये। इस सम्पर्कका प्रभाव उन पर पड़ा; उन्होने मराठी और गुजराती का अभ्यास कर लिया। उनके पड़ोसमे कुछ रेलवेके क्लर्क थे। ग़रीबी थी ही, रेलवेके क्लर्कोंके सम्पर्कसे रेलवेमें नौकरी करनेकी इच्छा पैदा हुई। प्रारम्भिक अंग्रेज़ीका ज्ञान था ही। रेलवेकी नौकरी करके नागपुर गये। नागपुरसे अजमेर चले गये। वहाँ राजपूताना रेलवेके लोको सुपरिण्टेण्डेण्टके आफिसमे १५) मासिक पर क्लर्क हो गये। डॉ० उदयभानुसिंह जीने लिखा है—उस पन्द्रह रुपयेमेसे "　'पाँच रुपया वे अपनी माता जीके लिए घर भेजते थे, पाँचमे अपना खर्च चलाते थे और अवशिष्ट पाँचमे एक गृह-शिक्षक रखकर विद्याध्ययन करते थे।　" इससे उनकी ग़रीबीका पता तो लगता ही है; साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि द्विवेदी जीके अन्दर विद्याके प्रति प्रगाढ़ अनुराग और परिवारके प्रति जिम्मेदारीकी गम्भीर भावना प्रारम्भसे ही थी।

अजमेरमे उनका मन न लगा। वह पुनः बम्बई वापस आ गये। बम्बईमे उन्होने टेलीग्राफी सीखी और जी० आई० पी० रेलवेमे सिग्नलर हो गये। इस समय उनकी आयु क़रीब बीस वर्षके थी। सिग्नलरके बाद उन्होने टिकट बाबू, माल बाबू, स्टेशन मास्टर और प्लेटियर आदिके भी काम किये। स्वभावसे भी विद्यानुरागी और साहित्यिक होते हुए भी, उन्हे सर्वथा असाहित्यिक काम करना पड़ा। पर अपने कामके प्रति जिम्मेदारी निभानेमे उन्होने कभी भी कोताही नही की। उन्होने अपने मनको अपनी भावनाओका दास नही बनाया। मन पर शासन किया। मनको काममे जोता। काममे मन लगानेके कारण उनका काम सदैव अच्छा रहा। फलस्वरूप पदोन्नति होती गई। इण्डियन मिडलैण्ड रेलवेके खुलनेपर झाँसी

मे उसके ट्रैफिक मैनेजरके दफ्तरमे टेलीग्राफ-इन्सपेक्टर नियुक्त हुए। इस काममे उन्हे बराबर दौरा करना पड़ता था। बराबर दौरेपर रहनेके कारण उनके अध्ययनमे बाधा पड़ती थी। इस कारण अवसर देख कर उन्होने ट्रैफिक मैनेजरके दफ्तरमे बदली करा ली। इसी समय द्विवेदीजी ने नये तरहके लाइन-क्लियरका आविष्कार किया। तारवर्की पर अंग्रेज़ीमे एक पुस्तक लिखी। इस बीच आई० एम० रेलवे, जी० आई० पी० रेलवेसे मिला दो गई। इस समय पदोन्नतिके साथ उन्हे बम्बई जाना पड़ा। किन्तु इस बीच उनका साहित्यिक अध्ययन बराबर आगे बढ़ता जा रहा था। बम्बईका जीवन उनके मनके अनुकूल न लगा। अतः ऊँचे पदका लोभ त्याग कर उन्होने फिर अपना तबादला झाँसी करा लिया।

झाँसीमे पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टके आफिसमे पाँच वर्ष तक चीफ क्लर्क रहे। इस बीचकी दो घटनाओका ज्ञान मुझे पं० देवीदत्तजी शुक्लके द्वारा हुआ। उन दिनो झाँसीसे रेलवेकी छपाईका काम कानपुर जाता था। रेलवेके ही कुछ लोग छपाईका काम लेकर कानपुर जाते थे और अपने खर्चका तथा छपाईका बिल भी दफ्तर को देते थे। संयोगवश एक बार द्विवेदीजीको छपाईका काम लेकर कानपुर जाना पड़ा। उन्होने वापस आकर जो बिल दफ्तरको दिया, वह पहलेके बिलोसे बहुत कम था। अफ़सरने पूछा—'क्यो इतना कम कैसे लगा ?' द्विवेदीजीने कहा 'मैं कम वेशी क्या जानूँ, जो लगा वह दिया।' बात असलमे यह थी कि सभी कर्मचारी ज़्यादा रुपयोका बिल देकर कुछ स्वयं खाते थे। पर द्विवेदीजी तो ईमानदार थे। अतः उन्होने असली खर्चका बिल दिया। इससे उनकी ईमानदारीकी धाक अधिकारियो पर जम गई। अब द्विवेदीजीको ही छपाईके कामसे भेजा जाने लगा। द्विवेदीजीके एक जायसवाल मित्र थे, उन्होने द्विवेदीजीकी प्रेरणासे एक प्रेस खोल लिया। इस प्रेससे वाजिब दाम पर वह छपाईका काम करा

लिया करते थे। द्विवेदीजीकी मैत्रीसे उनका प्रेस चल निकला। पर द्विवेदीजीने उनसे कोई लाभ नहीं लिया। बल्कि उनके एक ग़रीब रिश्ते-दारको अपने ख़र्चसे बी० ए० तक पढ़ा भी दिया।' इसी प्रकारकी एक दूसरी घटना भी है। द्विवेदीजीके एक ब्राह्मण मित्र झाँसी मे रहते थे। उनके तीन पुत्र थे और एक पुत्री थी। दैवयोगसे वह बीमार पडे और मरने लगे। मरते समय द्विवेदीजी उनके पास थे। मृत्युके समय वह व्याकुल होकर रोने लगे। द्विवेदीजीने समझाया, शान्त किया और उनसे उनकी अन्तिम इच्छा पूछी। उन्होने आँखोमे आँसू भर कर अपनी सन्तानकी ओर इशारा किया। द्विवेदीजीने कहा—'आप निश्चिन्त होकर जाइए। ये लड़के हमारे है।' और उनकी मृत्युके बाद वस्तुतः द्विवेदीजीने उनके बच्चोको पूरा प्यार दिया। उन्हे पढ़ाया-लिखाया। एक लड़केको इंगलैण्ड भी भेजा। यहाँ तक कि उन्हे पढ़ानेके लिए एक जमीन्दारकी प्रशस्ति भी की। पर उन बच्चोको पढ़ा लिखाकर योग्य ही नही बनाया—शादी-ब्याह भी किया। गरीबकी मैत्रीको और ऐसी मैत्रीको जिससे कुछ प्राप्तिकी कभी भी सम्भावना नहीं थी, इस ऊँचाई तक पं० महावीर-प्रसाद द्विवेदीने निभाया।

झाँसीमे रहते हुए उनकी साहित्यिक प्रवृत्ति बढ़ चली। बेकन-विचार रत्नावली और भामिनी-विलास निकल चुका था। हिन्दी कालिदास और नैषध-चरित-चर्चा द्वारा द्विवेदीजीका समालोचक रूप प्रकट हो चुका था। 'समा-चारपत्र सम्पादकस्तवः' द्वारा उनकी सम्पादनकलाके आदर्शका भावप्रवण रूप स्पष्ट हो चुका था। 'गंगालहरी', 'ऋतुतरंगिणी' और 'विहारवाटिका' द्वारा वह कवि रूपमे भी आ चुके थे। बेंकटेश्वर समाचार, भारतमित्र, नागरीप्रचारिणी पत्रिका और 'संस्कृत-चन्द्रिका'मे उनकी रचनाएँ निकलने लगी थीं। सन् १९०० ई० मे नागरीप्रचारिणी सभाके तत्त्वावधानमे इण्डियन प्रेस इलाहा-बादसे "सरस्वती" नामक मासिक पत्रिकाका प्रकाशन हुआ। पहले वर्ष

"सरस्वती" की सम्पादक-समितिमे पाँच व्यक्ति थे—कार्तिकप्रसाद खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, जगन्नाथदास बी. ए., राधाकृष्णदास और श्याम-सुन्दरदास। सम्पादक-समितिका कार्यालय काशीमे था। उस समय सम्पादक समितिके एक सदस्य श्री कार्तिकप्रसाद खत्रीने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीको यह पत्र लिखा थाः—

सरस्वती-सम्पादक-समिति कार्यालय,
गड़वासीटोला,
बनारस सिटी,
२६-६-१९००

महाशय,

अभीतक आपने अपने किसी लेखसे 'सरस्वती' को भूषित नही किया, जिसके लिए 'सरस्वती' को प्रार्थना है कि शीघ्र उसकी सुध लीजिए।

आपका
कार्तिकप्रसाद

इससे सिद्ध है कि प० महावीरप्रसाद द्विवेदी १९०० ई० मे लेखकोंकी प्रथम श्रेणीमे आ गये थे। दूसरे साल 'सरस्वती' के सम्पादनकी जिम्मेदारी सिर्फ़ बा० श्यामसुन्दरदास पर ही रही। पर अपने बहुधन्धी जीवनके कारण बा० श्यामसुन्दरदासजीने अपनेको 'सरस्वती' को जिम्मेदारीसे मुक्त करना चाहा। योग्य सम्पादककी तलाश होने लगी। बा० श्यामसुन्दरदासजीने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीको योग्य सम्पादक मानकर इण्डियन प्रेसके मालिक बाबू चिन्तामणि घोषसे कहा कि उन्हे 'सरस्वती' का सम्पादक बनाया जाय। बाबू चिन्तामणि घोषने पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीसे अनुरोध किया। इस प्रकार १९०३ ई० मे द्विवेदीजी "सरस्वती" के सम्पादक हुए।

डॉ० उदयभानुसिंहने द्विवेदी लिखित और 'द्विवेदी-काव्य-माला' में संकलित 'समाचारपत्र-सम्पादकस्तवः' के आधार पर उस समयकी सम्पादन-कलाकी स्थितिको अपने महत्त्वपूर्ण निबन्धमे इस प्रकार लिखा है:—

"तत्कालीन दुर्विदग्ध मायावी सम्पादक अपनेको देशोपकारव्रती, नानाकला कौशल-कोविद, निःशेष-शास्त्र-दीक्षित, समस्त-भाषा-पण्डित और सकलकला-विशारद समझते थे। अपने पत्रमे वे बेसिर-पैरकी बाते करते, रुपया ऐंठनेके लिए अनेक प्रकारके वंचक विधान रचते, अपनी दोषराशि को तृणवत् और दूसरोकी नन्ही-सी त्रुटिको सुमेरु समझकर अलेख्य लेखो द्वारा अपना और पाठकोका अकारण समय नष्ट कर देते थे। निस्सार निंद्य लेखोको तो सादर स्थान देते और विद्वान के सम्मान्य लेखोकी अवहेलना करते थे। आलोचनार्थ आई हुई पुस्तकोका नाममात्र प्रकाशित करके मौन धारण कर लेते और दूसरोकी न्याय-संगत समालोचनाकी भी निन्दा करते। दूसरे पत्रो और पुस्तकोसे विषय चुराकर अपने पत्रकी उदरपूर्ति करते और उनका नाम तक न लेते थे। पत्रोत्तरके समय पूरे मौनी बन जाते, स्वार्थ-वश परम नम्रता दर्शाते और अपने दोषकी निदर्शना देखकर प्रलयंकर हरका-सा उग्ररूप धारण कर लेते थे। भली-बुरी ओषधियो, गईबीती पुस्तकों और सभी प्रकारके कूड़ा-करकटका विज्ञापन प्रकाशित करके पत्र-साहित्यको कलंकित करते थे। अपनी स्वतन्त्रता, विद्या और बलका दुरुपयोग करके अपमानजनक लेख छापते और फिर भय उपस्थित होने पर हाथ जोड़कर क्षमा मॉगते थे।" ऐसी विकट परिस्थितिमे पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीने अपने लिए चार आदर्श निश्चित किये—१—समयकी पाबन्दी, २—मालिको का विश्वासभाजन बनना, ३—अपने हानिलाभकी उपेक्षा करके पाठकोके हानिलाभका ध्यान रखना और ४—न्यायपथसे कभी भी विचलित न होना।

संसारका नियम हो या न हो, पर आमतौरसे सभी महत्त्वपूर्ण कार्योंमे विघ्न होता ही है। विघ्नोकी उपेक्षा करके और संकटोको झेलकर भी जो

अपने आदर्श पर अटल रहता है, वही चरित्रवान व्यक्ति माना जाता है। द्विवेदीजीने जब हिन्दी सम्पादन-कलामे आदर्श उपस्थित करनेका निश्चय किया, उसी समय उनपर एक संकट आ पहुँचा। झाँसी स्टेशनके पुराने डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टका तबादला हो गया। उनकी जगह पर जो नये साहब आये, उनका बर्ताव गुलामोसे ही बढ़कर था। पर द्विवेदीजी रेलवेके नौकर होते हुए भी गुलाम नही थे—वह मनुष्य और स्वाभिमानी मनुष्य थे। इसके अलावा आदर्शनिष्ठाके साथ वह 'सरस्वती' के सम्पादक भी थे। सम्पादकका स्वाभाविक धर्म न्यायनिष्ठ होना होता है, वह अन्यायका प्रतिकार ही नही करता, अन्यायके प्रतिकारकी प्रेरणा भी देता है। सम्पादक 'कलरलेस' भी नहीं होता। वह तो न्यायके कलरके साथ ही पैदा होता है। नये डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्टने चाहा कि द्विवेदीजी स्वयं तो बेगारी करे ही, अपने अधीन कर्मचारियोसे भी बेगारी करवाये। पर द्विवेदीजीने जिस कुशलताके साथ नये साहबके नये फ़रमानका विरोध किया, उससे न केवल उनकी दृढ़ताका ही परिचय मिलता है, बल्कि यह भी पता लगता है कि वह अपने अधीनोको संकटसे बचाकर और स्वयं संकट झेलकर अन्यायका प्रतिकार करते थे। यह गुण नेतृत्वका गुण होता है। कुशल नेता बराबर अपने अनुयायियोंकी रक्षा करते हुए चलता है। इस सम्बन्धमे द्विवेदीजीने क्या किया, यह उन्हीके शब्दोमे इस प्रकार है:—

"मै यदि किसीके अत्याचारको सह लूँ, तो उससे मेरी सहनशीलता तो अवश्य सूचित होती है, पर उससे मुझे औरो पर अत्याचार करनेका अधिकार नही हो जाता है, परन्तु कुछ समयोत्तर बानक कुछ ऐसा बना कि मेरे प्रभुने मेरे द्वारा औरोपर भी अत्याचार कराना चाहा। हुक्म हुआ कि इतने कर्मचारियोको लेकर रोज सुबह ८ बजे दफ्तरमे आया करो और ठीक दस बजे मेरे कागज मेरे मेज़पर मुझे रखे मिले। मैने कहा मै आऊँगा पर औरोको आनेके लिए लाचार न करूँगा, उन्हे हुक्म देना हुज़ूरका

काम है। बस बात बढ़ी और बिना किसी सोच-विचारके मैंने इस्तीफा दे दिया। बादको उसे वापस लेनेके लिए इशारे ही नहीं, सिफारिशें तक की गईं, पर सब व्यर्थ हुआ। क्या इस्तीफ़ा वापस लेना चाहिए? यह पूछने पर मेरी पत्नीने विषण्ण होकर कहा—'क्या थूककर भी उसे कोई चाटता है?'—मै बोला—'नहीं, ऐसा कभी नही होगा, तुम धन्य हो।'—तब उसने ८ आना रोज तककी आमदनीसे भी मुझे खिलाने-पिलाने और गृहकार्य चलानेका दृढ संकल्प किया, 'सरस्वती' की सेवासे मुझे हर महीने जो २० रुपया उजरत और तीन रुपया डाकखर्चकी आमदनी होती थी, उसीसे सन्तुष्ट रहनेका निश्चय किया। मैंने सोचा किसी समय तो मुझे महीनेमे १५ रुपये ही मिलते थे, २३ रुपये तो उसके ड्योढ़ेसे भी अधिक है। इतनी आमदनी मुझ देहातीके लिए कम नही।"

यदि द्विवेदीजी चाहते तो अपने अधीन कर्मचारियोको काममे जोत कर, साहब को ख़ुशकर, स्वयं आरामसे रह सकते थे। पर उन्होने ऐसा नही किया। किन्तु उन्होने साहबकी आज्ञाकी अवज्ञा भी नही की। बडी खूबीसे साहबकी अन्याय पूर्ण आज्ञाका प्रतिवाद किया। अन्यायका प्रतिवाद करके साहबके हाथमे बर्खास्त करनेका अधिकार भी नहीं रहने दिया। स्वयं इस्तोफ़ा देकर साहबके मुखपर थप्पड़ जड़ दिया। इसके लिए जिस त्याग की जरूरत थी, वह भी किया। १५०) रु० मासिककी नौकरी और ५०) मासिक भत्ता—कुल २००) रु० मासिक की १६०३ ई० की आमदनी पर लात मार दिया और निकल पडे कष्ट झेलनेके कठिन कण्टकित पथ पर। इस प्रकार जिस "सरस्वती" के द्वारा उन्होने सम्पूर्ण हिन्दी-जगत्‌का नियमन किया—आधुनिक हिन्दी साहित्यका नव-निर्माण किया—उसका सम्पादन स्वीकार करते ही गम्भीरताके साथ त्याग किया।

"सरस्वती" का सम्पादन करते हुए पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी पहली और ज़ोरकी टक्कर नागरीप्रचारिणी सभा, काशीके प्रमुख नेता बाबू

श्यामसुन्दरदाससे हुई। द्विवेदीजी किन्तु, परन्तु, शायद और सम्भवतःकी लफ्फाजी वाले समालोचक नही थे। वह जैसे दृढ़ चरित्रके व्यक्ति थे, उसी प्रकार निश्चित और दृढ लेखनीके समालोचक भी थे। उन्होने सभाकी खोज रिपोर्टकी खरी समालोचना की। खरी समालोचनाको बहुत कम लोग सहन करनेकी क्षमता रखते है। सभाके सदस्योने "सरस्वती" से अपने समर्थन वापस लेनेको धमकी दो। पर द्विवेदीजी इण्डियन प्रेसके मालिक बाबू चिन्तामणि घोषका विश्वास प्राप्त कर चुके थे। अतः उन्होने द्विवेदीजी पर ही सारा फैसला छोड़ दिया। द्विवेदीजीने दूने उत्साहसे अपनी धारणाके अनुसार सभाके गलत कामोका सप्रमाण पर्दाफाश करते हुए एक लम्बा वक्तव्य लिखकर सभाके पास भेजा। पर उसमे दिखाये गये दोषोको सभाके कार्यकर्ताओने न तो दूर करनेकी चेष्टा की और न उनके लिए खेद ही प्रदर्शित किया। नागरीप्रचारिणी सभामे सुरक्षित द्विवेदी जीके पत्रोमे कुछ ऐसे पत्र हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि द्विवेदीजीके मनमें एक बार यह आया कि उस वक्तव्यको प्रकाशित कर दे। पर उन्होने सोचा कि पुस्तके और लेख लिखकर, सभासदोकी संख्या बढाकर, सभाके कितने ही काम करके और गॉठका पैसा भी खर्च करके, जिस सभाकी सहायता की, जिस सभाके कई साल तक सदस्य रहे, उसके विरुद्ध लेख लिख कर उसे हानि पहुँचाना ठीक नही। इस सम्बन्धमे उनका सिद्धान्त था—'विषवृक्षोऽपि संवर्द्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्।' द्विवेदीजी अपने युगमे प्रसिद्ध लड़ाके थे, पर उस लड़ाईमे भी उनकी नैतिकता थी। वह सार्वजनिक जीवनको बिगाड़नेवाली लड़ाई नही लड़ते थे। उनका क्रोध भी संयमित था। पर वह समझौतापरस्त भी नही थे। उन्होने "सरस्वती" पर से नागरीप्रचारिणी सभाका समर्थन हटा दिया, सभाकी सदस्यताको छोड़ दिया और जन्मभर नागरीप्रचारिणी सभाके भवनमे भी जानेसे बचते रहे। इस प्रकार जहॉ उन्होने सत्यको स्पष्ट रूपमे कहनेकी अटूट दृढता

दिखाई, वहाँ ही सभाके विरुद्ध लिखनेसे अपनेको रोककर अपने संयम और संस्कृत रुचिका परिचय भी दिया। उन्होने सत्यको भी निबाहा, सभा की सदस्यता तकसे अलग हो गये और सौन्दर्यकी भी रक्षा की, सभाके विरुद्ध सार्वजनिक रूपसे कुछ नही किया।

भाषाके मामलेको लेकर बा० बालमुकुन्द गुप्तसे भी उनका संघर्ष हो गया था। दोनो ओरसे अनेक साहित्य-महारथी क्षेत्रमे उतर आये थे। दोनों समान शक्तिके व्यक्ति थे। भाषा-सम्बन्धी यह विवाद हिन्दी भाषाके इतिहासकी एक घटना हो गई। पर इस विवादका धरातल द्विवेदीजीकी ओरसे ओछा नही होने पाया। डॉ० काशीप्रसाद जायसवालसे भी द्विवेदी जीका कुछ मतभेद हुआ। दोनो ओरसे व्यंगवाण भी छूटे। पर दोनो ही एक दूसरेके हितैषी भी बने रहे, एक दूसरेके काम भी आते रहे। विवादका धरातल बौद्धिक ही बना रहा। पं० लक्ष्मीधर वाजपेयीसे द्विवेदी जीका पहले विवाद हुआ, पर बादमे मैत्री हो गई। वस्तुतः उनके विवादो मे भी व्यापक दृष्टि और सिद्धान्तकी गम्भीरता होती थी। सत्यप्रियता, न्यायनिष्ठा, स्पष्टवादिता और हिन्दीहितैषितासे हटकर उन्होने विवाद किया ही नही। वह जैसा सोचते थे, सोचकर जो निश्चय करते थे, उसीके अनुकूल उनका आचरण भी होता था। इसीलिए उनकी क्रियामे तीव्रता भी होती थी। उनके जीवनका सौन्दर्य पालिशमे नही, सत्य और लोक-कल्याणकी प्रेरणामे था। वह गरीब घरमे पैदा हुए थे, गरीबीमे पले थे, कठोर संघर्ष करके बढ़े थे और धनी बनना, धन बटोर कर, धनके बल पर अथवा पदके बल पर बड़ा आदमी बनना उनका आदर्श नही था। इसी-लिए छलसे बात करने और छलपूर्ण व्यवहारसे उनको चिढ़ थी। उनमे स्वार्थ-साधनकी प्रवृत्ति नही थी, इसलिए दबकर बात करनेका उन्हे अभ्यास नही था। उन्होने एक पत्रमे लिखा भी था "मै रिश्वत देना नही चाहता। मैं झूठ बोलनेसे डरता हूँ।" स्वाभिमान उनमे कूट-कूटकर भरा था।

इन्ही सब कारणोसे वह बहुत कुछ कठोर थे। उनसे प्रायः लोगोसे लड़ाइयाँ हो जाया करती थी। किंतु लड़ाइयोमे भी वह संयम रखते थे। इसलिए उनकी लड़ाइयोका धरातल ऊँचा होता था। वाद-प्रतिवाद और संवादका धरातल शुभ होता था।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी संयमके अवतार थे। घोर ग़रीबीका सामना उन्होने कठिन संयमसे किया। वह नियमित समयपर प्रातःकाल उठते। नित्यकर्मसे निवृत्त होकर कुछ टहलते। फिर अपना साहित्यिक कार्य करते। रेलवेकी नौकरी करते हुए भी, मौक़ा मिलनेपर समय निकालकर उन्होने मराठी, गुजराती और बंगला भाषापर अधिकार प्राप्त किया। समयपर अपने रेलवेकी नौकरीपर जाते। रेलवेकी नौकरीमे वह अपना रोजका काम रोज़ समाप्त कर दिया करते थे। ऐसा नही होता था कि आजका काम कलके लिए पड़ा रहे। रेलवेके दफ्तरका काम पूरा करके वह घर आते। हाथ-मुँह धोकर, थोड़ा जलपान करके पत्र-पत्रिकाएँ पढते। पत्रोका उत्तर देते। उत्तर न देने लायक़ पत्रोपर 'नो रिप्लाई' लिखते। सबका रिकार्ड रजिस्टर पर रखते। घरका हिसाब रखते। अध्ययन करते। रेलवेकी नौकरी छोड़ देने पर सारा समय 'सरस्वती' को देते। कोई भी लेख बिना अच्छी तरह जाँचे उसकी भाषाको बिना ठीक-ठाक किये कभी भी प्रेसमे नही देते थे। उनके संशोधित लेख नागरीप्रचारिणी सभाके संग्रहालयमे सुरक्षित है। वे अशुद्धि-भरी रचनाओका आद्योपान्त संशोधन कर दिया करते थे। कविताओका कायाकल्प कर दिया करते थे। कभी-कभी सम्पूर्ण रचना ही बदल देते। लेखक सिर्फ अपना नाम देखकर अपनी रचना समझता था। अस्वीकृत रचनाओके दोषोको स्पष्ट करते हुए पत्र लिखते थे। कभी-कभी ग्रन्थ-निर्देश भी कर दिया करते थे। ऐसा करते हुए भी वह लेखकोके साथ बहुत प्रेम-पूर्ण व्यवहार करते थे। लेखकोसे लेख मँगाते समय उन्हे अनेक विषय सुझाते थे और सहायक ग्रन्थोंका नाम भी बताते थे। सच्ची लगन, विस्तृत

अध्ययन, सुन्दर शैली और संकोची स्वभाववाले लेखकोंकी तो वह ख़ुशा-मद तक करते थे। ऐसा करनेमे उन्हे पत्र-व्यवहार भी बहुत करना पड़ता था। 'सरस्वती' के लिए छः महीनेकी सामग्री वह अपने पास बराबर प्रस्तुत रखते थे। जब कभी वह बीमार हुए, छुट्टी ली, या अन्तमे अवकाश भी ग्रहण किया, तब अपने उत्तराधिकारीको कई महीनेकी सामग्री देकर गये। उनके लगभग सत्रह वर्षोंके सम्पादन-कालमे एक बार भी 'सरस्वती' का प्रकाशन नही रुका। इस प्रकार उनके जीवनमे संयम और परिश्रमका अपूर्व योग था। कुछ लोग प्रतिभाको एक रहस्य समझते है। पर यह भ्रम है। वस्तुतः प्रतिभा संयम और परिश्रमके परिणामका ही दूसरा नाम है। बुद्ध, महावीर, चाणक्य, चन्द्रगुप्त, अशोक, तुलसीदास, रवीन्द्रनाथ और गान्धीजी सभीकी प्रतिभाका एक ही रहस्य है—अटूट संयम और कठिन परिश्रम!

द्विवेदीजीके संयममे अनेकरूपता थी। उनका संयम जीवन-व्यापी था। ग़रीबीसे उन्होने जीवन बिताना सीखा था। वह गाढेका कपड़ा पहनते। अपने पर कम-से-कम खर्च करते। अपनी कम-से-कम आमदनीमे भी कुछ न कुछ बचा कर रखते। यह ठीक है कि सन्तान न होनेके कारण किसी सीमा तक इस काममे उन्हे कुछ सुविधा भी थी। पर यह ऐसा कारण नही है कि जिसे प्रधान माना जाय। अनेक ऐसे सन्तानहीन व्यक्ति हैं, जो अन्य आदतों पर अधिक व्यय करते है। पर द्विवेदीजी संयमी थे। उनके जीवनमे न बुरी (असामाजिक) भावनाएं थी और न उनकी वैसी आदत थी। वे पूर्ण संयमी थे। पर उनका संयम कभी भी कंजूसीकी सीमामे नही गया। वह अपने अतिथिका पूर्ण सत्कार करते थे। घर आये साधारण विद्यार्थीको भी जलपान कराते। उनके कोई सन्तान नही थी। पर उन्होने औरोंकी सन्तानको अपनी सन्तान बना लिया था। अपनी बहनकी सौतकी सन्तानको उन्होने अपनी सन्तान बना लिया। अपने मित्रोंकी सन्तानके साथ अपनी सन्तान-जैसा व्यवहार किया। अनेक लड़कोंको

बी० ए०, एम० ए० तक पढ़ाया। रिश्तेकी तीन भानजिओकी शादियाँ की, उनका गौना दिया। ग़ैरोकी भी दो लड़कियाँ व्याहीं। अनेक लड़कियो की शादीमें सहायता दी। अनेक विधवाओंको मासिक वृत्ति दी। कुएँ खुदवाये। काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमे छात्र वृत्तिके लिए ६४०० रु० का दान दिया। १००० रु० नागरीप्रचारणी सभा काशीको दान दिया। इस प्रकार पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीके जीवनमे वदान्यता और मितव्ययिताका असाधारण संयोग था। उनका संग्रह दानके लिए था। वह स्वभावके कुछ क्रोधी थे—सम्भवतः उनमे कुछ पूर्वाग्रह भी था—पर यह पूर्वाग्रह उनकी दानवृत्ति और न्यायनिष्ठा पर कभी हावी नहीं हो सका। नागरीप्रचारिणी सभा काशीके कुछ अधिकारियोंसे उनका झगड़ा था; पर नागरीप्रचारिणी सभाको ही उन्होने अपना सर्वोत्तम दान दिया।

द्विवेदीजी निरट गाँवके गरीब ब्राह्मण घरमे पैदा हुए थे। कठिन परिश्रम करते हुए अनेक आर्थिक असुविधाओंके बीचसे वह गुजरे थे। ऐसी परिस्थितिमे भी उनके अन्दर एक व्यवस्था थी। उनके घरकी चीज अस्तव्यस्त और फिंकी हुई नही रहती थी। किताब, काग़ज़, कलमदावात सभी व्यवस्थित, सभी साफ। यहाँ तक कि लिखनेके बाद वह कलमको पोछकर रखते थे। कागजके चिट तकको सम्हाल कर रखते और उसका उपयोग करते थे। सावधानीसे पत्र-पत्रिका पढ़ते और आवश्यक ख़बरो पर निशान लगाकर सम्हाल कर रखते। उनके घरमे कपड़ा-बिछौना करीनेसे रखा होता था, उनके घरमे टेबल-कुर्सी, गुलदस्ता तथा अन्य चमक-दमकका सामान नही था। उनका घर साधारण गृहस्थका घर था। पर व्यवस्था और सफाईके कारण उनका घर मन्दिरकी तरह साफ़ और स्वच्छ रहता था। उसमे सादगी और स्वच्छतासे निर्मित सौन्दर्य-भावना थी। उनका घर उनके मानसको व्यक्त करता था और उनका मानस उनके घरकी तरह व्यवस्थित और स्वच्छ था। इसी कारण द्विवेदीजी

अव्यवस्था और गन्दगीको बर्दाश्त नही कर पाते थे। उन्होने हिन्दी भाषा और साहित्यको भी व्यवस्थित कर दिया। जब वह गॉवमें रहते थे, और बहुत कमजोर हो गये थे। उस समय भी उनकी व्यवस्था-प्रियता ज्यो की त्यो बनी थी। श्रीयज्ञदत्त शुक्लने द्विवेदी अभिनन्दन-ग्रन्थमे उनकी व्यवस्था-प्रियताके सम्बन्धमे लिखा है—" प्रतिदिन सायंकाल वे जब अपने बागमे घूमने जाते हैं, तब बागके वृक्षोका भली भॉति निरीक्षण करते हैं। यही नही, वे निरीक्षण-द्वारा इसका भी अनुमान कर लेते हैं कि किस वृक्षमे कितने फल लगे हुए है। इसी प्रकार वे अपने खेतोका भी खूब निरीक्षण करते है। शामको टहलते हुए वे प्रत्येक खेतमे यह देखते है कि उसे सीचनेकी आवश्यकता है या नही, या उसमे कोई कीड़ा तो नही लग गया है।" अपने प्रिय जनोकी आर्थिक व्यवस्थाका भी ख्याल रखते थे। सलाह भी दिया करते थे।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीने आलोचनाके शास्त्रीय ग्रन्थ नही लिखे। शायद वह आलोचनाके शास्त्री ग्रन्थोंके निर्माणकी परिस्थिति भी नही थी। द्विवेदीजीने हिन्दी भाषाका सुधार, लोक-रुचिका परिष्कार और लेखक निर्माणका कार्य किया। इसके लिए उन्होने नाना विषयोमे अपनी लेखनीका प्रयोग भी किया। वस्तुतः लिखनेकी सफलता वे इसी बातमे मानते थे कि कठिनसे कठिन विषय भी ऐसे सरल रूपमे रख दिये जॉय कि साधारण पाठक भी उसे समझ जाय। इसी कारण उनमे गूढ़-गुंफित परम्पराकी कमी नज़र आती है। पर व्याकरणका उन्होने सदैव ध्यान रक्खा। व्याकरण-सिद्ध भाषा लिखनेवाले बहुतसे लेखक भी उन्होने पैदा किये। किन्तु भाषाको सुधारते हुए भी उन्होने अनेक आलोचनात्मक लेख लिखे। उनकी आलोचनाओंमे दो प्रकारके द्वन्द्वकी परिणति है—बाह्य जगत्‌मे नवीन और प्राचीन, पूर्व और पश्चिमकी विचारधाराका द्वन्द्व और अन्तरमे कटु सत्य और कोमल हृदयका द्वन्द्व। संस्कृतके घने सम्पर्कके कारण जहॉ उनमे

प्राचीनताके प्रति प्रेम है, वही विविध भाषाओंके साहित्यके घनिष्ठ सम्पर्कके कारण पश्चिमसे आनेवाले आधुनिक ज्ञान-विज्ञानके प्रति तीव्र आकर्षण भी है। यही कारण था कि उन्होने 'सरस्वती' के अनेक अंकोमे दस दस विषयो पर सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखी। इसी कारण कही-कही उनकी आलोचनाओमे पूर्व और पश्चिमके सिद्धान्तोका समन्वय भी दृष्टिगोचर होता है। पर इस समन्वयका अपेक्षित विकास शायद द्विवेदीजीमे नहीं हुआ था। इसीलिए छायावादकी उचित प्रशसा वे नही कर सके। पर इस समन्वयका प्रारम्भिक रूप द्विवेदीजीके चिन्तनमे प्रकट हो चुका था। द्विवेदीजीने जिस सत्यको अध्ययन, चिन्तन, मनन द्वारा जान लिया था, उसके प्रति उनमे अटूट श्रद्धा थी; वह सत्यको शब्दोंके कौशलसे फुसलाना पाप समझते थे। सत्यनिष्ठाके कारण ही अपने घनिष्ठतम मित्रों तकके लेखोमे आवश्यक होने पर वह काट-छाँट करना अपना कर्तव्य समझते थे। सत्यनिष्ठाके कारण ही वह अपनी बातों और धारणाओमे आवश्यक संशोधन भी स्वीकार करते थे। किन्तु इस सत्यनिष्ठाके कारण ही उन्हें अपने कोमल हृदयको दबाना भी पड़ता था। मित्रो तकका विरोध करना पडता था, मित्रोसे भी झगडना पड़ता था। पर यदि उनमे यह सत्यनिष्ठा न होती, तो वह अपने युगको रूप न दे सकते। द्विवेदीजीकी आलोचनामे विचारोकी सजगता, तर्कका पैनापन, कभी-कभी व्यंगोकी भरमार, संस्कृत, उर्दू और फारसीका आवश्यक पुट, अपनी बातको फेर-बदलकर पाठकके मनमे बैठा देने और विरोधीको कायल कर देनेकी महत्त्वपूर्ण शैली है। इसी व्यास शैली-द्वारा उन्होने अपने युगके झाड़-झंखाडोको साफ किया था; इसी शैली-द्वारा उन्होंने भाषाका सुधार किया था; इसी शैली-द्वारा उन्होने नवीन लोकरुचिका निर्माण किया था। किन्तु सिर्फ़ शैली-द्वारा ही कोई युग-निर्माता नही हो जाता। द्विवेदीजीमे व्यास-शैलीके साथ ही गम्भीर सत्यनिष्ठा थी। सत्यनिष्ठाके साथ ही लेखक पैदा करने, उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार

करनेकी आदत थी। वह अपने साथियोके साथ 'संस्कृत' व्यवहार नहीं करते थे; अपने साथियोके साथ उनका व्यवहार सचाईसे भरा-पूरा होता था; धनी, मानी और वरिष्ठ वर्गके साथीके प्रति एक व्यवहार तथा गरीब और अख्यात साथीके साथ दूसरा व्यवहार करने वाले—दोमुँहे नेता वे नही थे। वह बलाबल तौलकर नही चलते थे; सत्य-असत्यको देखकर सत्यके साथ चलते थे। इसी कारण उनकी ईमानदारी और सच्चाईमे किसीको अविश्वास नही हुआ। वह जन-साधारण और साहित्यिकोकी श्रद्धाको सहज ही आकर्षित करते थे। इसके साथ ही उनमे कठिन परिश्रमशीलता, विविध भाषा और साहित्यका ज्ञान तथा व्यापक जानकारी भी थी। इसीलिए पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी अपने युगमे हिन्दीके महान् नेता हो सके।

'सरस्वती' के सम्पादनसे अवकाश ग्रहण करनेके बाद द्विवेदीजी अपने गॉव दौलतपुरमे रहने लगे। कर्तव्य-पालन और जिम्मेदारीकी भावना उनके अन्दर प्रारम्भसे ही थी। जब वह १५) महीना तनख्वाह पाते थे, तब भी उसमेसे ५) महीना बचा कर अपनी मॉके पास भेजते थे। वह अपनी आवश्यकताको सीमित करके रखते थे और अपनी आमदनीमेसे कुछ न कुछ बचाकर परहितमे लगाते थे। उनकी यही कर्तव्यपरायणता अब और बढ़ गई। जब वह दौलतपुर गॉवमे रहने लगे, तो गॉवके प्रति उनकी कर्तव्य-भावना अधिक जाग्रत् हुई। अपने गॉवमे हिन्दी पाठशाला, डाक-घर और एक छोटे अस्पतालका प्रबन्ध किया। वह स्वयं भी रोगियोको दवाइयॉ देते थे। रोगियोको—चाहे वह किसी भी जातिका हो—उसके घर जाकर देखते, दवाई देते और यदि आवश्यक समझते तो उसके लिए पथ्यका भी प्रबन्ध करते। रोगियोंके देखने और उनकी सेवामे वह अपनी सुविधा-असुविधाका ज़रा भी ध्यान नही रखते थे। गर्मीके दिनोंमे जब लू चलती होती, तब भी सिर और कानको दुपट्टेसे अच्छी तरह ढॅककर रोगियोके घर जाते थे। अपने जीवनमे तो वह व्यवस्था और सफ़ाईका ध्यान रखते ही थे;

गॉवकी सफ़ाईका ध्यान भी उन्हे था। प्रारम्भमें स्वयं गॉवकी सफ़ाई करते और लोगोको सफाई करनेके लिए प्रेरित करते। आगे चलकर गॉवकी सफाईके ख्यालसे गॉवमे ही एक मेहतर भी बसा लिया।

गॉवमे खेती-गृहस्थी ही मुख्य धन्धा होता है। द्विवेदीजीके पास भी कुछ खेत थे। उन्होने अपने विद्याव्यसनी मनको खेतीके काममे लगा दिया। जैसा कि पहले लिखा है, वह नित्यप्रति अपने खेतो पर घूमने जाते, खेतकी मिट्टी और फसलका निरीक्षण करते। हर एक बातका हिसाब रखते। यही नही, वह गॉव भरकी खेतीकी रक्षाकी भी व्यवस्था करते। गॉवके ग़रीब किसानोको बिना सूद पर उधार रुपये देते। कभी-कभी किसानोको बीज देते। इस प्रकार अपनी खेती और गॉवकी भी खेतीका प्रबन्ध करते। एक बार जब नीलगाय और बन्दरोने गॉवकी खेतीको तबाह करना शुरू किया, तो द्विवेदीजीने अपने प्रियपात्र पं० श्रीराम शर्मासे कह कर नीलगाय और बन्दरोका शिकार करवा दिया। इस दिशामें उन्होने गॉववालोकी मनोभावना का भी ख्याल नही किया। जिस कामको करनेका वह निश्चय कर लेते, उसे पूरा करनेमे ज़रा भी संकोच नही करते थे। गॉवमे अशिक्षा और कुसंस्कार तो था ही। बहुतसे गॉववाले अपने पशुओको यो ही आवारागर्दकी भॉति छोड़ देते थे। ये पशु गॉवकी खेतीको नुकसान पहुँचाते थे। द्विवेदीजीने गॉववालोको समझाया। पर मुद्दतोका कुसंस्कार भला उपदेशोसे क्यो जाने लगा। लाचार होकर द्विवेदीजीको गॉवमे ही एक कानीहौज भी बनवा देना पड़ा। इससे कुछ लोगोके स्वार्थ पर आघात पड़ा। कुछ लोगोने द्विवेदीजीको बुरा-भला भी कहना शुरू किया। पर इसका उनके मन पर कुछ भी प्रभाव नही पडा। वह निर्लिप्त चित्तसे गॉवकी सेवा करते ही रहे।

ग्राम्य-जीवनका बाह्य ही नहीं, अन्तर भी विकृत हो चुका था। बाह्य सफाई और व्यवस्थाको तो द्विवेदीजी सुधार ही रहे थे। आन्तरिक खराबीकी ओर भी उनका ध्यान गया। आपसी फूट, ईर्ष्या-द्वेषसे गॉवोमे मुकदमे-

बाजीका वातावरण गरम था। द्विवेदीजीने गाँवोके अन्तस्को भी सुधारनेका काम शुरू कर दिया। गाँवोको मुकदमेबाजीसे बचानेकी गरजसे उन्होने 'विलेज-मुंसिफ' का काम शुरू कर दिया। वह आस-पासके गाँवोके तमाम मामलो-मुकदमोको निपटाया करते थे। वह गाँवसे, गाँवकी परिस्थितिसे और वहाँ वालोकी प्रकृतिसे तो परिचित थे ही; फलतः बड़े-बड़े मामलों तकको समझा-बुझा कर आपसमे ही फैसला करा देते थे। यथासम्भव झगड़ोको कचहरी तक जाने ही नही देते थे। उनका फ़ैसला व्यावहारिक और कानूनी दोनो दृष्टिसे बडे महत्त्वका होता था। उनको कानूनका ज्ञान भी इतना था कि आस-पासके लोग उनसे सलाह-मशविरा लिया करते थे। पर उनकी सलाह इस दृष्टिसे होती थी कि कोई अदालत तक न जाय और मजा तो यह था कि अदालतमे भी उन्हींका फ़ैसला मान्य हो जाता था। दौलतपुरमे रहते समय द्विवेदीजीकी दिनचर्या थी—प्रातःकाल उठ कर शौचादिसे निवृत्त हो खेतो पर टहलने जाना; लौटकर घर-द्वारकी सफाई करना, स्नान-भोजनके बाद चिट्ठियोका जवाब देना; अखबार, पत्र-पत्रिका आदिका अवलोकन करना; गाँवके मुकदमोको सुनना, उनपर विचार कर फ़ैसला देना अथवा समझौता करा देना, सन्ध्याको खेतोकी ओर जाना; वापस आकर गाँव वालोकी बातोको सुनना। इसके बाद व्यालू और कुछ किताबोका अवलोकन करते हुए सो जाना। इस प्रकार हिन्दीका यह महान् नेता अपने जीवनके अन्तिम प्रहरमे गाँवोमें जाकर लोक-सेवा करता रहा। जीवनके जितने भी क्षण द्विवेदीजीके पास थे सबका उन्होने सदुपयोग किया।

प० महावीरप्रसाद द्विवेदीको सदैव विपरीत परिस्थितियोका सामना करना पड़ा। वह प्रारम्भमे ही उच्चशिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। पर ग़रीबीके कारण उन्हे अपना अध्ययन रोक देना पड़ा। किन्तु ज्ञानकी उत्कट प्यास उनमे अन्त तक बनी रही। उनकी ग़रीबीने उन्हे नौकरी करनेके लिए बाध्य किया। ईमानदारीसे नौकरी करके, घर-गृहस्थीकी पूरी

जिम्मेदारी निभाते हुए भी, अपने पासका सारा समय उन्होंने अनेक भाषाओं और उनके विविध साहित्यके अध्ययनमे लगाया। अक्सर रात-रात जाग-जाग कर उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया। विविध स्थानोपर जाकर विद्वानोसे उन्होने ज्ञानार्जन किया। अपने गम्भीर और असाधारण अध्ययनके बल पर ही वह एक मामूली क्लर्ककी स्थितिसे उठकर, अपनी परिस्थितियोके सम्पूर्ण बन्धनोको झटककर, हिन्दी साहित्यके एक युग-निर्माता हुए। संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, मराठी, गुजराती, बंगला और अंग्रेजी भाषा तथा साहित्य पर उन्होने अधिकार प्राप्त किया। ज्ञानकी इस कठिन साधनामे उन्होने अपने शरीरको होम दिया। पहले उन्हें अनीद्र रोग हो गया। पर फिर भी उनकी ज्ञान-साधनामे कमी नही आई। 'सरस्वती' के सम्पादनमे वह लगे ही रहे। फिर उनका पेट खराब हुआ। अपने संयम और सात्त्विक चर्या-द्वारा उन्होंने कुछ समय तक अपनेको सम्हाला। पर वृद्धावस्थामे तो शरीरकी प्रत्येक कमज़ोरी उभर आती है। एकाएक द्विवेदीजीको जलोदर रोग हो गया। पहले तो ग्राममें किसीने उसे पहचाना ही नहीं। फिर जब डाक्टर शंकरदत्त शर्माने रोग को पहचाना तो रोग बहुत बढ़ चुका था। डाक्टर शर्माने सोचा कि अपने घर पर द्विवेदीजीको रखकर इलाज करनेसे शायद रोग दूर हो जाय। वह द्विवेदीजीको अपने घर पर बरेली ले गये। पर यह रोग तो मात्र रोग नही था, यह तो द्विवेदीजीका काल था। डाक्टरके इलाजका कोई भी परिणाम नही निकला और २१ दिसम्बर १६३६ को प्रातः ४ बजे महान् कर्मठ आचार्य प० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीने अपने नश्वर शरीरको छोड़ दिया।

—बैजनाथसिंह 'विनोद'

आचार्यदेव

श्री मैथिलीशरण गुप्तजी स्व० आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी के बड़े प्रिय शिष्य हैं। उन्होंने आचार्य द्विवेदीजीके इस संस्मरण में यह प्रकट किया है कि किस प्रकार द्विवेदीजीने उन्हें बनाया था। इसीलिए इस संस्मरणका ऐतिहासिक महत्त्व है। इसी दृष्टिसे यहाँ इसे दिया जा रहा है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तका परिचय अन्यत्र उनको लिखे गये पत्रोंके प्रसंगमें दिया जा रहा है।

आचार्यदेव

मैं जब और कुछ न बन सका तब मैंने कवि बननेकी ठानी। हाय, कहीं सब पोले बॉस वेणु बन सकते !

एक जन, जो गधे पर बैठनेकी भी योग्यता न रखता था, बनानेवालोके बढावेमे आकर घोडे पर चढ बैठा। घोड़ा भी ऐसा, जो धरती पर पैर ही न रखना चाहता था। ऐसा आरोही तो उसके लिए अपमानजनक था। परन्तु क्या जाने, घोड़ेको भी विनोद सूझा और वह उसे एक वर्जित स्थानमे ले दौड़ा। वहॉका प्रहरी सतर्क होकर चिल्लाया—सावधान! परन्तु आरोही सावधान होकर भी क्या करे? तब प्रहरीने शस्त्र सॅभालकर कहा—अच्छा, चला आ—ऐसे ही! अब आरोही चिल्लाया—दुहाई आपकी, मै स्वयं नही आ रहा हूँ, यह दुर्मुख मुझे लिये आ रहा है! प्रहरी भी समझ गया और जिसे अनधिकार प्रवेश करनेका दण्ड देने जा रहा था उस भाग्यहीन अथवा भाग्यवानकी उसे उलटी सॅभाल करनी पड़ी।

कवि तो बनाये नही जाते, परन्तु कोप-भाजन होने योग्य होकर भी मैं पूज्य द्विवेदीजी महाराजका अनुग्रह-भाजन हो गया। इससे बढकर किसीका क्या सौभाग्य होगा।

उन्चास-पचास वर्ष पहलेकी बात है। मै कुछ पद्य बनाने लगा था। पण्डितजी उन दिनो झॉसीमे ही थे। उनका नाम मै सुन चुका था और उनकी 'सरस्वती' के दर्शन भी मैंने पा लिये थे। मेरे मनमे प्रश्न उठा—क्या 'सरस्वती' मे अन्य कवियोकी भॉति मेरा नाम नही छप सकता? इसका

उत्तर अपने ही दीर्घ निःश्वासके रूपमे मुझे मिल जाना चाहिए था, परन्तु लड़कपन अल्हड़ होता है और दुस्साहसी भी।

पिताजीके साकेतवासके पीछे, उनके नाते कृपा बनाये रखनेके प्रार्थी होकर, अपने काकाजीके साथ, हमलोग पहली बार कलक्टर साहबको जुहारने झाँसी गये थे। मेरे जानेका प्रधान उत्साह और ही था। भीतर-भीतर 'सरस्वती' मे अपना नाम छपानेका डौल लगानेकी लालसासे और बाहर-बाहर ऐसे महानुभावके दर्शन करनेकी इच्छासे, अपने अग्रजको साथ लेकर मैं पण्डितजीके स्थानपर पहुँचा। घर छोटा ही था। द्वारपर बाँसकी सीकोंकी बनी लिपटी हुई चिक बँधी थी, जिसकी गोटका हरा कपड़ा कुछ फीका पड़ चला था। एक ओर उनके नामकी पट्टी लगी थी। दूसरी ओर भी एक पटली थी। उसमे लिखा था—सबेरे भेट न होगी। हमलोग इस बातको सुन चुके थे। अतएव, तीसरे पहर गये थे। तब भी वे आफिससे नहीं लौटे थे। छोटेसे उसारेमे एक बेच पड़ी थी। उसीपर हम बैठ गये। भीतर कमरेमे खुली अलमारियोंकी पुस्तकोंकी दूसरी दीवार-सी बनी थी। बाईं ओरके पक्खेसे सटकर एक पलंग पडा था। उसपर लपेटे हुए बिछौनेने लोढ़का रूप धारण कर रक्खा था। दाईं ओरके पक्खेसे लगी दो तीन कुर्सियाँ पड़ी थी। बीचके रिक्त स्थानमे पलंगसे कुछ हटकर प्रवेशद्वारके खुले किवाड़को छूता हुआ एक छोटा-सा टेबुल या चेयर डैस्क था। उसके सामने भी एक कुर्सी पड़ी थी। टेबुल लिखने-पढनेकी सामग्रीसे भरा था, परन्तु सब सामग्री बडे ढंगसे सजाई गई थी। प्रवेश-द्वारके सामने ही भीतर जानेका द्वार था, उसमेसे एक मझपौरिया दिखाई देती थी। सारा स्थान बहुत ही परिष्कृत, स्वच्छ और शान्त-कान्त दिखाई पड़ता था। तो भी पण्डितजीके आनेका समय निकट जानकर घरकी परिचारिका हाथमे गमछा लिये उसे कमरेमे इधर-उधर फटकार रही थी। ऐसा जान पड़ता था मानो यह एक विधि है, जिसे आवश्यक हो या न हो, पूरा करना ही चाहिये। ऐसी

समझदार और कुशल सेविकाएँ विरली ही होती है। बड़ी अपनाहटके साथ उसने हम लोगोका स्वागत-सत्कार किया। उसकी मृत्यु होनेपर पण्डितजीने मुझे यथार्थ ही लिखा था—ऐसा जन अब मिलनेका नहीं।

तनिक देर पीछे उसने एक बार इधर-उधर देखा फिर उसारेसे नीचे उतरकर कुछ दूर तक पण्डितजीके आनेका मार्ग भी बुहार दिया। इतना करके मानो वह उस समयके कार्यसे निश्चिन्त हो गई। उसी समय पण्डितजी आते हुए दिखाई दिये। व्यक्तियोकी विशिष्टता मानो उनके आगे चलती है। हम लोगोने देखते ही समझ लिया, यही पण्डितजी हैं, यद्यपि बिना पगडीके मै पण्डितोका अनुमान ही न कर सकता था और उनके सिर पर टोपी थी। मैने सन्ध्या समय दफ्तरसे लौटते हुए बहुतसे बाबुओको झांसीमे ही देखा था। परन्तु पण्डितजी जैसा कोई बाबू न देखा था। जान पड़ा, 'बाबू' के वेशमे वे कोई 'साहब' है। विलायती साहब बहादुरसे तो हमलोग मिल ही चुके थे। उसका जो तेज था वह बहुत कुछ उसके अधिकारके कारण था, पण्डितजीका प्रताप सर्वथा व्यक्तिगत। हम लोग ससम्भ्रम उठ खडे हुए। जाड़ेके दिन थे। वे हलके कत्थई रङ्गका नीचा ऊनी कोट या अच-कन पहने थे और ऊनी ही सफ़ेद फलालैनका पतलून जैसा पाजामा। बाये हाथमे कुछ कागद-पत्र लिये थे, दायेमे छड़ी। दफ्तरसे लौटनेवालोके विपरीत अनातुर धीर गतिसे पैदल आ रहे थे। ऐसे, मानो अभी सवारीसे उतरे हो! आफ़िस दूर न था और पैदल आने-जानेसे वे छोटे नही होते थे, क्योंकि स्वभावतः बड़े थे। झूठे सम्मानके पीछे वे टहलनेके सुयोगसे वंचित क्यो होते जब सच्चा सम्मान उन्हे सुलभ था। ऊँचे ललाटके नीचे घनी और मोटी भौहे उसके अनुरूप ही थी। उनकी छायामे विशेष चम-कती हुई आँखे बड़ी न होने पर भी तेजसे भरी दिखाई देती थी। पण्डितजी वेश-भूषासे सुसंस्कृत आकृतिसे गौरवशाली और प्रकृतिसे गम्भीर तथा चिन्तनशील जान पड़ते थे। हम लोगोंका प्रणाम स्वीकार कर और हमपर

एक दृष्टि डालकर वे कमरेके भीतर जाकर ही रुके। वहा इधर-उधर देख कर और तुरन्त ही 'आइये' कहकर उन्होने हमें भीतर बुलाया। जबतक हम कमरेमे पहुँचे तब तक छड़ी और कागद-पत्र यथास्थान रखकर उन्होंने अपनी टाइमपीस घड़ी उठा ली थी और उसमे ताली देना आरम्भ कर दिया था। वे बडे ही नियमबद्ध थे और सम्भवतः आफिससे लौटकर घड़ी कूकनेका समय उन्होने बॉध रक्खा था।

"बैठिए" सुनकर भी हमलोग खड़े ही रहे। हमारा भाव समझकर घड़ी रखते हुए वे पलंग पर बैठ गये। सामनेकी कुर्सियोकी ओर हाथ बढ़ाते हुए फिर स्निग्ध स्वरमे बोले—बैठिए। हमलोगोके नाम और परिचयसे वे कुछ आकर्षितसे हुए और हाल ही मे हमें पितृहीन हुआ सुनकर सहानुभूति प्रकट करने लगे। पिताजीकी अनन्य भक्तिकी चर्चाके प्रसंगमे उन्होने यह भी पूछा कि आपलोग किस सम्प्रदायके अनुयायी है। 'विशिष्टाद्वैत' सुनकर बोले—हॉ। बहुत दिन पीछे प्रसिद्ध विद्वान् माननीय 'बार्हस्पत्य'जीसे जब मैं पहली बार मिला तब उन्होने भी मुझसे यही पूछा था और उत्तर सुनकर कहा था, हम विशिष्टाद्वैत मतके नहीं हैं पर अच्छा उसीको मानते हैं। यह कहकर वे मुसकराने लगे थे। मैं भी उन्हीका अनुसरण करके हॅस गया था। पण्डितजीने 'हॉ' कहते हुए अपना सम्प्रदाय भी बताया था, सम्भवतः वल्लभ। इसी संबन्धमे उन्होने एक बार कहा था, हमारे पिता कुछ लिखनेके पहले लिखा करते थे—'श्रीलाड़लेश्वराय नमः'। परन्तु अब हम देखते हैं यह 'लाड़ले' और 'ईश्वर' का संधि-संयोग ही ठीक नही है।

पण्डितजीसे हम लोगोकी बात-चीत आरम्भ ही हुई थी, इतनेमे भीतरसे एक सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट बिल्ली आई और उछलकर पण्डितजीकी गोदमे आ बैठी। उनके कण्ठस्वरसे उन्हे आया जान कर ही वह भीतरसे दौड़ी आई थी। पशु-पक्षी मैंने भी पाले हैं, परन्तु पली बिल्ली मैंने पहले-पहल

वही देखी थी। मुझे बड़ा कौतूहल हुआ। मैने देखा, पण्डितजी धीरे-धीरे उस पर हाथ फेर रहे है और वह हर्ष और गर्वसे एक असाधारण शब्द कर रही है। जो लोग पक्के गानेसे चिढ़कर उसे बिल्लियोका लड़ाना कहते हैं, वे कही उस बिल्लीका शब्द सुनते तो जानते बिल्लिया भी स्नेह मे कैसा प्यारा बोलती हैं। पण्डितजीने पशु-पक्षियोकी चेष्टाओं पर 'सरस्वती'मे एक लेख लिखा था। मुझे ठीक स्मरण नही, इस बिल्लीको देखकर मुझे उसका ध्यान आ गया था अथवा उसे देखकर इसका।

परन्तु जिस उद्देश्यको लेकर मै पण्डितजीके यहाँ गया था उसके विषयमे कुछ कहनेका मुझे साहस ही न हुआ। मेरा सारा उत्साह न जाने कहाँ चला गया। मेरे अग्रजने प्रसंग चलाकर एक बार कहा भी कि ये भी कुछ कविता बनाते है। 'बड़ी अच्छी बात है' कहकर पण्डितजीने मेरी ओर देखा। मै तो कुछ नही, कुछ नही, कह कर संकोचसे सिकुड़-सा गया। मुझे विपत्तिमे पड़ा देखकर फिर उन्होने कुछ नही कहा। कुछ कहनेके लिए मैने कहा—हम लोग तो सबेरे ही आने वाले थे, परन्तु सुना कि सन्ध्याको ही आपसे भेट होती है, इसलिए इस समय सेवामे उपस्थित हुए हैं। वे हँसकर बोले—हाँ, सबेरे हम 'सरस्वती' का काम करते है और कुछ लेख आदि लिखते हैं। फिर अवकाश नही पाते। परन्तु जब आप इतनी दूरसे आये हैं तब क्या हम उस समय भी आपसे न मिलते। कभी झाँसी आया कीजिये और सुविधा हो तो मिला कीजिये।

उनका अधिक समय लेना अपराध करना था। रोकने पर भी हम लोगोको विदा करने वे बाहर आये। आगतका स्वागत सभी करते है, परन्तु अपने छोटोके प्रति भी उनका सदा ऐसा ती उदार व्यवहार रहा।

अपने पद्योंके विषयमें प्रत्यक्ष कुछ कहनेकी अपेक्षा पत्र-व्यवहार करने मे ही मुझे सुविधा दिखाई पड़ी। वस्तुतः उनके प्रभावसे मैं अभिभूत हो

गया। पीछे न जाने कितनी बार उनकी सेवामे उपस्थित होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, वे भी कृपाकर एक बार यहाँ पधारे, परन्तु वैसा आतंक कभी नहीं जान पड़ा। इसके विरुद्ध जैसे-जैसे निकटसे उनका परिचय मिलता गया, वैसे-वैसे उनकी सदयता और सहृदयताका ही अधिकाधिक अनुभव होता रहा। अपने कर्त्तव्यमे ही वे कठोर प्रतीत होते थे, आत्म-सम्मानका प्रश्न आ जाने पर उनमे उग्रता भी आ जाती थी, अन्यथा उनका-सा कोमल हृदय दुर्लभ ही है। एक बार वाद-विवादमे दूसरे पक्षने लिखा—यह विवाद व्यर्थ है। आप तो ब्राह्मण है, आपको क्षमा नहीं छोड़नी चाहिये। पण्डितजीने उत्तरमे लिखा—हमने जो आरोप लगाये है उन्हें व्यर्थ कहनेसे काम न चलेगा। या तो कहिये वे झूठे हैं, हम आपसे क्षमा याचना करेंगे या उनके लिए खेद प्रकट कीजिये। उस समय हम आपको हृदयसे क्षमा न कर दें तो ब्राह्मण नहीं।

उनकी वैसी वेश-भूषा भी फिर मैंने नहीं देखी। एक बार पैण्टके साथ उन्हे बण्डा कोट पहने देखकर तो ऐसा लगा, जैसे यह उनके अनुरूप न हो। इधर प्रायः कुरता और धोती ही वे पहना करते थे और यह वेश उन्हें बहुत सोहाता भी था। अभिनन्दनके अवसर पर भी वे इसी परिच्छदमे थे। अस्तु।

उस दिन लौटकर मुझे कुछ आत्मग्लानि-सी हुई कि मैं क्यों इतना हतप्रभ हो गया कि अपनी बात भी उनसे न कह सका। और, झूठ क्यों कहूँ, उनके प्रति कुछ ईर्ष्या भी मनमे उत्पन्न हो गई। परन्तु 'सरस्वती' मे नाम छपनेका लोभ प्रबल था। आशा भी बलवती थी। कुछ दिन पीछे मैंने एक रचना भेज ही दी और उत्सुकतासे मै उनके पत्रकी प्रतीक्षा करने लगा। मुझे स्मरण नहीं, इतने लंबे समयमे भी, पण्डितजीने मेरे किसी पत्रका उत्तर देनेमे विलंब किया हो। इतनी तत्परता मैंने और किसीके पत्र-व्यव-

हारमे नही पाई। मैने भी बहुत दिन उनका अनुकरण करनेकी चेष्टा की, परन्तु अन्तमे मै हार गया और अब तो शरीर और मन प्रकृतिस्थ न रहनेसे एक आध पत्र लिखना भी भारी हो उठा है। परन्तु पण्डितजी वृद्ध और क्षीण होने पर भी अन्त तक अपना नियम निभाते रहे, कितनी दृढ़ता थी उनमे।

यथासमय उनका उत्तर आ गया—"आपकी कविता पुरानी भाषामे लिखी गई है। 'सरस्वती' मे हम बोल-चालकी भाषामे ही लिखी गई कविताएँ छापना पसन्द करते है।" राय कृष्णदास जैसे बन्धुके संसर्गसे भी जो एक चिट भी यत्नसे छॉट कर रखते है, मैं पत्रोके संग्रहमे उदासीन ही हूँ। इसके लिए समय-समय पर मुझे अनुताप भी हुआ है। इसी प्रकार डायरी न रखनेसे प्रसंगवश अथवा अचानक उठे हुए कितने विचार किंवा भाव भी मुझे खो देने पड़े हैं। परन्तु पण्डितजीके पत्र न जाने कैसे मै आरंभसे ही रखता रहा। कुछ प्रारम्भिक पत्रोकी एक गिड्डी संभवतः कही ऐसी सुरक्षित रक्खी है कि इस समय मुझे भी नही मिल रही है! ऊपर मैने जिस पत्रका उद्धरण दिया है, संभव है, उसमे शब्दोका हेर-फेर हो, किन्तु बात वही है।

'बोल-चालकी भाषा' अर्थात् 'खड़ी बोली' और 'पुरानी भाषा' अर्थात् 'ब्रजभाषा।' पाठक ही समझ ले, मेरे मनमे अपनी रचनाकी अस्वीकृति खली या ब्रजभाषाकी उपेक्षा। मन कुछ विद्रोही था ही, आशा भी पूरी न हुई। अब क्या था, एक कड़ा-सा पत्र लिख दिया। एक बात सुनी थी कि शेख़ सादी साहबको फारसी भाषाकी मधुरताका बड़ा अभिमान था। एक बार वे यहाँ आये। ब्रजभाषाकी प्रशसा सुनकर उन्होने नाक सिकोड़ी और भौंह चढ़ाई। घूमते-घूमते वे ब्रजमे पहुँचे। वहाँ मार्गमे पहले-पहल उन्होने एक छोटी-सी लड़कीकी बात सुनी। वह अपनी मातासे

कह रही थी—'मायरी माय, मग चल्यौ न जाय, साँकरी गली, पाय काँकरी गड़तु है।' इस बातका संकेत भी मैने अपने पत्रमे कर दिया और समझ लिया कि बदला ले लिया। परन्तु उस पत्रका कोई उत्तर न मिला। भगवान् ही जाने, इसे मै अपनी जीत समझा या अपने प्रहारको सर्वथा निष्फल समझ कर और भी हताश हो गया। प्रतिघात सह लिया जा सकता है किन्तु आघातका व्यर्थ होना प्रतिघातसे भी कठोर होता है। तथापि मेरी क्षुद्रता का वे क्या उत्तर देते? मैने धृष्टतापूर्वक एक पत्र और भी इस सम्बन्धमे भेजा। वह वैसा ही लौट आया अथवा लौटा दिया गया।

इस बीच कलकत्तेके 'वैश्योपकारक' मासिक पत्रमे मेरे पद्य छपने लगे थे। इससे मुझे कुछ अभिमान भी हो गया था। परन्तु हिन्दीकी एक मात्र प्रतिष्ठित पत्रिका 'सरस्वती' थी। मन मेरा उधर ही लगा था। झख मार कर खड़ी बोलीके नामसे 'हेमन्त' शीर्षक कुछ पद्य लिखे। उन्ही दिनो स्वर्गीय राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' की 'शरद' नामकी एक कविता 'सरस्वती' मे छपी थी। वह पुरानी भाषामे ही थी। 'शरद्' छपी तो 'हेमन्त' भी छप सकता है। उसे भेजते हुए मैने निर्लज्जतापूर्वक इतना और लिख दिया कि प्रसन्नताकी बात है, अब 'पुरानी भाषा' के सम्बन्धमे आपका वह विचार बदला है। जिस दिन उत्तर मिलना चाहिए था, उत्सुकतापूर्वक मै स्वयं डाकघर पहुँचा। उनका उत्तर पोस्टकार्डके रूपमे उपस्थित था। धड़कते हृदयसे पढ़ा। लिखा था—'आपकी कविता मिली। राय साहबकी कविता अच्छी होनेसे हमने छापी है।' अब समझमे आया कि नई-पुरानी भाषा का तो एक बहाना था, मेरी कविता अच्छी न होनेसे न छप सकी थी। यह उस समय भी न समझमे आया कि मेरी रचना अच्छी न थी, फिर भी उन्होने उसे बुरा न बताकर भाषाकी बात कह कर कितनी शिष्टतासे मुझे उत्तर दिया, यद्यपि यह ठीक था कि बोल-चालकी भाषाकी कविताके ही वे पक्षपाती थे और उसीका प्रचार भी कर रहे थे। जो हो, मेरा जी बैठ

गया। 'सरस्वती' आई पर 'हेमन्त' न आया। वह क्यो नही आया, आवेगा भी या नहीं, यह पूछनेका भी धीरज न रहा। कन्नौजसे 'मोहिनी' नामकी एक समाचार-पत्रिका निकलती थी। उसीमे छपनेके लिए मैने 'हेमन्त' भेज दिया और अगले सप्ताह ही वह छपकर आ गया। एक द्विवेदीजी न सही तो दूसरे गुणग्राहक तो विद्यमान हैं, यो मैने मन समझानेकी चेष्टा की। मनने मान भी लिया, कारण, अपमान भी उसीने माना था। तथापि उसके एक कोनेसे यह शब्द उठे बिना न रहा कि—हाय सरस्वती।

नये वर्षकी 'सरस्वती' आई, नई ही सज-धज से। अब उसका रूप-रङ्ग और भी सुन्दर हो गया। देखकर जी ललच गया। परन्तु जिस बात की आशा भी न थी उस 'हेमन्त' को भी वह ले आई। मेरा रोम-रोम पुलक उठा। जिस रूपमे मैने उसे भेजा था उससे दूसरी ही वस्तु वह दिखाई पड़ती थी, बाहरसे ही नही भीतरसे भी। पढ़ने पर मेरा आनन्द आश्चर्यमे बदल गया। इसमे तो इतना संशोधन और परिवर्धन हुआ था कि यह मेरी रचना ही नहीं कही जा सकती थी। कहाँ वह कंकाल और कहाँ यह मूर्ति! वह कितना विकृत और यह कितनी परिष्कृत। फिर भी शिल्पीके स्थानपर नाम तो मेरा ही छपा है। मुझे अपनी हीनता पर लज्जा आई और पण्डितजीकी उदारता देखकर श्रद्धासे मेरा मस्तक झुक गया। इतना परिश्रम उन्होने किया और उसका फल मुझे दे डाला। यह तो मुझे पीछे ज्ञात हुआ कि मेरे ऐसे न जाने कितने लोग उनसे इस प्रकार उपकृत हुए हैं। नामकी अपेक्षा न रखकर काम करना साधारण बात नहीं, परन्तु काम आप करके नाम दूसरेका करना और भी असाधारण है। पण्डितजी अपने सपादकीय जीवन भर यही करते रहे। उनके तप और त्यागका मूल्य आँकना सहज नही। हिन्दीके प्रभविष्णु कवि स्वर्गीय नाथूराम शंकर शर्माने एक पत्रमें मुझे लिखा था—"सम्पादकजी बहुधा कविताओमे संशोधन भी कर देते हैं। 'केरलकी तारा' नामकी कवितामे मैने लिखा था—

"पीठ पर टपका पड़ा तो आँख मेरी खुल गई।
चार बूँदोंसे मिले मनकी लँगोटी धुल गई॥"

इसमे नीचेकी पंक्ति उन्होने बदल कर छापी—

"विशद बूँदोंसे मिले मन मौज मिसरी घुल गई।"

लाभसे मेरा लोभ और भी बढ़ गया। कुछ दिन पीछे 'क्रोधाष्टक' नामक एक तुकबन्दी मैंने और भेज दी। उपद्रव सहनेकी भी एक सीमा होती है। इस बार क्षुब्ध होकर उन्होने जो पत्र लिखा वह, इधर स्मृति विकृत होने पर भी, मुझे भली भाँति स्मरण है—

"हम लोग सिद्ध कवि नहीं। बहुत परिश्रम और विचारपूर्वक लिखने से ही हमारे पद्य पढ़ने योग्य बन पाते है। आप दो बातोमेसे एक भी नही करना चाहते। कुछ भी लिख कर उसे छपा देना ही आपका उद्देश्य जान पड़ता है। आपने 'क्रोधाष्टक' थोडे ही समयमे लिखा होगा परन्तु उसे ठीक करनेमे हमारे चार घंटे लग गये। पहला ही पद्य लीजिए—

"होवे तुरन्त उनकी बलहीन काया।
जाने न वे तनिक भी अपना-पराया॥
होवें विवेक वर बुद्धि विहीन पापी।
रे क्रोध, जो जन करें तुझको कदापि॥"

क्या आप क्रोधको आशीर्वाद दे रहे है जो आपने ऐसी क्रियाओंका प्रयोग किया? इसे हम अवश्य 'सरस्वती' मे छापेंगे, परन्तु आगेसे आप 'सरस्वती' के लिए लिखना चाहे तो इधर-उधर अपनी कविताएँ छपानेका विचार छोड़ दीजिये। जिस कविताको हम चाहे उसे छापेंगे। जिसे न चाहे उसे न कही दूसरी जगह छपाइए, न किसीको दिखाइए। तालेमे बन्द करके रखिये।"

रोष ही मेरे लिए परितोष बन गया। अयोग्य देखकर भी पण्डितजीने मुझे त्यागा नही, सदाके लिए अपना लिया। इसी पद्यमे मुझे बोल-चालकी भाषामे पद्य रचनेका 'गुर' मिल गया। बातें इतनी ही नही है। परन्तु आज मै और कुछ न लिखकर अपने प्रभुसे यही प्रार्थना करता हूँ कि परलोकमे भी उनका-सा पथप्रदर्शक मुझे प्राप्त हो।

—मैथिलीशरण
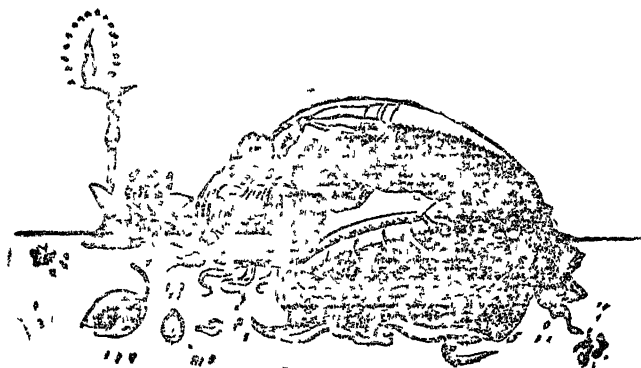
द्विवेदीजी अपनी नज़रमें

[१]

निर्मलजीको स्लिपोंपर लिखी, ६ स्लिपें

निर्मलजी,

आपका पोस्टकार्ड मिला। प्रूफ देखकर आपने मुझपर बड़ी कृपा की।

उचित समझिए तो साथके विज्ञापनको 'भारत'मे किसी अच्छी जगह छाप दीजिए। मात्राएँ बहुत न टूटने पावे। अन्तमे आप मेरी तरफ़से अपने नोटमें, यह लिख दीजिए कि जिन पत्रोने इस विषयमे कुछ लिखा हो वे कृपा करके मेरी इस विज्ञापनाको भी अपने पत्रमे छाप दे।

१३।५।३२] **म० प्र० द्विवेदी**

मेरी जन्म-तिथि वैशाख शुक्ल ४ संवत् १६२१ है। इस हिसाबसे ६ मई १६३२ को मैं ६८ वर्षका हो गया। अब मैंने उनहत्तरवे वर्षमे प्रवेश किया है। इस उपलक्ष्यमें मुझे मेरे अनेक मित्रो और हितैषियोने बधाइयाँ दी हैं और खुशियाँ मनाई हैं। कितने ही पत्रो और तारो द्वारा मेरी शुभकामना की गई है। कई समाचार-पत्रो और सामयिक पुस्तकोमे भी मेरा अभिनन्दन किया गया है। मुझपर कृपा करनेवाले सज्जनोने कहीं-कहीं समुदाय रूपसे भी मेरी हितचिन्तना की है। इन सभी सज्जनो लेखको, पत्र-प्रेषको और अभिनन्दन करनेवालोको मेरे शतशः प्रणाम। मै उनके चरणो पर भक्तिभाव पूर्वक, अपना मस्तक झुकाता हूँ, मैं उन्हे अपना मातृ-पितृ-स्थानीय समझता हूँ, क्योकि स्वाभाविकतया माता-पिता ही अपने बच्चेकी बर्षगाँठ मनाते हैं।

पिता तो मेरे विदेशवासी थे। बारह-तेरह वर्षकी उम्र तक मेरी माता ही ने मेरी वर्षगांठ मनाई थी। हर साल उस अवसर पर उसे जिस सुख और सन्तोष, तथा मुझे जिस कौतूहल और आनन्दकी प्राप्ति होती थी उसका स्मरण आज नया हो गया। इस स्मरणने मेरा कण्ठावरोध कर दिया और मेरे नेत्रोंसे प्रेमाश्रु बरसा दिये। वर्षगांठके दिन मैं अपनी माँसे खाने, पीने और पहनने आदिकी अपनी अभिलषित चीजें मांगता था; और वह जहाँतक उसका वश चलता था, उनकी पूर्ति करती थी। इस उम्रमें—अपनी वर्तमान स्थितिमें—मुझे अब उन चीजोंकी चाह नहीं। अब तो मुझे एक और ही चीज़की चाह है। अतएव जिन उदारचरित महानुभावोंने मेरी वर्षगांठ मनाई या मुझे बधाई दी है, उनसे मैं वही चीज़ माँगना चाहता हूँ। वे सभी सज्जन हैं। सज्जन न होते तो मुझपर इतनी कृपा क्यों करते। उनसे मेरी मांग है—

"सन्त सरल चित जगतहित जानि सुभाउ सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा रामचरन - रति देहु॥"

इस समय मुझे इसीकी सबसे अधिक जरूरत है। आशा है, यदि वे मेरी अभिलषित वस्तुकी प्राप्ति करा देनेके लिए परमात्मासे प्रार्थना करेंगे, तो उससे मेरा अवश्य ही कल्याण होगा।

"सर्वं नृजन्म मम निष्फलमेव याति"

किसी-किसीने ६ मई १९३२ को मेरी सरसठवीं ही वर्षगांठ मनाई है। जान पड़ता है, इन सज्जनोंके हृदयमें मेरे विषयके वात्सल्य भावकी मात्रा कुछ अधिक है। इसीसे उन्होंने मेरी उम्र एक वर्ष कम बता दी है। कौन माता-पिता या गुरुजन ऐसा होगा जो अपने प्रेम-भाजनकी उम्र कम बताकर उसके जीवनावधिको और भी आगे बढ़ा देनेकी चेष्टा न करेगा? अतएव इन महानुभावोंका मैं और भी अधिक कृतज्ञ हूँ।

हिन्दी-भाषा और साहित्यके सम्बन्धमे, पूर्वोक्त अवसरपर बहुत कुछ कहा गया है। मैने यह किया, मैने वह किया आदि। मेरा निवेदन है कि मै इस प्रशंसाका पात्र नही। २२ वर्षोतक रेलवेकी मुलाज़िमत करके जब मैने रजत-शृंखलाऍ तोड़ी तब मैने अपनेको और किसी कामके योग्य ही न पाया। लाचार होकर, हिन्दी लिखकर मैने अपनी और अपने आश्रितोकी उदर-पूर्ति की। मेरे इस कामसे यदि हिन्दी साहित्यको कुछ लाभ पहुँचा हो तो आप उसे मेरे कामका आनुषङ्गिक फल समझ लीजिए। बस, इससे अधिक और कुछ नही। मेरे इस कामको मेरे मित्रो और हितैषियोने जो विशेष महत्त्व दिया है वह एकमात्र उनकी उदारता और उनके हृदयकी महत्ताका सूचक है।

सज्जन स्वभावसे ही उदार और कृपालु होते हैं। वे तो अनधिकारियोको भी अपनी दयाका पात्र समझते है :—

"सन्तस्त्वभाजनजनेष्वपि निर्निमित्तं
चित्तं वहन्ति करुणामृतसारसिक्तम् ॥"

दौलतपुर, रायबरेली
१३।५।३२

महावीरप्रसाद द्विवेदी

पं० श्रीधर पाठक

पं० श्रीधर पाठकका जन्म, आगरा ज़िलाके फ़िरोजाबाद परगने के जोधरी ग्राममें माघ कृष्ण चतुर्दशी सं० १९१६ को हुआ। प्रारम्भमे इन्हें संस्कृत पढ़ाई गई। दस वर्षकी अवस्थामें यह संस्कृत बोलने लग गये थे। सन् १८७५ ई० मे प्रवेशिका परीक्षा पास की। सन् १८८० ई० मे एंट्रेस पास किया।

सन् १८८१ ई० से नौकरी शुरू की। पहले कलकत्तेके सेंसस कमिश्नरके दफ्तरमे नौकरी की। फिर शिमला गये। शिमलासे लौट कर प्रयागमें आ गये। यहाँ ज़्यादा दिनो तक बने रहे।

पं० श्रीधर पाठकमें काव्य-प्रतिभा आरम्भसे ही थी। संस्कृत, फ़ारसी और अंग्रेज़ी तीनो भाषाओं पर आपको अधिकार प्राप्त था। ब्रजभाषा और हिन्दी भाषा दोनोंमे आप समान गतिसे कविता कर लेते थे। गोल्डस्मिथके तीन ग्रन्थोंका पद्यानुवाद आपने "एकान्तवासी योगी" "ऊजड़ ग्राम" और 'श्रान्त पथिक' नाम से किया। "काश्मीर-सुषमा" नामक प्रकृति पर इनका बहुत सुन्दर काव्य है। हिन्दीमें रोमांचक काव्य शैलीके आप जन्मदाता माने जाते है।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी से आपका बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। द्विवेदीजीसे पाठकजीका बहुत पत्र-व्यवहार भी हुआ। कुछ पत्र प्रयाग नगरपालिका-संग्रहालयमें सुरक्षित है। उन्हींमे से महत्त्वपूर्ण पत्रोको यहाँ दिया जाता है।

[पं० ब्रजमोहन व्यासजी द्वारा, प्रयाग नगरपालिका संग्रहालयके सौजन्यसे]

[२]

झाँसी

१२ फरवरी १८९६

प्रिय महोदय,

बहुत दिनसे आपकी कौशल्यशालिनी लेखनीने कोई नूतन ग्रन्थ हिन्दी साहित्यके कोशमें नहीं स्थापन किया। आपका "ऊजड़ ग्राम" और "योगी" तो इतना ललित और स्वाभाविक हैं कि अनेक बार पढ़ने पर भी फिर-फिर पढ़नेको जी चाहा करता है। कहा भी है "क्षण क्षणं यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः"। कथानक अच्छा न होनेसे "ऊजड़ ग्राम" उतना हृदयंगम नही जान पड़ता जितना "एकान्तवासी योगी" जान पड़ता है। फिर चाहे हमारी क्षुद्र बुद्धि ही का यह भ्रम हो। "पथिक"की वक्रता ऐसी स्वाभाविक रीतिसे प्रतिबिम्बित की गई है कि मूलसे भी हमारी समझमे कही बढ़के है। हम तो इसे बहुधा पढ़ते हैं और अपने मित्रोंसे भी (जिनमे कई एक केनिंग कालिजके छात्र है) उसे पढ़ाकर सुनते है। इलियट पैराडाइज लास्ट, इत्यादि और भी मनोहर काव्य अंगरेजीमे हैं। आप चाहेंगे तो उन्हें भी किसी विचित्र मीटरमे अनुवाद करके अपूर्व रसका आस्वादन हम सबको सुलभ कर देंगे।

पाँच-सात वर्ष हुए "हिन्दोस्थान" मे हमने आपका किया हुआ ऋतुसंहारके शरदृतुका भाषान्तर पढ़ा था। क्या आपने एक ही सर्गका अनुवाद किया है अथवा समग्र पुस्तकका? हमने कारणवशात् लाला सीताराम बी० ए० कृत 'कुमारसभव' भाषाकी एक विस्तृत समालोचना लिखी है। वह क्रमशः काशी पत्रिकामे छप रही है। १२ पृष्ठ निकल चुके है। उन्हींके

किये हुए ऋतुसंहारके अनुवादकी भी समालोचना लिखनेका विचार है। उनके अनुवादको एक उत्तम अनुवादके साथ कंपेयर करनेकी इच्छा है। क्षमा कीजिए कई जगह अंगरेजी शब्द आ गये। समय पर क्या आप अपना अनुवाद भेज सकेंगे। मैं उसे वापस कर दूँगा और किसी प्रकार नष्ट न होने पावेगा।

"काशके फूल दुकूल, खिले अरविंदनमें मुख सुन्दरताई।"
[काशांशुका विकचपद्ममनोजवक्त्रा]
और
"सोहत या ऋतुमे सरिता गजगामिनि कामिनि-सी रस बोरी।"
[सदं प्रयान्ति समदा प्रमदा इवाद्याः]

यह अभी तक हमारे हृदयमे चिह्नित हो रहे है।

ईश्वर आपको स्वस्थ रखे और, और भी ऐसे काव्य लिखनेकी शक्ति देने यही उससे प्रार्थना है।

आपका
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[२]

समस्तीपुर
२४—८—०५

प्रिय मित्र,

२२ ता० का कृपापत्र मिला। आप 'सरस्वती'की लेख-प्रणाली निर्दोष देखना चाहते है यह हमारे लिए सौभाग्यकी बात है। मित्रोका यह धर्म ही है। इसलिए हम आपके कृतज्ञ हैं।

"पापान्निवारयति योजयते हिताय"

इस नियमका पालन यदि मित्रने न किया तो वह मित्र ही नही।

हम पुरानी प्रथाके सर्वतोभावसे प्रतिकूल नही। पर हम यह भी नहीं

कहते कि वह सर्वथा निर्दोष है। कोई-कोई पुरानी रचना ऐसी है जिसे देखकर घिन लगती है। बोलनेमे व्याकरणके नियमोका यदि अनुसरण न किया जाय तो विशेष आक्षेपकी बात नही। पर लिखनेमे ऐसा होना अच्छा नही। संस्कृत क्यो अबतक निर्दोष बनी है? उसकी रचना व्याकरण के अनुसार होती है, इसलिए। पालि और प्राकृत आदि भाषाएँ क्यो लोप हो गई? उनका व्याकरण निर्दोष नही। अतएव उनकी रचना भी निर्दोष नही। हिन्दीमे कोई अच्छा व्याकरण नही जिसे सब लोग माने। इससे जिसके जी मे जो आता है उसे ही वह लिखता है। यह भाषाका दुर्भाग्य है। इससे उसे कभी स्थिरता न प्राप्त होगी। अखबारोमे हम ऐसे अनेक वाक्य देखते है जिनका Parsing ही नही हो सकता।

उदाहरणार्थ :—

उनने आज्ञा दी कि जिन दिनो गंगाजल गँदला रहे उन दिनो उसमे यह दवा दो ग्रेनके हिसाबसे डालकर साफ़ किया जावे।

इसने "वह" शब्द अपेक्षित है। उसके बिना वाक्य सूना है। हम यह नही कहते कि सब कही कर्ता प्रकट रहे। कही-कही वह लुप्त भी रहता है। और उसके लुप्त रहनेसे वाक्यकी शोभा नही बिगड़ती। पर ऐसे स्थानमे नही। एक बात और भी है। सबकी रुचि और सबकी श्रुति-पटुता एक-सी नही होती। जिस वाक्यको आप मधुर और मनोहर समझेंगे, संभव है हमे वह वैसी न लगे। क्योंकि यह कुछ क़ायदेकी बात तो है नही, रुचि-वैचित्र्यकी बात है।

आपके पहले उदाहरणमे "अपने" के पहले "उसने" की हम ज़रूरत नही समझते पर "अपने" या "बनाने" के पहले "वह" की हम बड़ी जरूरत समझते है। व्याकरण भी "वह" माँगता है और हमारी रुचिके अनुसार रोचक भी। दूसरे उदाहरणमे "पर" के बाद तो नही परन्तु "नीचे" के बाद हम "उन्होने" की ज़रूरत समझते है। सकर्मक और

अकर्मक क्रियाओंके कर्तृपदमे भेद होता है। यदि सब लेखक मिलकर इस भेदको दूर कर दें और इसका एक नियम बना लें तो हम भी उसे मंजूर कर लेंगे। तीसरे उदाहरणमे कर्ता "वह" का न होना नहीं खटकता। "चल जाय तो अच्छा है" कहना ही अच्छा लगता है।

हम मुहाविरेके विरोधी नहीं। परन्तु 'जब', 'तब', 'जिस समय', 'उस समय' आदि सम्बन्धी मुहाविरा ऐसा नहीं है जिसे सब मानते हों। काल-वाचक सर्वनामके जोड़मे उसी तरहका सर्वनाम क्यो न हो?

'गया' की जगह 'हुआ' हो सकता है। इसमे हमे कोई एतराज नही। पर अर्थमें किंचित् भेद ज़रूर हो जाता है।

श्रीमदीय

महावीरप्रसाद

आज हम यहाँसे कानपुर वापस जाते है।

[४]

कानपुर

२८–४–०६

प्रिय मित्र,

कृपा-पत्र आया। आप हमसे अब कापी लिखाना चाहते हैं। सो नहीं होनेका। जैसा हम लिखेंगे वैसा ही आपको पढना पड़ेगा। दफ़्तरमे भी तो बदख़त कागज आपको पढने पडते होंगे।

आप क्या समझते है कि हम नीरोग रहते हैं। हमारी हालत तो शायद आपकीसे भी बुरी है। पर करे क्या—जिस स्थितिमे ईश्वर रक्खे उसीमे सन्तोषपूर्वक रहना चाहिए। और अपने कर्तव्य भी करने चाहिए। आप भी ऐसा ही कीजिए। हम तो यही कहेगे। आप चाहे मानें या न मानें।

अच्छा किया आप भी ऐनक लगाने लगे। रोग और ऐनक दोनोंमे हमारी और आपकी सदृशता हो गई।

'सरस्वती'के मैनेजर न आये तो न सही। यदि कभी हम आवेंगे तो हम खुद ही आपके काश्मीरके फोटो ले लेंगे। पर सिर्फ फोटोसे क्या होगा। उनपर कुछ लिखना भी तो चाहिए।

फोटोका बहुवचन फोटो ही हो तो अच्छा। और कुछ अच्छा न लगेगा।

आशा है आप आनन्दपूर्वक है।

भवदीय

महावीरप्रसाद

[५]

कानपुर

२९—४—०६

प्रिय मित्र,

कृपा-पत्र आया। उससे जान पड़ता है आप उर्दू मिश्रित हिन्दीके विरोधी हैं। हमे स्मरण है आपने एक बार हमे लिखा था कि आपको 'भारतमित्र'की भाषा पसन्द है। परन्तु उसमे तो उर्दू-फारसी शब्दोकी और भी अधिक भरमार रहती है। 'सरस्वती' मे कुछ लेख जानबूझकर उर्दू मिश्रित भाषामे लिखे जाते हैं। कारण यही है कि गवर्नमेण्ट इन प्रान्तो-की भाषा एक करना चाहती है। इसीसे हिन्दी और उर्दू रीडरोकी भाषा एक रक्खी गई है। 'सरस्वती' का प्रचार मदरसोमे बहुत है। अतएव कोई कोई लेख मदरसोके लड़को और मुदर्रिसो ही के लाभके लिए लिखे जाते हैं। ठेठ हिन्दी या संस्कृत मिश्रित हिन्दीका आदर करनेवाले बहुत कम हैं। यदि सरस्वतीके खर्चका भार उनपर ही छोड़ दिया जाय तो उसका निक-लना ही बन्द हो जाय। परन्तु इससे आप यह न समझिए कि हम आपको

लेख लिखनेसे मना करते हैं। यदि आपके लेखसे हिन्दीका कुछ भी हित होनेकी आशा हो तो आप अवश्य लिखिए। हम उसे सिर आँखोंपर लेंगे। पर यदि किसीकी प्रणाली-विशेष पर आक्षेप न हो तो अच्छा। लेख ऐसा हो कि उसकी बातें सब पर घटित हो सकें। आपकी लेखनीसे आपको भी 'सरस्वती'के विरोधमें लेख अच्छा न लगेगा, क्योंकि इस तरहकी प्रणाली औरोंकी भी तो है। आप समझदार हैं, जो कुछ आप उचित समझेंगे वही करेंगे। प्रयागमें कुछ काम है। १०–५ दिनमें वहाँ जानेका इरादा है। यदि जाना हुआ तो आपसे भी मिल लेंगे।

विनयावनत

महावीरप्रसाद

बाबू राधाकृष्णदास

बा० राधाकृष्णदासजीका जन्म श्रावण सुदी पूर्णिमा संवत् १९२२ को हुआ। इनके पिताका नाम कल्याणदास था। जब ये १० महीनेके थे, तभी इनके पिताकी मृत्यु हो गई। इसके बाद भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजीने इनको अपने घर बुला लिया। ये भारतेन्दुके फुफेरे भाई थे।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजीके यहाँ ही इनका लालन-पालन हुआ। घर पर ही इन्होंने विद्याभ्यास किया। संस्कृत, बंगला, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दीका अच्छा अभ्यास किया। मैट्रिक तक अंगरेज़ीका अध्ययन किया। ये प्रारम्भसे ही साहित्यिक रुचिके थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजीने इनको साहित्यकी प्रेरणा भी दी। इन्होंने २५ ग्रंथों की रचना की। "दुःखिनी बाला", "निस्सहाय हिन्दू", "महारानी-पद्मावती", "प्रताप नाटक" आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

नागरीप्रचारिणी सभा काशीके निर्माणमें बा० राधाकृष्णदास का मुख्य हाथ था। यह उसके प्रमुख नेताओंमें से एक थे। काशी के अग्रवाल समाजके चौधरी भी थे। ४२ वर्षकी अवस्थामें ता० २ अप्रैल सन् १९०७ को आपकी मृत्यु हो गई।

[६]

झांसी
१२ अगस्त ९८

महोदय,

कार्ड आपका आया—उस कागजको कृपापूर्वक वापस कर दीजिए—आपको स्मरण होगा, हमने लिखा था कि इन पद्योंको देखिए और ठीक हो तो सभाको सुनाइए—कर्त्ताधर्त्ता तो आप ही है यदि छपनेके योग्य न थी तो कहिए तो सही कि फिर आपने सभामे उसे ले जाने और सुनानेका परिश्रम क्यों किया—क्या गलहस्त दिलाना ही आपको इष्ट था—ऐसा तो कदापि न होगा—आप स्वयं लौटा देते तो हमे बहुत सन्तोष होता—आप अपनी सभाके नियमोसे बखूबी वाकिफ है, फिर क्यो आपने ऐसा किया, नही मालूम :—

"दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालैर्दूरीकृताः करिवरेण मदान्धबुद्ध्या ।
तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा भृङ्गः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति ॥"

अंग्रेजी काव्यका छन्द बद्ध अनुवाद भेजनेके लिए आपने आज्ञा दी तो शिरसाधार्य है परन्तु मुश्किल तो यह है कि अमुक कविताको आप और आपकी सभा "उत्तम, उपदेशमय और हृदयग्राहिणी" समझेगी और अमुकको न समझेगी, इतना ही तो हमको समझ नहीं पड़ता—खैर, हम आपकी आज्ञा-पालन करनेकी कोशिश करेंगे—परन्तु कविके अभिलषित विषय पर ही उसकी कविता अच्छी होती है यह हमारा मत है—सभाका अलबत्ते यह मत न होगा यह हम जानते ही है ।

श्रीमदीय
महावीर

[७]

झांसी

२४–१०–१९०३

श्रीमान् बाबूसाहब,

आपका 'रहिमन-विलास' हम आज देखते थे। उसका ८५वां पद्य विचारणीय है। दाँत, केश, नख, मनुज अपने ही स्थानपर शोभा पाते हैं यह समझमे नही आया—मनुजकी शोभा यदि अपने ही घरमे हुई तो कोई प्रशसाकी बात नही—नखसे कोई शोभा अगुलियोकी नही होगी—दाँत, केश दूसरी जगह जा नही सकते—काटनेसे उनकी गिनती कूड़ेमे होगी।

भवदीय

महावीर

[८]

झांसी

१२–१–१९०४

प्रिय महाशय,

कृपा-कार्ड आया। यदि हम आपकी कोई सहायता कर सकेंगे तो हम प्रसन्नतापूर्वक करगे, परन्तु इस समय हमारे पास एक ऐसा काम आ गया है कि शायद कई महीने तक हमको सिर उठानेकी फुरसत न मिलेगी—इसलिए कविताके लिए आप हमको क्षमा करे—एकआध लेख हमारे पास चतुर्भाषीके योग्य अधलिखे रक्खे है उनको हम, आवश्यकता पड़ने पर, समाप्त करके आपको भेजेंगे।

भवदीय

महावीर

पं० पद्मसिंह शर्मा

पं० पद्मसिंह शर्माका जन्म बिजनौर ज़िलेके नायक नगला ग्राम में सं० १९३३ की फाल्गुन सुदी १२ को हुआ। उनके पिताका नाम उमरावसिंह था। ये भूमिहार थे।

खेती और ज़मीन्दारी इनका पारिवारिक पेशा था। १२ वर्ष की उम्रसे विद्याध्ययन प्रारम्भ किया। प्रारम्भमें उर्दू और फारसी का अध्ययन किया। फिर पं० भीमसेन शर्माकी संस्कृत पाठशाला मे संस्कृतका अध्ययन किया। सं० १९६१ मे उत्तर प्रदेशकी आर्य प्रतिनिधि सभाके उपदेशक नियुक्त हुए। इसके बाद महात्मा मुंशी-राम [स्वामी श्रद्धानन्द] के साप्ताहिक पत्र "सत्यवादी" के सम्पा-दकीय विभागमे काम करने लगे। १९६५ मे अजमेरके "परोपकारी" और "अनाथ-रक्षक" का सम्पादन किया। इसके बाद आठ वर्ष तक ज्वालापुर महाविद्यालयमें काम किये। सं १९७६ में काशीके ज्ञानमण्डल कार्यालयमें पुस्तक-प्रकाशन विभागमे आ गये। यहीं उनकी बिहारी-सतसईके भूमिका-भागका प्रकाशन हुआ। इसी समय सतसई संहार पर "सरस्वती" में उनके लेख प्रकाशित हुए।

'बिहारी सतसई' पर आपको मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ। सं० १९८५ मे मुजफ्फरपुर हिन्दी साहित्य सम्मेलनके सभापति हुए। सं० १९८९ में हिन्दुस्तानी एकेडमीमे व्याख्यान दिया। स० १९८९ मे प्लेग रोगसे आपकी मृत्यु हो गई।

पं० पद्मसिंह शर्माका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीसे बहुत घना सम्बन्ध था। द्विवेदीजीसे आपका बहुत पत्र-व्यवहार हुआ था।

[९]

कानपुर

१८–१०–०५

प्रिय पण्डितजी

कृपा-पत्र आया। यह रसीद, पारसलमे १–तरुणोपदेश, २—सोहागरात, ३–शिक्षा-सरोज ६ भाग, ४–देशोपालम्भ (कविता) है, पहुँच लिखिए। १–का जीर्णोद्धार करके २–के साथ पढ़ चुकने पर वापिस कीजिएगा, ३–आपके लिए है।

कहीं-कही एकआध किताबमे हमने पेन्सिलसे संशोधन किये हैं, वे मिट सकते हैं, रीडर्स हमारे पास और नही, सिर्फ़ वही जोड़ा है, जो हमने आपको भेजा है।

हमारे जीवन-चरितमे क्या रक्खा है? आपको जो हमारा चरित्र (!) बहुत ही पसन्द हो तो आप ही लिखिएगा। इस संसारमे हमारे आगे-पीछे कोई नही है। वसीयतनामा लिखकर राही मुल्क बका होनेके लिए तैयार बैठे है, अपने चरितके नोटस् लिखनेको हमे फ़ुरसत नहीं है।

ठाकुर शिवरत्नसिंहका समाचार सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। ऐसे स्वाधीनचेता, विद्या-व्यसनी और देशभक्त सज्जनोको ईश्वर चिरायु करे।

देशोपालम्भ सिर्फ़ आपके देखनेके लिए है, प्रकाशके लिए नहीं।

श्रीमदीय

महावीरप्रसाद

पुनश्च—

माफ़ कीजिए हमने इस टुकडे ही पर आपको यह पत्र लिख दिया।

म० प्र०

[१०]

कानपुर

११-१२-०५

बहुविध प्रणामानन्तर निवेदन—

७ तारीखका कृपापत्र मिला।

पहले पत्रका उत्तर जालन्धर गया है, न मिला हो तो मँगा लीजिएगा। पुस्तकें मिलीं, टोपी भी, 'मेनी थैंक्स'।

गुप्ताजीकी बाबत हम पहले पत्रमे आपको लिख चुके हैं।

हम इनके मसखरेपन और कुटिल कटाक्षोंकी ओर दृक्पात नहीं करते आये।

पर कई आदमियोकी राय है कि व्याकरणका विषय महत्त्वका है।

इससे इस दफा जवाब देना चाहिए।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[११]

जूही, कानपुर

११-१-०६

प्रणाम!

कृपा-पत्र मिला। हमने तो लाला मुशीरामको लिखा था कि क्यो आपने हमारे पत्रोंका जवाब नहीं दिया, और अब आप कहाँ हैं? एक कार्ड हमने जालन्धरको आपके नाम भेजा है, उसे मँगा लीजिए और उसी को प्रयाग भेजकर हमारी दोनो रीडर्स इण्डियन प्रेससे मँगा लीजिए— उन्होने कृपा करके अपनी प्रतियोंमेसे दो प्रतियाँ आपको देनेका वादा किया है। हमने कोई २०-२५ पृष्ठमे वेंकटेश्वर और भारत-मित्रके (दो अकोंके) आक्षेपोका उत्तर लिखा था, पर प्रयागमे इस विषयका जो

विचार हुआ उसमे यह स्थिर हुआ कि " को बातका उत्तर न दिया जाय।

हमने दो-एक व्यङ्गयपूर्ण और हास्यरसानुयायी गद्य-पद्यमय लेख लिखे है, उनका सम्बन्ध ऐसे लोगोंकी समालोचनाओसे है, जो कुछ नहीं जानते पर सब कुछ जाननेका दावा करते हैं। अगर सलाह हुई तो उनको शायद हम क्रम-क्रमसे प्रकाशित कर दे। भाषा और व्याकरण पर एक और लेख लिखनेका हमारा इरादा है। उसमे भी हम हरिश्चन्द्र की त्रुटियॉ दिखलायेंगे, और अच्छी तरह दिखलायेंगे। काशीके कई पण्डितोने अनस्थिरताको साधु बतलाया। सस्कृत पत्रिकाके सम्पादक अप्पा शास्त्री विद्यावागीशने तो कई तरहसे उसकी साधुता साबित की।

आप कब तक जालन्धर वापस जाइएगा। आपने जो वन्देमातरम् वाले श्लोक भिजवाये थे, उनका निर्णय हमने लिख भेजा था, आप हमारा सीमासे अधिक गौरव करते हैं। हम आपके सामने ऐसे मामलोमे कोई चीज नही। हमारा निर्णय पसन्द आया या नहीं।

श्रीमदीय

महावीरप्रसाद

[१२]

कानपुर

२२-१-०६

प्रणाम !

२० ता० का कृपा-पत्र मिला—भाषा और व्याकरण पर एक और लेख लिखा है—उसमे कुछ आक्षेपोंका जवाब भी है, यहाँ सब लोगोंकी सलाह हुई तो छपेगा।

वन्देमातरम् वाले श्लोक हमने कागड़ी हरिद्वार भेजे थे, ला०

मुंशीरामके पास—उन्हींने हमको भेजा था, इससे हमारा फैसिला भी उन्हींके पास गया।

ठाकुर साहबकी पुस्तके अभी रक्खी हैं, शिक्षा हमें अधिक पसन्द है। पहले उसीके लिखनेका विचार है। यह सुनकर बड़ी खुशी हुई कि आपको नौकरीकी विशेष परवा नहीं। फिर क्या ज़रूरत जालन्धर जानेकी ? इस समय समालोचनाओंकी ज्वाला जल रही है, कुछ दिन विद्यालयकी पुस्तकोंकी बात नई न कीजिए—आप चाहें तो कुछ तब तक लिख रक्खें, मगर, हमसे अभी कुछ न लिखाइए, नहीं तो प्रलय हो जानेका डर है, आपको नूह बनना पडेगा।

भवदीय

महावीरप्रसाद

[१३]

कानपुर.

२-२-०६

प्रणाम !

३० का पत्र मिला—आपने जो अनुमान किया ठीक है—नलदम्भके बारेमे लिखना जरूर चाहिए था, न लिखना हमारी भूल है, खैर अब लिख देंगे, पाञ्चालके सम्बन्धके लेख हमे पढ़ने है। फ़ुरसत मिले तो इकट्ठे करके पढ़ें—बहुत करके आप हीका अनुमान ठीक होगा। इंगलैंड और अमेरिकासे हमारे पास दो-एक ऐसी सामयिक पुस्तकें आती हैं, जिनमे ऐसी-ऐसी अद्‌भुत-अद्‌भुत बाते रहती है "सच है या झूठ राम जाने"। रीडर्स पहुँच जाये तब लिखिएगा—और सब कुशल है। बंगवासीमें किसीने "आत्मारामकी टे टे" लिखना शुरू किया है।

भवदीय

म० प्र०

[१४]

फ़तेहपुर
४—६—०६

प्रियवर,

कृपापत्र मिला। दो चार दिनके लिए यहाँ हम कृत्रिम हीरावालोसे मिलने आये हैं, आपकी राय हमने उनको सुनाकर खुश किया और, और ऐसे ही लेख लिखनेके लिए उत्तेजित भी किया।

चाँदनीका पता-ठिकाना मालूम नही, बिना पताके वह लेख हमारे पास आया था, लिखना तो पुरुषका ऐसा मालूम होता था, पर सम्भव है वह स्त्री ही का हो।

नाथूरामजीकी कविताकी कई सज्जनोने तारीफ़ की है, वे सचमुच सुकवि हैं, हमने उनसे और भी कविता भेजनेके लिए प्रार्थना की है। आपका साधुवाद भी हम उन्हें भेजते हैं। हॉ, ये वही "शंकरसरोज" वाले हैं, बडे सज्जन जान पड़ते हैं।

हिन्दी-ग्रन्थ-मालाका पहला अंक निकल गया, शिक्षाका अनुवाद शुरू क्या, आधा हो गया। देखने पर आपको मालूम होगा कि उसका ढंग कैसा है, उर्दूवालेसे अच्छा नहीं तो बुरा भी न होगा। शिक्षाका संस्कृत अनुवाद मैसूरमे किसीने किया है पर अधिक पता नही चला। मैसूर प्रेसवालेने लिख भेजा, कोई कापी शेष नहीं।

श्रीहर्ष, मोमिन और ग़ालिबके एकार्थबोधक पद्य ज़रूर देंगे, दया करके हमारे लिए एक छोटा-सा नोट भेज दीजिए और उसीमे इन तीनो पद्योंका तारतम्य दिखला दीजिए, इतना काम हमारे लिए नही तो "सरस्वती" के लिए कीजिए, हमको बड़ा काम है।

लाला देवराजके सिवा और लोगोंने भी "सरस्वती" को लूटना शुरू

किया है । बम्बईके कई गुजराती अखबार उसके लेख गड़प कर रहे हैं । पटनेके विद्या-विनोदने भी कृपा की है ।

भवदीय
महावीर

[१५]

कानपुर
१७-६-०६

प्रिय पण्डितजी प्रणाम,

कृपा-पत्र मिला । प० भीमसेनजीके श्लोक हम 'सरस्वती'मे धन्यवाद-पूर्वक प्रकाशित करेंगे, दारिद्र्यके विषयमे चारुदत्त और मोमिनकी उक्ति खूब मिलती है ।

वह नोट हमने लिख लिया है, आप कष्ट न उठाइएगा ।

"नोटके लिए अभी कुछ उपयुक्त सूझा नहीं क्या लिखूँ"

वाह, क्या आप भी बहानेबाजी करने लगे ? साफ इन्कार लिखा कीजिए ।

दो-चार दिनमे एक महीनेके लिए अपने गॉव जानेका इरादा है ।

आमकी फसल आ गई—

भवदीय
महावीरप्रसाद

[१६]

दौलतपुर
२६-७-०६

नमो नमः,

काव्यमालाके १३ वे गुच्छकके ८ वे पृष्ठ पर रामभद्र दीक्षितकृत "वर्णमालास्तोत्र" का यह श्लोक पढ़िए :—

"सर्गस्थितिप्रलयकर्म्मसु चोदयन्ती, माया गुणत्रयमयी जगतो भवन्तम् । ब्रह्मेति विष्णुरिति रुद्र इति वृथा ते, नाम प्रभो दिशति चित्रमजन्मनोऽपि" ॥

इसमे "वृथा" शब्दका "वृ" सयुक्त अक्षर क्यो माना गया है, क्या "ऋ" व्यञ्जन भी कभी माना जाता है, अथवा, वृथा क्या कभी व्रथा भी लिखा जाता है।

इस विषयमे एक महाराष्ट्र पण्डितसे हमसे विवाद हो चुका है।

क्या आपने "समयमातृका" और "कुट्टनीमतम्" काव्य देखे है ?

भवदीय
म० प्र०

[१७]

दौलतपुर
२६-७-०६

प्रिय पण्डितजी,

१६ ता० का कृपाकार्ड मिला, सरस्वतीको लोग बीच ही मे रोक लेते है, प्रेसवालोंका अपराध नही, जूनकी एक सख्या हमारे पास थी, उसे आज आपको भेजते है।

'आर्य मुसाफिर' को धन्यवाद--उस अकको कोई कापी आपके पास फालतू हो तो भेज दीजिए, "कुचकलश" को आपने पसंद किया है तो किसी समय प्रकाशित करना ही होगा। ५-७ दिनमे कानपुर लौटनेका इरादा है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[१८]

कानपुर
११-८-०६

प्रणाम,

७ ता० के कृपा-पत्रके लिए धन्यवाद। "आर्य मुसाफ़िर" की कापियाँ मिलीं, पढ़ ली, वापस भी आज करते हैं, पहुँच लिखिएगा।

आपकी कलाकी बीमारीका वृत्त सुनकर रंज हुआ, ईश्वर शीघ्र ही उसे अच्छा करे।

'सरस्वती'की कापी लौटानेकी जरूरत नहीं, इस देशमे कोई बात प्रचलित हो जानेसे उसका छूटना कठिन हो जाता है—"हिन्दू" शब्द लोगोके हाड़-मासमे प्रविष्ट हो गया है, अतएव जब-तक सब लोग आर्यसमाजके ऐसे विचारोके न हो जायँगे इसका प्रयोग बन्द न होगा। शब्दोके अर्थ हमेशा बदला करते हैं। बुरेका भला और भलेका बुरा हो जाया करता है। "आर्य" शब्दके विषयमे भी एक लेख देना है।

परलोकके पत्र मन-गढ़न्त मालूम होते है। कहिए ऐसी बाते न लिखा करे। पर लोग पढते बडे भावसे हैं। "दो कदीम शहर" अगरेज़ी Archaeological Reports की बदौलत है।

खजुराहो, देवगढ़की पुरानी इमारते, मथुराका कंकाली टीला आदि इस तरहके कई लेख तैयार है, पर नीरस होनेके कारण देनेको जी नही चाहता।

शेक्सपियरके कई नाटकोकी आख्यायिकाएँ निकल चुकी है। "और भी निकालेंगे" की सूचनाके लिए धन्यवाद।

संस्कृतमे "पवनदूत" है, पर यह उसकी नकल नही, सस्कृतवालेको पढ़े हमे थोड़े ही दिन हुए।

पं० भीमसेनजीके खिचड़ी पद्य छापेंगे, तब तक उन्हे धन्यवाद दीजिए, जयपुरके पण्डित रामकृष्णने ऐसे अनेक श्लोक "जयपुरविलास" मे लिखे है। पण्डितजीका योगदर्शन आया है, उत्तम है, लाहौरके एक पण्डितकी भूमिकामे अच्छी खबर ली है।

भवदीय

म० प्र०

[१९]

कानपुर
२१—८—०६

प्रणाम !

आपकी कलाकी मृत्युवार्ता सुनकर रंज हुआ, बच्चोके इस तरहके चिर-वियोगसे तो शायद न होना ही अच्छा है पर क्या किया जाय, शोक चाहे कितना ही क्यो न हो धैर्य ही धरना पड़ता है।

आज्ञानुसार योगदर्शनकी आलोचना करेंगे।

विनयावनत
महावीर

[२०]

कानपुर
५—९—०६

प्रिय पण्डितवर,

२ ता० का कृपा-पत्र मिला, यह हम देख रहे हैं कि यदि सरस्वतीमे स्थान मिले तो धीरे-धीरे विक्रमाङ्क चर्चा छाप दे, और साथ ही कुछ कापियाँ उसकी अलग भी कर ले, यदि यह न हो सका तो इण्डियन प्रेससे हम कहेगे कि वह अलग ही छाप दी जाय, कालिदासविषयक हमारे पास कुछ सामग्री इकट्ठी है, कुछ और हो जाय तो एक छोटा-सा प्रबध कवि-कुलगुरु पर हम लिखे, संस्कृत-पत्रिकामे कालिदास पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है, सो आपने देखा ही होगा। बगालियोमे बाबू रामदास सेनने भी कुछ लिखा है।

'विक्रमाङ्क चरित' आपने पढ़ लिया, कृपा की, नव साहसाङ्क-चरित भी शायद आपने पढ़ा होगा। "शिक्षा" का संस्कृत-अनुवाद (Curator Govt. Book Depot) के यहाँ मिलता था, शायद किसी मदरासीका किया हुआ है, परन्तु क्यूरेटर साहबने जवाब दिया है कि सब कापियाँ बिक गई।

अनुवादककी तलाशमे हम है, पता लग गया तो उससे मॅगावेगे। बहुत अच्छा, यदि हुआ होगा, तो मराठीका भी अनुवाद मॅगावेगे।

बिजनौरसे कोई मॉग किताबोकी नही आई, आप अपने मित्रसे इस बारेमे कुछ न कहिएगा। ठाकुर शिवरत्नसिंहको हम पुस्तके भेज देगे।

आपकी इस कृपाके लिए अनेक धन्यवाद। व्याकरण बनानेके लिए बहुत विद्या, बुद्धि, पठन और सामग्रीकी दरकार है। वह हममे नही, फिर हम करे क्या क्या ? "शिक्षा" को लिखे या कालिदासको लिखे या 'सरस्वती' को लिखे, किस-किसको लिखे, आप तो बहुत काम बतलाते है। हम कलसे एक छोटा-सा प्रबन्ध "भाषा और व्याकरण" पर लिख रहे है। उसमे जब तबका भी जिकर आवेगा। कहिए, आपके पास पहले देखनेको भेज दे ? "वेंकटेश्वर" इत्यादि "सरस्वती" का नाम शायद इसलिए नही लेते क्योकि हमने आज तक उनकी समालोचना नहीं की। इससे हम असन्तुष्ट नहीं, सरस्वतीके रक्षक आपके सदृश विद्वान् हैं।

औरोंने यदि उसका नाम भी लिया तो कोई हानि नहीं। तीन दिन हुए लाला बदरीदासका पत्र आया था, उन्होने लिखा है कि हमारा पत्र उन्होने लाला देवराजको दिखाया, वे माफ़ी मॉगनेको तैयार है। और कहते है यथासम्भव उन्होने 'सरस्वती'का नाम देनेकी कोशिश की है। किसी अच्छे लेखकके न मिलनेसे उन्होंने किताबे लिखी है। और यदि हम सूचना दे तो उसके अनुसार संशोधन भी करनेको तैयार है। हमने लिखा

है, हमारा पत्र कमिटीमे पेश कीजिए। 'सरस्वती'का नाम देनेकी कोशिश नहीं की गई। अच्छी किताबें लिखनेवाले मिल सकते थे, और अब भी मिल सकते है। आज "शिक्षामणि" आई है। लालासाहबकी किताबो से अच्छी है। मौका आने पर उसका भी हम हवाला देगे। और आगे आपकी क्या राय है ? हाँ, आपसे एक काम है, झाँसीमे जब तक हम रहे पंजाबसे पट्टी मँगाकर जाड़ेके सूट बनवाते रहे। अब मार्ग बन्द हो गया, आप अमृतसर और लाहौरके पास है। अक्टोबरके शुरूमे क्या आप एक शुतरी (बादामी) रङ्गकी अच्छी पट्टी नौ-दस रुपयेकी मँगा-कर भेज सकते हैं। एक उसी रङ्गकी मलीदेकी किश्तीनुमा टोपी भी चाहिए, गोल मिले तो और अच्छा, नाप टोपीकी रुपयोके साथ पहले भेजेगे।

श्रीमदीय
महावीर

[२१]

कानपुर
२९-९-०६

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला। आपकी बीमारी और तीमारदारीका हाल सुनकर दुःख हुआ। आशा है अब सब प्रकार कुशल होगे। हम भी ८ रोज बुख़ारमे मुबतिला रहे। अब अच्छे है। सैयद साहब दमोह ज़िलेके रहने-वाले हैं। हिन्दी कवितासे शौक है। आप शायद तिजारत करते है। उस 'नोट' के लिए लेखक महाशयने शिकायत की है एतदर्थ एक और नोट देना पड़ा। वह अक्टूबरमे निकलेगा। सचमुच महाराज साहबका कोई दोष नही। अगस्तकी ग्रन्थमाला निकले एक महीना हुआ, आप दूसरी कापी मँगाइए, पहली शायद खो गई।

भवदीय
महावीर

[२२]

कानपुर
१०—१०—०६

प्रियवर !

कृपा-पत्र मिला—कई रोज़से हमारे नेत्र विकृत हो रहे हैं। लिखनेमें कष्ट होता है, कहीं धृतराष्ट्रताको न प्राप्त हो जायँ यही डर रहता है, पर आपका पत्र पढ़कर उत्तर दिये बिना नहीं रहा जाता। आपके पत्र बड़े ही विद्वत्तापूर्ण और मनोरंजक होते हैं। इस पत्रको हमने दो दफ़े पढ़ा, "भागा" वाला पद्य हमारी पाकेटबुकमें पहले ही से नोट है। खूब मनोरंजक है। प्रकाशित करेंगे, सूचनाके लिए धन्यवाद, उसीके पास पण्डितराज जगन्नाथरायका यह श्लोक भी नोट किया हुआ है।

"भत्तातपादै रचिते निबन्धे निरूपिता नूतनयुक्तिरेषा।
अङ्गङ्गवां पूर्वमहो पवित्रं कथन्न वा रासभधर्मपत्न्याः ॥"

इसमें क्या खूबी है, सो ठीक-ठीक ध्यानमें नहीं आती। आप लिखिए साधारण अर्थमें तो कोई विशेषता नहीं, क्या नवा और न वाके भङ्गश्लेष पर तो पण्डितेन्द्र नहीं टूटे ?

महिलाजी मिर्जापुरवासिनी बंगालिनी हैं। पति उनके विद्वान् हैं। वहीं एक अंग्रेज़ वणिकके यहाँ नौकर हैं। महिलाजीको हिन्दी, बंगला दोनोंसे शौक़ है। चिरौरी और अकचकाकर इधर खूब बोले जाते हैं। इन शब्दोंमें हमें एक प्रकारकी सरसता मालूम होती है। इससे हमने नहीं निकाले।

कान्यकुब्ज-अबला-विलापको आपने खूब पहचाना, आपका अनुमान ठीक है। हालीका "चुपकी दाद" देखकर ही हमने उसे लिखा है। बरेली अनाथालयके शेरसिंहका हाल हमें एक सज्जनने पहले ही लिखा था, वह छप भी गया। इस महीनेकी 'सरस्वती'में आपको मिलेगा।

शङ्करजीकी कविताका क्या कहना है। पञ्चाशिका उत्कृष्ट कविता है। तिसपर भी न० प्र० वाले सरस्वतीकी कविताको भद्दी बताते है। "क्षीणामशिक्षित" पद्य समय पर याद नही आया, नही तो हम जरूर लिख देते, सम्भव है शङ्करजीने अपने पद्यमे इसी कालिदासीय उक्तिकी छाया ली हो। आपकी 'सरस्वती' पर बड़ी कृपा है। आप और भी एक आध कविता लिख रहे है। "चकास्ति योग्येन हि योग्यसङ्गमः"। आपने खूब कही, पर 'सरस्वती' अभी अपनेको योग्य नही समझती। जिस तरह अनामिकाबाईने कालिदासकी सहृदयतापर आक्षेप किया था, आप श्रीहर्षकी सहृदयता पर आक्षेप कीजिए। नैषधसे दो-चार श्लोक चुनकर आप उनकी आलोचना कीजिए।

आप हमारा कभी कहना नही करते। कभी हमारी प्रार्थना नही सुनते, पर हम आपकी आज्ञाका यथाशक्ति सदा पालन करते है। ऐसा क्यो? अच्छा बहुत अच्छा, हम 'सरस्वती' के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लेखकोके चित्र आपकी आज्ञासे देने जाते है। बहुत जल्द इसका आरम्भ होगा, और भी दो-एक सज्जनोंने इस विषयमे हमे लिखा है। पर आप ही की आज्ञाको हम अधिक महत्त्व देते है। अब आप नैषधकी आलोचना भेजिए और साथ ही अपना एक अच्छा फोटो भी।

शिक्षा समाप्त हो गई, बाबू शिवरत्नसिहकी पुस्तक कहाँ लौटावे क्या वे अभी तक जालन्धर ही मे हैं।

इण्डियन प्रेसमे बेहद काम रहता है।

गनीमत समझिए जो सरस्वती निकल जाती है। विक्रमाङ्कचर्चा आधी छपी हुई खटाईमे पड़ी है, हम उन्हे याद भी नहीं दिलाते। खुशी होगी तब छापेगे।

जब तक "विष" का प्याला सामने न आवे तब तक "औषध" तैयार करना ठीक नहीं, व्यर्थ श्रम करना पड़े, कौन ठिकाना, शायद धमकी

हो, क्योंकि "जानि न जाय निशाचर माया" मसाला तैयार है, समय आते ही बहुत जल्द पुस्तक छप जायगी।

'सरस्वती'की ग्राहक-संख्या अब १५०० तक पहुँचना चाहती है। यदि "औषध" बनी तो कोई मात्रा बाकी न रह जायगी। बल्कि दो-चार चीज़ें जो आज तक किसीने नही देखी वे भी घोल दी जायँगी। "रमता राम" हैं श्री पण्डित माधवप्रसाद मिश्र। उनका और हमारे मित्रका षडष्टक योग है, और है किसका नहीं ? वेंकटेश्वर, बंगवासी, मोहिनी, भारतजीवन, सरस्वती सबसे आपका वही सम्बन्ध है जो ३६ का एक दूसरेसे है।

प्रेमास्पद

महावीर

[२३]

जूही, कानपुर

४–११–०६

सविनय प्रणाम !

२६ ता० का कृपा-पत्र यथासमय मिला। उधर आप बुखारमे परेशान, इधर हम। आज ७–८ रोज़मे चित्त कुछ स्वस्थ हुआ है। परन्तु दौर्बल्य अधिक है। इससे छोटा ही पत्र लिखेगे, आपका पत्र तो बड़ा ही मनोरंजक है। उसे हमने दो बार पढा।

आप अपना फोटो ज़रूर भेजिए और नैषध पर एक लेख भी लिखिए। टालबाजीसे काम न चलेगा। ठाकुर शिवरत्नसिंहको हमने जालन्धर पत्र भेजा था, पर वहाँसे उत्तर अब तक नही आया। शङ्करजी की कविता अवश्य अच्छी होती है। हम तो चित्रो पर उन्हीसे कविता

लिखाना चाहते हैं। पर तीन चित्र भेजे ६ महीने हुए। इतने दिनोमे उन्होने सिर्फ़ तारा पर कविता लिखी। अभी दो उनके पास और है। आप ही कृपा करके हमारी सिफ़ारिश कीजिए।

'सरस्वती'की अक्टूबरवाली सख्यामे जो"शरद" है, वह प्रायः अनुवाद मय है। किरातके कई पद्योका अविकल अनुवाद उसमे है।

टेसूके विषयमे जो कुछ ज्ञात था लिखा, आगेकी राम जाने।

हमे कादियानीका बहुत कम हाल मालूम है, इसीसे हमने उसका चरित छाप दिया। तिस पर भी हमने नोट दिया ही है। उसका चित्र रह गया था, समय पर न आया था, सो प्रेसवालोने इस महीनेको 'सरस्वती'मे लगा दिया। आप एक छोटा-सा लेख उसके उत्तरमे भेजिए, हम छाप देगे। शिष्टताका उल्लघन न हो और धार्मिक बाते जहाँ तक बचाई जा सकें बचाइएगा। सिर्फ़ कादियानीसे सम्बन्ध रखनेवाली ही बाते लिखिएगा। योगदर्शनकी आलोचना निकलेगी, क्या करे स्थल ही नही मिलता, इससे समालोचनाएँ रह जाती है। भरसक इस महीने कुछ निकलेगी। शरद्-वर्णनमे माघवाला श्लोक प्रसिद्ध ही है। पर अब शरद गई, इससे इस विषयके अब और कोई पद्य सरस्वतीमे न निकलेगे। पर आपने जो श्लोक भेजे उत्तम हैं। हेमन्तवाला "लज्जा प्रौढ़े मृगीदृशां" दिसम्बरमे निकालनेकी कोशिश करेंगे।

नवम्बरके लिए शरद् पर कविता गई। इस "मृगीदृशा" वालेमें "प्रणयिता वाराङ्गनानामिव" की जगह "प्रणयिनो वाराङ्गनानामिव" हो तो कैसे?

"वासराः" का उपमान "प्रणयिता" ठीक होगा?

भवदीय
महावीरप्रसाद

कविताविषयक पद्य बहुत करके आपको दिसम्बरमें मिलेंगे।

[२४]

दौलतपुर, डाकघर—भोजपुर
रायबरेली
१४—११—०६

प्रिय मित्र !

८ ता० का कार्ड मिला। हमारी वृद्ध माता सख्त बीमार हैं। इससे उनकी आज्ञा पाकर हम यहाँ आये हैं। उनका हाल देखकर कानपुर जायँगे।

"प्रणयिनः" पर आपने जो भाष्य रचा सो हमारी मोटी बुद्धिमे ठीक-ठीक नहीं आया। हमे क्या करना है। हम आपका प्रेमी "प्रणयिता" ही रहने देगे।

योगदर्शनकी आलोचना लिखी रक्खी है, किसी सख्यामे अवश्य निकलेगी। कविताविषयक पद्य बहुत करके इसी महीनेमे निकल जायँगे। आपके भी दो-एक पद्य उसमे रहेगे। "शीत" वाला पद्य नोट कर रक्खा है। देनेका वादा नही करते।

"निद्राकापकषायितेव दयिता संत्यज्य दूर गता
नो क्षीयते शर्वरी" भी देने लायक है। हमारे खास मतलबकी जो बात हमारे पत्रमे थी उसका उत्तर आपने नही दिया। हम भी आपके कादियानीवाले पत्राशका उत्तर नही देगे। यहाँ एक देहातोने हमे एक यह श्लोक कल सुनाया—

"माषपेषणमिषेण मृगाक्ष्या दोलितो बहुरतीव-नितम्बः।
प्रोषिते प्रियतमे चिरकालं विस्मृतं सुरतमभ्यसतीव" ॥१॥

विनीत
महावीर

[२५]

जूही, कानपुर
७–१२–०६

प्रणाम !

कल रातको यहाँ आये। खतरनाक प्लेग है। कल फिर प्रस्थान है। शायद फ़ैजाबाद, गोरखपुर वग़ैरह आकर कुछ दिन रहे। पत्र-व्यवहार कानपुरके ही पतेसे रहे। श्रीकठचरित इस उजलतमे नही भेज सकते।

स्थिति-स्थापकता हो जाने पर कानपुर लौटकर भेजेगे। कोई अपना चरित (जन्मभूमि आदिका विवरण) बतलावे ही नहीं तो क्या किया जाव ?

हम तो वही चाहते है जो आप पर लाचारी है। आप अपना फोटो भेजकर, कृपा कर हमारी इस इच्छाको पूर्ण कीजिएगा। आपने नवम्बरकी 'सरस्वती' पसन्द की। चलो हमारा परिश्रम सफल हो गया।

"शुष्कस्तनी" विषयक आपका आशय हमारेसे अच्छा है।

कृपा करके जब कभी श्लोक भेजा कीजिए तब उनका भाव भी लिख दिया कीजिए। "कथाखंड" को फिर लिखकर भावार्थ सहित भेजनेकी दया दिखाइए। आपने जो समानार्थक संस्कृत, उर्दू, फारसीके पद्य भेजे है, सब रक्खे है। सब प्रकाशित होगे।

"माषशिमिवत्" का मतलब हमारे ध्यानमे नहीं आता।

मुमकिन है कुछ अर्थ होता हो। स्पेसरका चित्र मिल सका तो जरूर "शिक्षा" के साथ निकाला जायगा।

विनीत
महावीर

[२६]

कानपुर
२१—१—०७

प्रणाम !

कृपा पत्र-मिला। कानपुरमे कहीं-कहीं अभी तक प्लेग बना हुआ है। हमारे पासके एक गॉवमे खूब है। उससे हम लोग अलग रहते हैं।

अबकी बार अर्थशास्त्र पर एक छोटी-सी पुस्तक लिखनेका विचार है। शिक्षा अभी तक हमारे ही पास है।

कविताके लिए धन्यवाद।

गवर्नमेंएटकी किताबे बहुधा दुबारा कम छपती हैं। Govt. Central Book Depot लिखते है।

प्रणत
म० प्र०

[२७]

दौलतपुर
डाकघर भोजपुर [रायबरेली]
२९—४—०७

प्रियवर !

आपका कृपा-पत्र बहुत दिनोमे मिला। आजकल हम अपने गॉवमे है। १० मार्च तक कानपुर जायॅगे।

यदि विक्रमाङ्क आपको इतना पसंद है तो हमारी कापी आप अपने ही पास रहने दीजिए। खेद है, आपने सतसई अभी तक न देखी थी। उत्कृष्ट कविता है। ध्वनिका आकर है। 'लाल चन्द्रिका' न मालूम कहाँ मिलती है। कृष्ण कविने दोहोंकी टीका सवैयोंमे लिखी है। वह भी अच्छी है। एक सतसई वंगवासीवालोंने निकाली थी, पर हमने नहीं

देखी। अबिकादत्तका "विहारी विहार" आपने देखा ही होगा। जो दो दोहे आपने भेजे, उनको अकेले क्या छापे, आप और दोहोके साथ भेजिएगा। सतसईकी beates आप समझाइये। आजकल हम हालीके दीवानमे जो मुकद्दमा है पढ़ रहे हैं। खूब लिखा है। हम हालीका चित्र 'सरस्वती'मे छापना चाहते हैं।

विनीत
महावीर

[२८]

चरखारी, हमीरपुर
२९–९–०७

प्रिय पण्डित जी !

बहुत दिनोंमे आपने हमारी खबर ली। सुनकर रञ्ज हुआ कि आप इतने दिनो तक बीमार रहे। आशा है अब आप बिलकुल अच्छे होगे।

बाबू साहबने "पुनन्तु"—इत्यादि तो नही कहा। पर क्षमा माँगी। इसीसे हमने और कुछ लिखनेका विचार छोड़ दिया है। वक्तव्य अब न छपेगा। प्रेससे वापस मँगा लिया।

कोई साहित्य-संसारमे विशेष बात नही हुई। हाँ, "भारतमित्र" के गुप्त जी मरे, यह सुनकर दुःख हुआ। "सुनृतवादिनी" कई महीनेसे नहीं निकली। ५–७ दिनमे कानपुर जायँगे, वहाँसे "देवनागर" ढूढ़कर भेजेंगे। उसके आज तक शायद दो ही अङ्क निकले है।

दुर्भिक्ष यहाँ भी पड़ना चाहता है। प्रजा त्राहि-त्राहि कर रही है।

विनीत
महावीरप्रसाद

[२९]

जूही, कानपुर

२२-४-०८

प्रिय मित्र, प्रणाम,

कार्ड मिला। पं० रामदयालुकी खबर सुनकर दुःख हुआ। उनसे हमारी समवेदना सूचित कीजिएगा। ईश्वर उन्हे शीघ्र अच्छा करे।

हमारा वह श्लोक दे दिया था? दो-एक दिनमे हमारा इरादा घर जाने का है। कोई एक हफ्ते बाद लौटेगे। बाणभट्ट भेजते है। पहुँच लिखिएगा। देखकर लौटा दीजिएगा, कोई जल्दी नही है। विद्यावारिधिका वेद २ जिल्दोमे है। बड़ा है। दाम कोई १० रु० है।

हमे दुनियाके किसी पत्र और किसी भाषासे लेख उद्धृत करनेसे इनकार नहीं। पर चीज़ उद्धृत करने योग्य होनी चाहिए। "वैरागी" यदि इस लायक हो तो भेजिए। आपने जन्म भरमे एक लेख भेजा सो भी पूरा नहीं। पूरा करनेमे भी आप झंझट बतलाते है। वाह साहब! जाने कैसे देगे। आपको पूरा लेख भेजना पड़ेगा। न पसन्द आवेगा तो आप अपने "उपकारी" मे छाप डालिएगा।

भवदीय

म० प्र०

[३०]

दौलतपुर, डाकघर—भोजपुर

रायबरेली

१६-७-०८

प्रणाम,

आजकल हम अपने जन्म-ग्राममे है। ४ अगस्त तक कानपुर जानेका विचार है। आपका कृपापत्र मिला। समानार्थक पद्योंके लिए धन्यवाद।

वे National गीत हम 'सरस्वती'मे न छापेंगे। आजकलकी राजनैतिक स्थिति आपसे छिपी नहीं है। लेखकको सूचना दे दीजिएगा।

और सब कुशल है। पानी थोड़ा यहॉ भी बरसा है। कृपा पूर्ववत् बनी रहे यही प्रार्थना है।

भवदीय
महावीरप्रसाद

[३१]

जूही, कानपुर
६—८—०८

प्रणाम,

ले डाला शर्माजीको।

अच्छा किया 'सरस्वती'को गालियाँ दे-देकर आप शेर हो गये थे। सो, आपने उन्हे गीदड़ बनानेका उपक्रम किया है।

आषाढ़के "परोपकारी" मे आपके लेखको पढ़कर शर्माजी पर हमे बड़ी दया आई है।

कृपा करके राजवैद्य पं० रामदयालुजीसे कोई ज्वरघ्न रामबाण दवा शर्माजीको भिजवाइए।

आपका लेख पढ़कर शर्माजीको ज्वर आये बिना न रहेगा।

विनीत
महावीरप्रसाद

[३२]

जूही, कानपुर
१६—८—०८

प्रणाम,

१४ का कृपा-पत्र मिला, जवाब मुख्तसिर देंगे। पं० गिरिधरशर्मा (झालरापाटन) आज हमारे यहाँ पधारे हैं। उनके साथ अभी शहर जाते हैं। यही कारण है।

चित्रके लिए प्रेसको लिख दिया। तैयार होने पर आप "शङ्कर" के करकमलोसे कविता लिखा दीजिएगा। उन्होने "हिजड़ेकी मजलिस" नामकी कविता भेजी है। उसके छापनेमे हमें पस व पेश है। इससे शायद वे कुछ नाराज़ हो जायँ। एक बात सुनकर आश्चर्य हुआ। भक्तराम बी० ए० को क्यो उभार रहे हैं?

वे तो आपके पासके बैठनेवाले हैं। किसीका कुछ किया न होगा। आप डरिएगा नही। वहाँकी नौकरी कौन लाख टकेकी है। जहाँ तक सम्भव होगा आपके पद्य सितम्बरमे निकाल देगे। हमे आपके श्लोक देनेमे उज्र नही। पर याद रखिए संस्कृत श्लोकोके ज्ञाता एक ही दो है। आप अपना-सा हाल सबका न जाने। आपका इस बारका पद्य अशुद्ध छप गया, इसका खेद है।

शङ्करजीकी कविताके संग्रहके बारेमे फिर लिखेगे।

उनकी कविता हमारे सचित्र "कविताकलाप" मे निकल जाने दीजिए, फिर देखा जायगा।

सतसईकी आलोचना आपको पहले सब भेजनी होगी। हम आपके सब प्रणयानुरोधोकी रक्षा करते आये हैं। आपको भी हमारे इस अनुरोध की रक्षा करनी होगी।

"भू-भ्रमण खण्डन" नहीं देखा।

बाणभट्टका काम हो गया हो तो लौटाइएगा।

विनीत

म० प्र०

[३३]

जूही, कानपुर
२१—८—०८

प्रणाम,

कृपा-कार्ड १—८ का मिला।

शङ्करजीके पास कई चित्र कोई एक वर्षसे पड़े है। एक पर भी कविता नही लिखी। उर्मिला पर तुरन्त लिख देगे, यह कैसे आशा की जा सकती है? हमने उन्हे लिख दिया है कि चित्रमे वही भाव रक्खा जायगा जो आपकी कवितामे होगा। आप पहिले कविता लिखिए।

"सतसई संहार" थोड़ेमे पूरा करके भेजिए। हम उसे यथासम्भव शीघ्र छापना शुरू करेगे। "परोपकारी" के बदले "सरस्वती" मिलती है या नही?

भवदीय
महावीर

[३४]

जूही, कानपुर
२४-९-०८

विनयपूर्वक निवेदनमिदम्।

ला० हरिश्चन्द्रजी आज मिले। कुछ पुड़ियाँ दी। ४-५ दिनसे हमने जल-चिकित्सा फिर शुरू की है। उसका परिणाम देखकर यह दवा खायेंगे। "बाणभट्ट" मिल गया। "शंकर" जी को हमारी तरफसे धन्यवाद दीजिएगा। गौरीशंकरजीको 'सरस्वती' भेजनेके लिए लिख देगे। 'प्रचारक' मे यदि कोई सप्रमाण, साधार और तर्कसंगत बात हो तो कृपा करके अपनी कापीका कटिङ्ग आप ही भेज दीजिए। यदि प्रलापमात्र हो तो जाने दीजिए।

तबीअत हमारी अभी तक वैसी ही है। घटे आधघंटे रातको मुश्किलसे नींद आती है। लाला हरिश्चन्द्रसे आपकी बहुत बाते होती रहीं।

न मालूम आपके अब कब दर्शन हो।

विनीत

महावीर

[३५]

जूही--कानपुर

११-१०-०८

प्रिय पंडितजी महोदय,

जिस समय हमारे पत्रके विस्तृत उत्तरकी ज़रूरत थी उस समय आपकी आँख उठ आई। सुनकर दुःख हुआ। हमारा दुर्भाग्य!

खूब किया जो आपने नोट दिया। क्षमा माँगनेकी क्या जरूरत। आप जिस समाजमे है उसकी सी भी तो कुछ करना चाहिए।

जब वह लेख "आर्यमित्र" न छापेगा तब देखा जायगा।

हमारे पूर्व पत्रका विस्तृत उत्तर, जो कोई आपकी सामाजिक हानि न हो तो, शीघ्र भेजिएगा। इस दफे हम अपने अभियोक्ताओको सहजमे नहीं छोड़ना चाहते। अतएव ८ अक्टोबरके आर्यमित्रसे लेकर आगे जो कुछ हमारे विरुद्ध उसमे निकले कृपा करके पूरा पत्र भेजते जाइए। इतनी चीजे और भी हमे भेजिए। १—फाल्गुनका परोपकारी, २—शिक्षामञ्जरी ३—बी० एन० शर्माकी और किताबे जो आपके पास हों, ४—१६ जूनका आर्यमित्र जिसमे बी० एन० ने आपकी आलोचनाका जवाब दिया है, ५—बी० एन० की अपील, ६—पं० बाबूराम शर्माकी किताब (रामायणकी भूमिका या और जो नाम हो)।

इस कष्टको क्षमा कीजिएगा।

विनीत—

महावीरप्रसाद

यदि ऐसा हो तो बहुत ही अच्छी बात है। इस दशामें इंडियन प्रेस या आर्यभास्कर प्रेसकी नौकरी करना अभीष्ट नहीं।

तज़करे हज़ारदास्ताँ वाला नोट हमने "ज़माने" मे उसका रिव्यू पढ़कर ही लिखा है।

पुस्तक हमने नही देखी।

विनीत
महावीरप्रसाद

[३८]

जूही, कानपुर
२७-१-९

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला। प्राचीन लिपिकी बात ज्ञात हुई। पं० भगवानदीन जी कहाँ है? लिखिए, उन्हे हम पत्र भेजे तो किस पते पर। हम नालिश करनेके ही इरादेसे शीघ्र घरसे लौट आये है। अनुवाद तैयार है। "वी प्रूफ" तैयार है। दो-चार दिन और ठहरे है। कृपा करके पण्डितजीको लिख दीजिये। जो कुछ करना हो शीघ्र करे।

भवदीय
म० प्र०

[३९]

जूही, कानपुर
१४-२-९

प्रणाम,

कृपाकार्ड मिला। आज बी० एन० शर्माजी यहाँ पधारे हैं। मुख्य-मुख्य पत्रोंमे क्षमा मागने जा रहे है। मसविदा ले लिया है। अब

"आर्यमित्र" वालोका शीघ्र फैसला हो जायगा। यह क्षमापत्र छपते ही शीघ्र नालिश कर देगे। अच्छी बात है ज्वालापुर पधारिए। ईश्वर आपको इस नये काममे साफल्य प्रदान करे। किसी समय हम भी वहाँ आपके दर्शनार्थ आनेकी चेष्टा करे गे। पं० गौरीदत्तके भाई आज कल काशीमे है। खेद है, सरस्वतीका सितम्बरवाला अंक कोई फालतू नहीं। स्वास्थ्य अभी हमारा पूर्ववत् चला जाता है। दया करके उस प्राचीन लिपिको लौटा दीजिए। अब-तक नही पढी गयी कब पढी जायगी। उसकी ज़रूरत क्यो पड़ी। और कुछ हमे भी सुनाइएगा।

भवदीय

म० प्र०

[४०]

जूही, कानपुर

२४–२–०९

प्रणाम,

उज्जैनसे भेजा हुआ पत्र आया। आपके जो-जो जीमे आता है लिखा करते है। यहाँ तक कि हमारी नीयत पर भी कब्ज़ा कर लेते है। हम जो हँसीकी भी कोई बात लिख देते है तो आपको "वेदना" होती है। वाह ! अच्छी आपकी वेदना है। आप अपने पत्रमे हमारे और हमारे लेख आदिके विषयमे जो लिखते या छापते है, उसे हम सुनते नहीं तो क्या करते है। सिर्फ देखकर ही नही रह जाते। याद होगा हमने तो खुद ही आपको लिखा था कि आप जो चाहिए लिखिए हम चुपचाप सुनेंगे। फिर आपको बुरा क्यो लगना चाहिए। हमारी तन्दुरुस्ती अभी तक खराब है। २ महीनेके लिए हम कहीं बाहर विश्राम करने जाना

चाहते हैं। ज्वालापुर पहुँचकर कोई ऐसी जगह हमारे लिए तजवीज कीजिए जहाँ हम एकान्तमे आरामसे सस्त्रीक रह सकें। प्राकृतिक दृश्य अच्छा हो। भ्रमण करनेके लिए सड़कें या साफ़ रास्ते हों। खाने-पीने का सामान सब मिलता हो। रहनेके लिए भी जगह आरामकी हो। ज्वालापुर ही मे अपने पास रखनेकी चेष्टा न कीजिएगा। हमारे स्वास्थ्यका ख्याल करके कोई अच्छा स्थान दूर हो या निकट, तजवीज़ कीजिएगा। फोटो ओझाजीसे लेकर जरूर लौटा दीजिएगा। बी० एन० जीकी क्षमा प्रार्थना 'भारतमित्र'मे छप गई। 'आर्यमित्र'ने अभी नही छापा। पं०भगवानदीनने आर्यमित्रमे आर्य्यमित्रवालोकी तरफसे भी क्षमा-प्रार्थनाका मजमून भेजा है। मसविदा ठीक न था। इससे हमने दूसरा भेजा है। उज्जयिनीका हाल पढ़कर हमारे भी मनकी अजब हालत हुई। हम तो उज्जैनके बहुत पाससे निकल गये। पर वहाँ न जा सके अफ़सोस रहा।

ज्वालापुर पहुँचकर पत्र भेजिएगा।

भवदीय

म० प्र०

[४१]

जूही, कानपुर

२८—३—०९

प्रणाम,

२५ का कृपा कार्ड मिला। ज्वालापुर पहुँचकर वहाँका हाल लिखिएगा। हम, यदि कोई विघ्न न हुआ तो ५ एप्रिल सोमवारको सुबह ६ बजेके लगभग ज्वालापुर पहुँचेगे—सस्त्रीक बहुत करके एक दिनके लिए गौरीदत्त भी आवेंगे। और शायद हमारे मित्र बाबू सीताराम भी दो-एक दिनके

लिए आवे। बाबू सीतारामको ज्वालापुरके पोस्टमास्टर और स्वामी स्वरूपानन्द जानते हैं। ठहरनेका प्रबन्ध कर रखिएगा। स्थायी प्रबन्ध वहाँ आकर करेंगे।

भवदीय
म० प्र०

[४२]

जूही, कानपुर
१७-५-०९

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। १३ ता० की शामको यहाँ आ गये। स्वास्थ्य वैसा ही है। कलसे जल-चिकित्सा शुरू की है। मन्ना मजेमे हैं। यदि आपका कुछ काम निकले तो विद्यालय देखने आदिका हाल आप अपने पत्रमे दे सकते है। श्लोक भी आप दे सकते है। कोई बात बढ़ाकर न लिखी जाय। पहले ही पहल दो अंक एक साथ निकालना अच्छा नहीं लगता। प्रबन्धकी त्रुटि जाहिर करता है। वैशाखसे न सही जेठसे ही। कौन बड़ा अन्तर है। यो आपकी इच्छा। पूने वालोका पता ढूढ़ेंगे। मिलने पर लिखेंगे। उस श्लोकमे और भी कई पाठान्तर हो सकते है यथा—

१—निशम्यतां लेखललाममालिका

सञ्चय

२—प्रकाशने यस्य विशेषनिश्चयः

येन कृतोऽतिनिश्चयः

येन कृतो विनिश्चयः

यदि दूसरी लाइनसे "विशेष" शब्द निकाल डाला जाय तो तीसरी लाइन इस तरह हो सकती है:—

३—गृहीतसद्धर्म्मविशेष-सञ्चयः :—

समूह

विचार

४—चकास्ति सोऽयं भुवि भारतोदयः

विभाति सोऽयं

स शोभतेऽसौ

इनमेसे जो पाठ आपको अच्छा लगे रख लिजिए।

भवदीय
म० प्र०

[४३]

जूही, कानपुर
१—६—०९

प्रणाम,

भारतोदय अच्छा निकला। हमारी बड़ी तारीफ़ आपने कर दी। उसके हम मुस्तहक नही। बीमारीके विषयमे इतना न लिखना था। आप शायद देहलीका जलसा देखने गये है। वहाॅ भी, सुनते है, मारपीट हुई है। झालरापाटनसे पत्र आया है। पर उस बातका जिक्र नही। शायद उतना वेतन देना उन्हें मंजूर नही। याद दिलाना हम मुनासिब नही समझते। कविता-कलापके कुछ चित्र अभी तक तैयार नही हुए। इसीसे निकलनेमे देरी हो रही है। कल घर (दौलतपुर) जानेका विचार है। महीना-पन्द्रह दिन वही रहेगे। स्वास्थ्यका वही हाल है। यहाॅ फिर ज्वर आ गया। इससे और भी कमज़ोर हो गये है। भारतोदयके पहले अंककी एक-एक प्रति नमूनेकी इन लोगोको भी भेज दीजिएगा—

१—पं० श्यामबिहारी मिश्र, २—बा० श्यामसुन्दरदास, ३—कामता-प्रसाद गुरु, ४—बा० मैथिलीशरण गुप्त, ५—पं० गौरीनारायण मिश्र।

भवदीय
म० प्र०

[४४]

जूही, कानपुर
९—८—०९

प्रिय मित्र,

५ ता० का पत्र मिला। शिमलेसे भेजे गये आपके पत्रका उत्तर दे चुके है। चक्करमें डालनेवाले चित्रका उत्तर ठीक है। इस विषयकी हज़ारो चिट्ठियाँ हमारे पास आ चुकी है। नाकों दम है। अब यह प्रबन्ध आगे न चल सकेगा। वर्षा-विषयक दोहे एक नवीन कविके हैं। **स्वर्गसहोदर** सचमुच ही उत्तम कविता है। कई लोगोने तारीफ़ की है। सूरश्यामवाले पदके विषयमे फिर कभी पूछेंगे। अभी हम चक्करमें पड़ने वालोंके उत्तरसे घबराये हुए हैं। प्रतिबिम्बवाले लेखकी अशुद्धियोंके कारण हम लज्जित है। हमने गत २ महीने कुछ काम नहीं किया। 'सरस्वती' निकल रही है, यही गनीमत है। दौरेसे पत्र भेजते रहिएगा। हो सके तो एक-आध लेख भी भेजिएगा। बड़ी जरूरत है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४५]

जूही, कानपुर
१४—१०—०९

प्रियवर,

कृपा-कार्ड मिला। सरस्वतीमे "खूब" की सामग्री तो अब रामका नाम ही रहता है। यह आपकी कृपा है, जो उसे वैसा समझते है। आपके डेपुटेशनको खूब कामयाबी हुई; सुनकर हम बहुत प्रसन्न हुए। औरोंको हसद हुआ है। स्वास्थ्य ठीक नहीं। जनवरीसे विश्राम करेंगे।

'सरस्वती'को किसी औरको सौपेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४६]

जूही, कानपुर
१६—१०—०९

प्रिय मित्र,

प्रणाम, आपका १४ तारीखका तार आज १६ को मिला। इसके पहले ही हम आपके कार्डका उत्तर दे चुके है। पहुँचा होगा। इसीसे आपके तारका उत्तर तारसे नही देते। आपकी समवेदना और सहानुभूतिके लिए अनेकानेक धन्यवाद। आपकी इस कृपाने हमारे मानसिक और शारीरिक कष्टोको बहुत कुछ कम कर दिया है। जो अपने होते हैं वही आपत्तिमे साथ देते है। वही आत्मीय जनोके दुःखको अपना समझते हैं। आप इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। ज्वर तो हमारा जाता रहा है। नींदकी शिकायत बनी हुई है। जनवरीसे पूर्व विश्राम करनेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४७]

जूही, कानपुर
३०—१०—०९

प्रणाम,

रावलपिण्डीसे भेजा हुआ कृपा-काड मिला। आशा है अब आप ज्वालापुर लौट आये होगे। तबीअत हमारी वैसी ही घसपस चली जाती है। कृपा करके अब कभी आप हमारे शिक्षासरोज और दूसरी रीडर्सको किसी ऐसे सज्जनको न दीजिएगा जो पाठ्य-पुस्तकें बनाना चाहता हो। वे

पुस्तकें बाकायदा प्रकाशित नहीं हुईं। बाबू भवानीप्रसादने उनकी कई कविताएँ अपनी पुस्तकोमे रख दी हैं। इस बातको आप भी जानते होंगे।

आर्य्यभाषा पाठावली प्रथम भागकी कापी हमारे पास आई है। उसमे आपके किये हुए संशोधन है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४८]

जूही, कानपुर
११—११—०९

प्रणाम

कृपा-पत्र मिला। लाला भवानीप्रसादका पत्र भी उसके साथ मिला। आपके वे आन्तरिक मित्र है। आप उनके कामको "कविता-चुराना" कह सकते हैं; हम नही। कविका नाम देने पर चोरीका इलजाम नही लगाया जा सकता। इच्छा-विरुद्ध काम करनेसे जबरदस्ती अलबत्ते कही जा-सकती है। खैर, कुछ भी हो। हमने मुख्याधिष्ठाताजीको लिख दिया है कि जो कविताएँ लाला भवानीप्रसादने रक्खी है रहने दी जायँ। पर इण्डियन प्रेसकी रीडरोसे चित्र न नकल किये जायँ।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[४९]

जूही, कानपुर
९—३—१०

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। तबीअत कुछ अच्छी होने लगी थी कि फिर एकाएक खराब हो गई। एक हफ्तेसे बहुत कम नींद आई है। कारण ज्ञात नही, प्रूफ वगैरह देखते रहे है। शायद इसीसे हो। क्षमा कीजिए।

हम ज्वालापुर आने योग्य नहीं। यदि तबीअत अधिक खराब न हो गई तो १८ मार्चको दौलतपुर जानेका विचार है। वहाँ महीना-पन्द्रह रोज़ चुपचाप पड़े रहेंगे। बाद कानपुर आवेंगे। कविरत्नजीने दर्शन नहीं दिये। शिक्षाकी एक कापी प्रयागसे आपके पास आवेगी। वे चाहते हैं कि किसी अखबारमे आप उसकी बाबत कुछ लिख भेजे।

भवदीय

म० प्र० द्वि०

[५०]

कानपुर

१६–३–१०

प्रणाम,

आपका भेजा एक फ़ार्म और एक पेज पढ़ा। मुँहतोड़ जवाब है। भारतोदय आने पर उसे भी पढ़ूँगा। हस्तपत्रको मैंने पढ़ा, सख़्त वाक्यो पर निशान लगाया। फिर उन्हे रायसाहबको सुनाया। उनकी रायमे पकड़ की कोई बात नहीं। पर बेहतर होगा, अगले एडिशनमे अधिक सख़्त बातें कुछ नरम कर दी जायँ। हस्त-पुस्तक लौटाता हूँ। राय देवीप्रसादकी राय उसकी पीठ पर देखिये। कल आपकी हस्त-पुस्तक और प्रूफ़ पढ़ा। दो-एक अखबार भी पढ़े। इतने हीसे दिमाग़मे विशेष ख़राबी पैदा हो गयी। कल रातको बिलकुल ही पलक नहीं लगी। मेरा तो यह हाल है। पं० देवी-प्रसाद 'सरस्वती'मे लिखने जाते हैं कि मैं अच्छा हो गया। वे शायद आपके मेलेमें आवें। उन्हीको मेरा प्रतिनिधि समझिए। पत्र आपका फाड़ डाला।

भवदीय

म० प्र० द्वि०

[५१]

जूही, कानपुर
२७—५—१०

प्रणाम,

कृपा-पत्र मिला। कृतार्थ किया। तबीअत मेरी अभी तक सुधरी नहीं। कुछ आराम जरूर है, पर इतना नही कि लिख-पढ़ सकूँ। इस कारण अभी 'सरस्वती'के विषयमे कुछ नही कह सकता। १ जूनको २ महीनेके लिए दौलतपुर जानेका विचार है। वहाँ भी यही करना होगा। इस हफ्तेका "भारतोदय" अवश्य मनोरञ्जक है कुछ पढ़ लिया। बाकीको भी पढ़ूँगा। "शिक्षा" की समालोचनाके लिए धन्यवाद। खूब है। पढ़कर चित्त प्रसन्न हुआ। पर आपका माफी माँगना अनुचित हुआ। स्पेन्सर उस शिक्षाको शिक्षा कहते है जिससे जीवन अच्छी तरह सार्थक हो सके। तदनुसार उनकी रायमे (मेरीमे नही) संस्कृत पढ़नेकी तादृश जरूरत नहीं।

स्पेन्सरने धर्म, कर्म्म, आर्य्यता, अनार्य्यताके खयालसे नही, किन्तु अपने किये हुए शिक्षाके लक्षणको ध्यानमे रखकर वैसा लिखा है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[५२]

दौलतपुर
२४—६—१०

प्रणाम,

कृपा-कार्ड मिला। हाँ, शायद ग़ालिबसे भी ज्यादह। प्रायः आम ही खाते है। आमो ही की फिक्रमे रहते है। और आम ही ढूँढ़ा करते हैं।

इससे हमारा कब्ज़ रफा रहता है और नींद भी काफी लगती है। दिनको भी कुछ देर सो जाते है। और रातको भी ४–५ घण्टे। स्वास्थ्य पहलेसे बहुत अच्छा है। "सतसई-संहार" मे सुधादीधिति पर आपकी आलोचनाने मारटिनी हेनरीका काम किया है। . .. ..

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[५३]

दौलतपुर
१–७–१०

प्रणाम,

२७ का कार्ड पहुँचा। विद्यावारिधिजीके मित्र पं० नन्दकिशोर शर्मा वाणीभूषण परसो मिलने आये थे, एक मित्रके साथ। उनका गॉव हमारे से १४ मील पर है। संहारके कारण आप पर सख़्त नाराज़ थे।

हमने उनका समाधान कर दिया। सब तरहसे आपको निर्दोष साबित कर दिया।

भवदीय
म० प्र०

[५४]

जूही, कानपुर
२१–१०–१०

प्रणाम,

१५ ता० का कृपा-कार्ड मिला। नाशङ्कसे विलज्ज सेवामे आपकी कौन भूल है ? छापेखानेके भूतोने भूलकी होगी। उसके लिए क्या चिन्ता है ? सम्मेलनमे मैं नही गया। रहा तो फीका ही पर सभाको रुपया कुछ मिल गया।

अच्छा हुआ। मुझे आज दिनसे ज्वर, कफ, खाँसी आदि तंग कर रहे है। आज कुछ आराम है। काशीवासकी इच्छा हो तो माकूल तनख्वाह पर सभाके कोषका काम दिलवा दे।

भवदीय
म० प्र०

[५५]

जूही, कानपुर
३—११—१०

प्रणाम,

आपको एक बात कल लिखना भूल गये। जनवरीसे 'सरस्वती'का पाश फिर हमारे गलेमे कुछ समयके लिए पडेगा। हमारी तबीअत ठीक नही, लिख-पढ नही सकते। आप हमारे संकटको कम कीजिए। दो-एक लेख भेजिए, शीघ्र। हीलाहवाला न कीजिएगा। "यावद्गत न च जहाति"। यही समय सहायताका है। कालिदासकी कविताकी खूबियाँ दिखलाइए। लिखिए क्यो उसकी इतनी प्रशंसा है। सोदाहरण। उनकी उपमाओ पर कुछ लिखिए। या जो आपके जीमे आवे।

भवदीय
म० प्र०

श्री मैथिलीशरण गुप्त

श्री मैथिलीशरण गुप्तजीका जन्म झांसी ज़िलेके चिरगाँव नामक कसबेमें संवत् १९४३ में हुआ। इनके पिताका नाम लाला रामशरण गुप्त था। गुप्तजीने सम्पन्न घरमें जन्म लिया। यही नहीं, इनका परिवार संस्कृत रुचिका भी था। इनके पिता वैष्णव भक्त और कवि भी थे।

श्री मैथिलीशरण गुप्तजी आज राष्ट्रकविके रूपमे प्रख्यात है। राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीने उन्हे राज्यपरिषद्का सदस्य भी बनाया है। "भारतभारती", "साकेत", "यशोधरा" आदि अनेक उनके प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ है। इस युगमे हिन्दीके सबसे प्रसिद्ध कवि यही हैं।

श्री मैथिलीशरण गुप्तजीका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी-जीसे बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। द्विवेदीजी उनके गुरु थे। गुरु शिष्यका पत्र-व्यवहार भी बहुत हुआ था। इन पत्रोंका साहित्यिक महत्त्व भी बहुत है। गुप्तजीके पास द्विवेदीजीके कुछ पत्रोंका संग्रह भी था, जिसे उन्होंने 'भारतकला भवन' काशी, को दे दिया। इन्हीं पत्रोमेंसे छाँटकर महत्त्वपूर्ण पत्र यहाँ दिये जा रहे हैं।

[भारत कला-भवन, का० हि० वि० के सौजन्यसे]

[५६]

जूही, कानपुर
१–१–०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

कृपापत्र मिला। कविता-कलापकी कापी हम ३–४ दिनमें इण्डियन प्रेसको भेज देंगे। आपकी शेष कविताएं जब हो चुकेंगी, तब उन्हे भी पीछेसे भेज देंगे। रविवर्माके †गंगावतरण और रामचन्द्रके ❀गंगावतरण पर भी १०–१० पद्य आप लिख दें तो इन चित्रोका उद्धार हो जाय। हम अपना एक चित्र यहाँ बनवाकर छपने भेजेंगे। अभी निश्चय नही है।

'द्रौपदी-दुकूल' फरवरीमे निकलेगा।

भवदीय
म० प्र०

[५७]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
१८–१–०९

प्रियवर बाबू मै० श०,

हमारे बहनोईका ६ फरवरीको शरीर छूट गया। वही हमारे घर पर रहते थे। अब उसे हम उजाड़ समझते है। इसीसे यहा आना पड़ा। ८–१० दिनमे कानपुर लौटेंगे। गर्विता नाम बुरा नही। सगर्वासे अच्छा है। कविता भी मजेकी है। ज़रा सरलताका ध्यान रक्खा कीजिए जिसमे पढते ही मतलब समझमे आ जाय। कविता-कलाप छपने गया।

---

† शंकरकी जटाओंसे। ❀ धुरन्धरकृत।

अवशिष्ट कविताएं यथासम्भव शीघ्र भेजिए। आपकी कविताओंके प्रूफ हम आपको भेजेंगे। उन्हींमे जो संशोधन चाहिए कर दीजिएगा। केशो की कथाकी. समालोचना पं० श्यामनाथने भेजी है। अच्छी है छपेगी।

भवदीय

म० प्र०

[५८]

जूही, कानपुर

२५-१-०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

मा० कृष्ण ७ का पत्र मिला। "गर्विता" मे स्वामी मेरे वचन कर दिया। जिन २५ कविताओंके नाम आपने लिखे वे सब कविता-कलापमे छपेंगी। सीताका पृथ्वी-प्रवेश और रामचन्द्रका गंगावतरण भेज दीजिए। औरो पर (गगावतरण और महानन्दा पर) जी चाहे लिखिए जी चाहे न लिखिए। चित्रोंके नीचेके पद्य अलग-अलग काग़जके टुकड़ो पर लिखकर भेज दीजिए। महानन्दा कल्पित नाम है। जो भाव चित्रसे निकलता हो वही ठीक है। चित्र-चर्चा उत्तम विषय है। उस पर लिखिएगा। एप्रिलमे एक रंगीन चित्र निकलेगा (कर्ण-कुन्ती), कविताके लिए उसे अगले महीने भेजेंगे।

भवदीय

म० प्र०

[५९]

दौलतपुर

११-३-०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण,

कार्ड मिला। कुमार-सम्भवसारका अनुवाद उर्दूमे नही हुआ, जहाँ

तक हम जानते हैं। किसीको अनुमति भी हमने नहीं दी और न देनेकी इच्छा है। कल या परसो आपको एक पत्र भेज चुके हैं।

· भवदीय
महावीरप्रसाद

[६०]

इलाहाबाद
२२–६–१९०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण

दो रोजके लिए हम यहाँ आये है। एक आध दिन मे दौलतपुर, भोजपुर, रायबरेली वापस जायेंगे। तोतेवाली कविता यहाँ लोगोको बहुत पसन्द आई। प्रेसके मालिक उसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। परन्तु ज़माना नाजुक बड़ा है। लेखोका कुछका कुछ अर्थ लगाया जाता है। इससे निश्चय यह हुआ कि यह कविता अभी कुछ दिन न प्रकाशित की जाय। आशा है आप इससे खिन्न या अप्रसन्न न होगे।

"उत्तरासे अभिमन्युकी विदा" कविताके अन्तमे आपने जो अभिवचन दिया था उसे अब शीघ्र पूर्ण कीजिए। अगस्तकी सर०मे उत्तरा और अभिमन्युका रंगीन चित्र निकलेगा। चक्रव्यूहके भीतर युद्ध करके अभिमन्यु मारे गये हैं। उनके शवके पास बैठी हुई उत्तरा विलाप कर रही है। चित्र कलकत्ते गया है। आने पर भेजा जायगा हमने भी नही देखा। प्रेसवालोंसे पूछकर चित्रकी स्थिति आदिका वर्णन लिख भेजेंगे। तब तक आप लिखना शुरू कीजिए। व्यूह-भेदन और युद्धमें अभिमन्युकी बहादुरीका कुछ हाल लिखकर उत्तराका विलाप लिखिए। विलाप हीकी प्रधानता रहे। खूब कारुणिक बनाइएगा।

छोटे लड़कोंके लिए दो एक सचित्र कविता-पुस्तक छोटी-छोटी इण्डियन

प्रेसके मालिक लिखाना चाहते हैं। उनके नमूने विलायतसे मँगाये गये हैं। उसी तरहकी हिन्दीमें लिखना है। क्या १००–२०० लाइनें आप भी लिख सकेंगे? पुरस्कार देनेको कहते हैं। हमारी समझमें लेनेमें कुछ हर्ज नहीं। विलायतमे बड़े-बड़े लोग लेते हैं। योंही आप लिखना चाहें तो योंही लिख दीजिए। पं० नाथूरामने लिखना स्वीकार किया था। पर अबतक कुछ नहीं लिखा।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

[६१]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
२८–६–०९

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

प्रयागसे हम लौट आये। वहाँसे हमने एक पत्र आपको भेजा है। पहुँचा होगा। 'पञ्जरबद्ध कीर' अभी कुछ दिन न छापेंगे। यही फैसला हुआ है। न छापना ही अच्छा है। "हरिणोक्ति" आपने अच्छी लिखी। बड़ा अच्छा अवसरोपयोगी पद्य है। हम तद्गत उक्तिको यथार्थ समझते हैं। कभी जीमे आवे तो ऐसी ही दस-पाँच अन्योक्तियाँ आप भी लिखिए— पर नई नई। अभी यहाँ गाँवमे कोई एक महीना रहनेका विचार है। आपकी सलाह बहुत अच्छी है।

भदैनीके रामजीसहायको नहीं जानते। आप इन अपरिचित लोगोंके कहने पर ध्यान न दीजिए। कविता-कलापको छापकर कुछ दिन बिकने दीजिए। उसकी माग आप हीकी कविताके कारण होगी। बड़ी विशाल पुस्तक निकलेगी। १०—१५ दिनमे तैयार हो जायगी। दाम कोई २॥) होंगे। आपकी कविता अलग छपनेसे उसकी माग कम हो जायगी। प्रेस

वालोको घाटा होगा। उन्होने बहुत रुपया उसके छापनेमे खर्च किया है। तब तक आपकी दस पाच कविताएं और तैयार हो जायँगी। फिर हम उन सबको एकत्र पुस्तकाकार छापनेके लिए इडियन प्रेससे कहेगे। आप औरोके कहनेमे न आइए। 'भारत-मित्र'ने आपकी रत्नावली कविताको क्लिष्ट बताया है। उसका नोट आपने देखा ही होगा। "स्वर्ग-सहोदर" की हम राह देख रहे है। सरल होनी चाहिए।

भवदीय
म० प्र०

[६२]

जूही, कानपुर
१४—५—१०

प्रियवर बाबू मैथलीशरण,

कृपा-पत्र मिला। आपकी आखोका हाल सुनकर दुख हुआ। उनकी रक्षाका खूब ख्याल रखिये। आशा है अब अच्छी हो गई होगी।

राजा रामपालसिंह हमारे ही ज़िलेके है। कुछ दिनोतक हम और वे रायबरेलीके एक ही स्कूलमे पढ़ते थे। उनका चरित्र भी हमने उनके एक मित्र राजाके कहनेसे छापा है। पर एक दफ़े पहले हमने एक पत्र लिखा था। उसकी पहुँच तक उन्होने न लिखी। उनके प्राइवेट सेक्रेटरी तिलकसिंहने—एक लम्बा लेख हमारे पास छपने भेजा था। अच्छा न था। इससे हमने उसे नहीं छापा। इसीसे शायद राजा और राजसेवक दोनो अप्रसन्न हो गये। यह पत्र 'क्षत्रिय मित्र'के एडीटरने या तो लिखा है या तिलकसिंहने—राजासाहबके हाथका लिखा हुआ नही जान पड़ता। आप जो मुनासिब समझें उत्तर दे दें। या चुप रहे।

खड्गविलास प्रेस वालोंने हमे उस विषयमे कुछ नहीं लिखा। कल 'रंगमे भंग' पुस्तक एक पंजाबी महात्माको हमने सुनाई। सुनकर बड़े ही प्रसन्न हुए।

संयोगिनी और वियोगिनी पर कविता करना उचित नही। 'सरस्वती'मे उनपर कविता छपना और भी अनुचित है।

गोवर्धन-धारणपर लिखिए। हमने कई दफे इण्डियन प्रेससे कई चित्र बनानेके लिए कहा। कोई शकुन्तलाके सम्बन्धमे था, कोई था कुमार-सम्भवमे वर्णित पार्वतीके विषयमे। पर नहीं बन सके। उस समय महाभारतके चित्रोकी धूम थी। आप उनको लिखिए। अब शायद फुरसत हो और आपकी सूचनाके अनुसार चित्र बन सकें।

बुन्देलखण्डकी घटनाओके आलम्ब पर अवश्य कविता लिखिए। दूर राजपूताने जानेकी जरूरत नहीं। कभी फुरसत मिले तो सीताका वनगमन, भरतमिलाप, अशोक-वनमे सीता और रावणकी बातचीत आदि विषयो पर भी कुछ लिख डालिएगा।

तबीअत हमारी पहलेसे कुछ अच्छी है। ३ जून तक दौलतपुर जानेका विचार है—२ महीनेके लिए।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

नोट—

१ जूनको मै बहुत करके अपने गॉव चला जाऊँगा। अजमेरीको लिख दीजिए ३१ मईके बाद यहॉ आनेका कष्ट न उठावें।

इसे देख लिया। ध्यानसे। यत्र-तत्र पेंसलके निशान और सूचनाएँ देख जाइए। उत्तम काव्य है। उत्तरार्द्ध और पूर्वार्द्ध करनेकी अपेक्षा ७ सर्गोंमे विभक्त करना अच्छा हुआ। एक खासा काव्य हो गया। इसमे कहीं-कही पर क्लिष्टता खटकती है। यथासम्भव उसे दूर करनेका यत्न कीजिएगा। नही तो टिप्पणियॉ दे दीजिएगा।

'मेघनाद-वध' बड़ा ही ओजस्वी काव्य है। १० सर्गसे कममे है। याद तो ऐसा ही पड़ता है। गीतिमे बंगलाके प्रसिद्ध कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरने गाने योग्य कविता की है।•उसमे ६ राग है—पीलू, जागड़ा, मलार, धनाश्री आदि। विषय अनेक है। इन्होने तो नाट्य-नियमोके अनुसार इसकी रचना की है। औरोकी बात मालूम नहीं।

वैदेहीका वनवास आदि फिर कभी खूब फुरसतके वक्त लिखिएगा। अभी आप और जो कुछ चाहे लिखें।

राजपूतानेकी घटना पर भी काव्य लिखिए। एक बातका विचार रखिएगा। भाषा सरल हो। भाव सार्वजनीन और सार्वकालिक हो। सब देशोके सब मनुष्योके मनोविकार प्रायः एक-से होते है। काव्य ऐसा होना चाहिए जो सबके मनोविकारोको उत्तेजित करे—देश-कालसे मर्यादा बद्ध न हो। ऐसी ही कविता अमर होती है।

शुभेच्छु

२२–५–१० म० प्र० द्वि०

[६२]

जूही, कानपुर

१–६–१०

प्रियवर बाबू मै० श० गुप्त,

कलका कार्ड मिला। चौथा चरण अनुचित है। तीसरेका उत्तरार्ध भी खटकता है। 'दैया' शब्द भी साधु भाषामे अच्छा नही लगता। इस पद्य ही को जाने दीजिए। आज एक काम लग गया। कल शामकी गाड़ीसे प्रस्थान है।

भवदीय

म० प्र० द्वि०

[६४]

जूही, कानपुर
२७-३-११

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

राजा साहबकी चिठ्ठी पढ़ी। मुसद्दस हमारे पास था। क्यों उन्हें कष्ट दिया। जरूर ऐसा काव्य लिखिए। पर तबीअतको संभालकर। आपने राजा साहबका जो पत्र भेजा है, उसका जिक्र न करके हम भी राजा साहबको धन्यवाद देंगे—उनके ऐसे साधु-भावपर। मुसद्दसको सुनिए, उसीसे (आपको) सामग्री मिल जायगी।

४ एप्रिलको, हम दो महीनेके लिए गाँव जायँगे।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६५]

जूही, कानपुर
३०-३-११

प्रिय बाबू मैथिलीशरणजी,

सुकवि-सङ्कीर्तन मईमें छपेगा। स्वर्गीय-संगीतका उठान अच्छा है। लिखिए। पूरा कर दीजिए। भेजा हुआ अंश जूनमें निकलेगा। ग्राम्य जीवन भी लिखिएगा। उसके जीवनको अधिक सचेतन करनेकी चेष्टा कीजिएगा।

राजा साहबका पत्र अपने पत्रोंके ढेरमें हमने डाल दिया है। ढूँढ़ा, नहीं मिला। एक एक चिठ्ठी देखनेसे उसका पता लग सकेगा। जैसा कहिए किया जाय। राजा साहबकी सुरुचिकी हमने प्रशंसा की है। यह भी लिख दिया है कि मुसद्दसके सदृश कविता इस समय छापेगा कौन और

लेखककी रक्षा भी कौन करेगा। पं० गिरिधर शर्माकी कविताएँ आपने जल्दीमे देखीं। दो घंटे हमारे खर्च हुए। फिर भी मनकी नही।

दवाके बिगड़ जानेका दुःख है। अब कष्ट न उठाइएगा। फिर देखा जायगा।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६६]

दौलतपुर
१९-४-११

आशीष,

१४ ता० का पत्र मिला। शकुन्तलावाली कविता छपनेके लिए भेज दी। उस पद्यमे "वंश-व्याधियों" पाठ ठीक रक्खा है।

मुसद्दसको किसी मौलवीसे ज़रूर सुनिए और समझिए। हरिगीतिका छन्द बुरा नही। कविता खूब ओजस्विनी और यथास्थान कारुणिक होनी चाहिए। सँभल-सँभल लिखिएगा। देरी हो तो हर्ज नही। नमूनेके लिए थोड़ी 'सरस्वती'मे पहले छापेंगे।

बुद्धको आपहीने अवतार माना है। वेदोको भी आपहीने ईश्वर कृत मान रक्खा है। ईश्वरके यहाँसे इन विषयोमे कोई दस्तावेज़ हम लोगोके पास नहीं। जब यज्ञोमे पशुहिंसा अधिक होने लगी तब समझदार आदमी घबराये। वे सुधारकी बातें सोचने लगे। ऐसोमे बुद्ध सबसे बढ़कर निकले। उन्हे अपने काममे कामयाबी हुई। इससे वे अवतार मान लिये गये। पशुहिंसा कम हो गई। परन्तु पशुहिंसा वेदोक्त है। और वेद ईश्वर कृत माने गये है। अतएव उनकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रखनेके लिए शंकराचार्यको बौद्धमतका खण्डन करना पड़ा।

दत्तका इतिहास सभासे मँगा लीजिए। उससे पुरानी बातें बहुत कुछ मालूम हो जायँगी। और कोई पुस्तक हिन्दीमे नहीं। राजस्थानके आदिमे भी कुछ हाल है।

सुलोचनावाली कविताकी हस्तलिखित कापी यहाँ हमारे पास नही। नहीं कह सकते क्यो हमने परिवर्तन किया। छन्दोभंग नहीं है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६७]

दौलतपुर
२७–८

आशीष,

'भारत-भारती'का कोई अंश (२०–२५ पद्य) सरस्वतीमे छपनेके लिए भेजिए।

३ सितम्बर तक कानपुर जानेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[६८]

उत्तरमे निवेदन

यहा हमारे पास कोई पुस्तक नही जिससे पारसियोके आनेका समय बतावें। कैफ़ीका कहना ठीक है। मुसलमानोने पारसियोपर अत्याचार आरम्भ किया—मरो या मुसलमान बनो। बहुत थोड़ेसे पारसी अत्याचार से पीड़ित होकर हिन्दुस्तानको भाग आये। उन्हे शायद गुजरातके किसी हिन्दू राजाने शरण दी। ३ सित० को कानपुर जानेका विचार है। वहाँ किताबे देखकर सही-सही हाल लिख सकेंगे।

२८–८–१२ म० प्र० द्वि०

[६६]

जूही, कानपुर
८–९–१२

आशीष,

'भारत-भारती'की समाप्तिका समाचार सुनकर बड़ी खुशी हुई। फ़ुरसतमे दुहरा-तिहरा कर छपाइएगा। फ़ारसमे पहले पारसियोका राज्य था। तीसरे ईसदीगिर्द राजाके समयमे अरब लोगोने उस पर चढाई की और उनके मन्दिर आदि तोड़-फोड़ डाले। मरो या मुसलमान हो—यही शर्त थी। लाखो पारसी मारे गये। करोड़ो मुसलमान हो गये। हजार पॉच सौ बच रहे। हजारो भारतकी तरफ़ भागे। करोडो मुसलमानोंने पीछा किया। भारत पहुॅचते-पहुॅचते बहुत थोड़े रह गये। यहा वे खंभात की खाड़ीमे ड्यू (Deu) नामके बन्दरगाहमे उतरे। १६ वर्ष वहा रहकर वे संजान नामक नगरको ७१७ ई० के लगभग आये। वहॉ उस समय यादव राना नामक हिन्दू राजा था। उससे रक्षाकी प्रार्थना की। उसने प्रार्थना स्वीकार की और संजानमे पारसियोको बसने दिया। संजान इस समय उजाड़ है।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[७०]

बरेली
२९–९–१२

आशीष,

आपकी तबीअतका हाल सुनकर दुःख हुआ। ईश्वर कुछ मुझसे ऐसा रूठा है कि वह मेरे सहायक मित्रोको भी नीरोग नहीं रहने देता। मेरा

चित्त बहुत विषएण था। इससे ४–५ दिनके लिए बाहर घूमने निकल आया हूँ। पहली अक्टोबर तक कान्पुर लौट जाऊँगा।

विनयकी कविता आप सीधे प्रेसको भेज दीजिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्वि०

[७१]

जूही, कानपुर
२३–१०–१२

आशीष,

शुकलाल पाडेकी कविता मिली। आपने बड़ी कृपा की जो इसका संशोधन कर दिया। 'भारत-भारती'मे हेडिग्स हो तो सब कहीं हों। न हों तो कही नही। बेहतर तो यही है कि हेडिंग्स आप सर्वत्र कर दीजिए।

शुभैषी
म० प्र० द्वि०

[७२]

जूही, कानपुर
११–११–१२

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। चिठी मिली। वह मासिक पुस्तक भी मिल गई। बड़ी कृपा होगी, नया काव्य बनाकर भेजिए। जनवरीसे छापूँगा। प्रतिज्ञाबद्ध होना अच्छा नहीं। जनवरीमे उस काव्यका प्रथमाश छापकर उसी संख्यामे जो कुछ लिखना होगा, लिख दूँगा। नहीं जैसा कहिए, करूँ। सियारामशरण जीका काव्य भी भेजिएगा।

कल मुरादाबादके पं० ज्वालादत्त शर्मा आये थे। बडे काव्य-प्रेमी और रसिक हैं। आपकी कविताओंकी बड़ी प्रशंसा करते थे। अपने पिताके

सम्बन्धमे श्रीधरजीकी लिखी विशेषणावली छापनेके कारण मुझे बहुत फटकारा।

पण्डित रामजीलालने इण्डियन प्रेस छोड़ दिया। वहीं निजका छापाखाना किया है।

शुभैषी
म० प्र० द्वि०

[७३]

जूही, कानपुर
२७-११-१३

श्रीयुत मैथिलीशरणजी,

जयद्रथ-वधकी जिल्द-बँधी कापी मिली। बड़ी सुन्दर जिल्द है। जिल्दपर जो फूल या चक्र है उसे देखनेसे आपके मोनोग्राम (नामाक्षरो) का भ्रम होता है। कल एक कार्ड आपको भेज चुका हूँ।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[७४]

दौलतपुर
२१-१२-१३

आशीष,

१७ ता० का कार्ड मिला। बौद्ध-धर्मविषयक आपका अनुवाद अवश्य प्रकाशित करूँगा। उसके नीचे मैने अभी तो आपका ही नाम लिख दिया है। जो कल्पित नाम आप देना चाहे बताइए। मैं वही लिख दूँगा।

शुभाध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[७५]

दौलतपुर
२४—१२—१३

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पाञ्चाल पण्डिताकी कापी मिली। वे पद्य तो मेरे ही लिखे मालूम होते हैं। पर कब और कहाँ छप चुके है, याद नहीं। लाला देवराज को लिखता हूँ कि इस कवियित्रीके कान पकड़े।

७, ८ जनवरी तक कानपुर लौट जानेका विचार है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[७६]

जूही, कानपुर
३१—१०—१३

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

टालस्टायका वह अधूरा पत्र मेरी समझमे पत्रावलीमे रखने योग्य नही। तरुदत्तके फ्रेंच भाषाके पत्रका पता मुझे मालूम नही।

स्वामी रामतीर्थ नामक पुस्तकके प्रथम भागमे उनका कोई पत्र नही। इसीकी समालोचना 'सरस्वती'मे निकली है।

लाहौरमे एक महाशय औरगज़ेबके पत्रोका अनुवाद हिन्दीमे कर रहे है। उनका नाम और पता है :—हरिवल्लभशर्मा बी० ए०, मूलचन्दकी कोठी, अनारकली, लाहौर। सरस्वतीमे छपाने कहते है। मैने नमूनेका एक पत्र माँगा है। इन पत्रोमे दो-एक आपकी पत्रावली योग्य अवश्य होगे। मुझे मिले तो मै आपको भेज दूँगा। बेहतर होगा आप इनसे स्वयं पत्र-व्यवहार करें।

विवेकानन्दके जो पत्र पुस्तकाकार हिन्दीमे निकले है, उनमेसे एक आधको लीजिए। शायद पं० लक्ष्मीधरने उनका अनुवाद किया है। मेरे पास पुस्तक नहीं आई। पं० श्रीधर पाठककी कविताकी कल्लोलोसे 'मर्यादा' उमड़ रही है। हालकी संख्यामे तीन कविताएं निकली हैं। उनकी जैसी कविता होती है वैसी ही ये भी है। सरस्वतीका पद्य भाग अब बहुत ही कमजोर हो चला है। हमारी दौड़ सिर्फ़ आप तक है। आप न लिख सकें तो बा० सियारामशरण ही को तैयार कीजिए। हर महीने एक उनसे भिजवाइए। परसोसे मुझे जुकाम है। ज्वरांश हो रहा है। आशा है आपकी तबीअत अब सुधर चली होगी।

शुभैषी
म० प्र०

[७७]

जूही, कानपुर
१६–१–१४

प्रियवर मैथिलीशरणजी,

आशीष। बाबू वृन्दावनलालका पत्र पढ़ा। मुझे इतनी गालियाँ दीं; उससे मेरा क्या बिगड़ा? करने दीजिए समालोचना, देने दीजिए गालियाँ। उस भावी समालोचनाका उत्तर जनवरीकी सरस्वतीमे पहले ही निकल जायगा। "सभ्य समालोचक" कविता पढ़िएगा। आप एक हफ़्ते तक और काम बन्द कर दीजिए। अन्योक्तिपरक एक खूब चुटीली कविता लिखिए। उर्दू-मिश्रित भाषामे। उसमे इन लोगोंकी खबर लीजिए तो अच्छा हो।

आपके मित्रकी दोनों आख्यायिकाएँ छापनेके इरादेसे रख ली हैं। अवनीतलबद्धतिशील—वैसे ही रहने दिया है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

गोपनीय

उस गालीगलौजके लेखक हैं शिवसागर पाण्डे एम० ए०, एल-एल० बी०, म्यूरकालेजके एक अध्यापक। कानपुरके रहनेवाले २५ वर्षके विद्वान्। मेरे पूर्व मित्र जो मेरी बीमारीके समय मेरी जगह—सम्पादककी—माँगते थे।

[७८]

जूही, कानपुर
१७—२—१४

आशीष,

दक्षिण अफरीका, कनाडा और आस्ट्रेलियामे भारतीय प्रवासियों और निवासियोकी जो दुर्दशा हो रही है, आप जानते ही हैं। उस विषय पर दो एक कविताएँ लिखिए। समय-सूचकता बड़ा भारी गुण है। समयानुकूल कविताका बड़ा असर होता है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[७९]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
१८—४—१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

मै यहाँ कल आया। पैकेट, आपका भेजा हुआ, परसो कानपुर ही मे मिल गया था।

अहिल्याबाईका पत्र बहुत पसन्द आया। बड़े महत्त्वका है। यह तो और भी बड़ा होना चाहिए था। विचार-विस्तारके लिए बहुत जगह थी।

मईकी सर० मे छापूँगा । नीचे लिखे अनुसार उसमे शोधन करना चाहता हूँ । ठीक न हो तो आप कर दीजिए :—

१. पद्य २ पंक्तिया २–३ विख्यात वीरे करते जिससे विरोध होता किसे—

२. पद्य ३ चरण ३—दूँ आपको अब न जो शत साधुवाद ।

३. पद्य १३ चरण १—वीराग्रगण्य यह भी अब सोच लीजे ।

४. पद्य १५ चरण ४—फिर सोचिये किसलिए इतना अनर्थ ।

पद्य ५ में—है भूलते सुमति भी सब एक बार—यह खटकता है । कोई नियम नहीं कि सभी सुमतिवाले भूलें और एक ही दफ़े भूलें ।

पद्य ६—सैन्य शब्द पुलिग हो तो अच्छा ।

पद्य ६—डरना किस पापसे चाहिए ।

कविता छपने भेजता हूँ । संशोधन करना हो तो पद्योंका हवाला देकर लिख भेजिए । वही पत्र प्रेसको भेज दूँगा । व्यायोगका अनुवाद अच्छा है । सही है । पद्य भाग तो बहुत ही अच्छा है । आपने पद्यमे मूलका बड़ी हठतासे अनुसरण किया है । यह ठीक नही । उसके शब्दार्थ की परवाह न करके उसके भावोका ही अनुवाद होना चाहिए । वह भी बामुहाविरा हिन्दीमें । जितं जितं का आप जीते आप जीते—हिन्दीका मुहाविरा नही । गद्यकी हिन्दी इसी कारण बहुत क्लिष्ट हो गई है । मुनासिब समझिए तो गद्य भागका संशोधन कर दीजिए । दो ही चार घंटेका काम है । सरल बामुहाविरा हिन्दी कर देनेसे बड़ी अच्छी पुस्तक होती । मै सर०में छापूँगा । जितनी कापियाँ दरकार हों पुस्तकाकार ले लीजिएगा ।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[८०]

दौलतपुर

२७-४-१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

२३ का पत्र पहुँचा। अहिल्याबाईके पत्रमे इस प्रकार संशोधन कर दियाः—

पद्य ५—जो भूल हो उचित है उसका सुधार।

पद्य १५—तो सोचिए किसलिए इतना अनर्थ।

पद्य ६—सैन्य स्त्रीलिग ही रहने दिया।

पद्य ६—'पापको' भी रहने दिया।

पद्य २-३-१३ मे अपने किये सशोधन रहने दिये।

पद्य १५ मे 'तो' की जगह 'फिर' करना मेरी भूल थी। मेरा बुद्धि-वैकल्य अब दिन पर दिन बढ रहा है।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८१]

दौलतपुर

२५-७-१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

२२ का कार्ड और २३ का पत्र मिला। कविता और गीत पहुंचे, बड़ी कृपा की। धन्यवाद।

जायसवालजीकी जाति क्या है, यह बात पाटलिपुत्रके मालिकसे छिपी न थी। यदि वे ब्राह्मण ही चाहते थे तो जायसवालजीको पहले ही क्यो रक्खा। असल बात क्या है सो हम लोग नहीं जान सकते।

शिवाजी पर जो काव्य संस्कृतमे है उसका नाम शायद शिव-विजय है। बहुत वर्ष हुए तब पढ़ा था। मेरे संग्रहमे था। परन्तु जब वह लेख लिखने लगा, जिसका कि आपने हवाला दिया है, तब ढूँढ़ा तो न मिला। शायद कोई ले गया। मराठीवाली पुस्तक है। उसका पता कानपुर पहुँच-कर लिखूँगा।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[८२]

दौलतपुर
२९—७—१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी,

२५ का पत्र मिला। साहित्य-सम्बन्धी कवितामे अभिज्ञका अविज्ञ कर दिया। शकुन्तला कविताके हेडिंगके नीचे "जन्म और बाल्यकाल" लिख दिया।

कालिदास नामकी पुस्तकमे तो नही, पर शकुन्तलामे शायद आपके मतलबकी बातें मिलें। बहुत समय हुआ इसे पढ़े। ठीक याद नही। पर पुस्तक बहुत अच्छी है। जरूर मँगाकर पढ़िए। कविता लिखनेमे काम न आवे न सही। निर्भयभीमव्यायोग भेजनेकी अब जल्दी नही। सावकाश भेजिएगा। गद्य भाग ठीक हो जाने पर।

जायसवालजीकी लीला जानी जाने योग्य नहीं। *

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

---

* स्व० डॉ० के० पी० जायसवालसे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी-

[८३]

दौलतपुर
१३—८—१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

८ अगस्तके पाटलिपुत्रमें आपकी कविता पढ़ी। वहीं दूसरे कालममें बैरिस्टर साहबका* नोट पढ़ लीजिएगा। † ग्रन्थ मालाकी समालोचनासे मतलब है। शायद दूधके नाम पानी और अनुवादकर्त्ताकी धूलभरी बुद्धिका चरणोदक आपने भी पिया है। पिया हो तो पिलाने-वालेको पाटलिपुत्रके जजके सिपुर्द करके सजा दिलाइए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[८४]

जूही, कानपुर
१९—८—१४

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

२१ का कार्ड समय पर मिल गया था। लेख भी मिल गया। जिस महीनेकी 'सरस्वती'में कहिए उसी महीनेमें छापूँ।

जीका १९०३ से मतभेद था। यह मतभेद जायसवालजीके किसी लेखको लेकर था। मतभेद सम्बन्धी जायसवालजीका १९०३ का पत्र द्विवेदीजीके नागरी प्रचारिणी सभावाले संग्रहमें है, जिसे मैंने देखा है।

*के० पी० जायसवाल।

† प्रकाशन-संस्थाका नाम जानबूझकर हटा दिया गया है। मूल पत्रमें सुरक्षित है।

मौर्य्य विजयकी कापी भी मिल गई। थैंक्स।

आर्टका समानार्थकवाची शब्द संस्कृतमे मुझे ढूँढ़े नही मिलता। शिल्प, शिल्प-चातुर्य्य, कला, कलाकौशल, कारीगरी आदि कह सकते है।

'भारत-भारती'की समालोचना पर बैरिस्टर साहबने मुझपर जो पुष्प-वृष्टि की है सो आपने देखी ही होगी। न देखी हो तो भेजूँ। मुझे एक अपमानसूचक कार्ड भेजा है कि तुमने हरप्रसाद शास्त्रीको "गाली" दी। बाबू सीतारामने नालिश भी की है। मै चुप हूँ। न उत्तर दिया, न 'सरस्वती'मे कुछ लिखनेका विचार। यह घमण्डाचार्य्य त्रिलोकके विद्वानोंको अँगूठेपर रक्खे घूमता है।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[८५]

जूही, कानपुर

३१-८-१४

आशीष,

"उत्तर" वाली चिट्ठी और इसके साथ "दुबे" वाला कार्ड दोनो चीज़े मिल गई। आपके घरकी बीमारीका हाल सुनकर बड़ा दुःख हुआ। न मालूम कैसी बीमारी है, अब तक नही दूर हुई। मै आपके दुःखका अच्छी तरह अनुमान कर सकता हूँ। मैने तो कोई पुण्यकार्य किया नहीं। इससे ईश्वरसे बहुत दूर हूँ। तथापि उससे मेरी प्रार्थना है कि वह आपकी चिन्ताको शीघ्र दूर करे।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८६]

दौलतपुर
१५-१२-१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

१३ का पोस्टकार्ड मिला। २५०) की बात मैंने किसी पत्रमें नहीं पढ़ी। किस पत्रमें छपी है? जो लोग सम्मेलनमें गये थे वे अलबत्ते मुझसे कहते थे और माँगनेवालेकी "निष्काम हिन्दी सेवा" की तारीफ़ करते थे। सम्भव है, यह अफवाह झूठ हो।

आर्य्य-समाजी अब मेरी नालायकी, खुशामद और पक्षपात यह लिख-लिखकर साबित कर रहे हैं कि नाथूराम शङ्करकी कविताको, जो आपकी कवितासे बढ़कर है, मैंने सिर्फ़ "खासी" कह दिया और आपकी कविताकी तारीफ़ मे कलेजा निकालकर रख दिया।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[८७]

दौलतपुर
१९-११-१४

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। १५ और १८ दिसम्बरके कार्ड मिले। रवीन्द्रबाबूकी कविताका अनुवाद चाहे गीतोंमें चाहे अन्य पद्यमें। गद्यमें नहीं। आपको फुरसत न हो तो भाई साहब ही को करने दीजिए। "नैवेद्य" से भी कुछ अनुवाद होना चाहिए।

हिन्दी समाचार भेजनेकी जरूरत नहीं, "दास" महाशयके औदार्य्य की मुझे पूरी थाह है। आर्य-समाजियोंको कुत्सा करने दीजिए। उसके

कारण मै अपने कर्त्तव्यसे च्युत नहीं हो सकता। सर्वानन्दजीको भी पूरी कृपा है, वे आपको "ऊँचे दरजेका कवि" और मुझे अपना "गुरु" कह चुके है। तथापि इस समय वे और ही पाशमे बँधे हुए है।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८८]

जूही, कानपुर
१५—१—१५

आशीष,

जनवरी १५ के (कलकत्तेके) मार्डन रिव्यू (Modern Review) मे औरंगजेबके ऐतिहासिक पत्र पढ़िए।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[८९]

जूही, कानपुर
२०—३—१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। १९ का कार्ड मिला। कविताका नमूना मुझे पसन्द है। पूरी करके भेजिए। कोई बात समय और सरकारके विरुद्ध न रहे। इशारा भी न रहे। कल नया कानून बना है। कानून क्या मार्शल्ला—जंगी क़ानून—है। फासी तक की सजा है।

कविताके सम्बन्धमे आप जो लिख रहे थे उसका क्या हुआ। वह बहुत सामयिक होती। उसे पहले भेजना चाहिए। बिना आपकी कविता के 'सरस्वती' फीकी रहेगी। इसका ख्याल रखिएगा।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९०]

उत्तरका संक्षेप

'भारत-भारती' इस प्रशंसाके योग्य नही तथापि आप जैसे महानुभावो के वाक्य मेरे लिए बहुत कुछ उत्साहवर्द्धक है ।

आप अपनी सबसे अच्छी कविता-पुस्तककी एक कापी वी० पी० द्वारा मुझे भेजिए । साथ ही भा० भा० के १० प्रारम्भिक पद्योंका गुजराती अनुवाद भी भेजिए । इस सामग्रीको देखकर मै अपने निश्चयकी सूचना आपको दूँगा ।

इनके आ जाने पर आप इन्हे पं० बदरीनाथ भट्टको भेजिएगा । वे गुजराती काव्यके अच्छे ज्ञाता है । यदि वे कहे कि अवस्थी जी अच्छे और प्रसिद्ध कवि है, तो अनुवाद करनेकी अनुमति दे दी जाएगी । Royalty उनको देनी पडेगी । शर्तें पीछेसे तै हो जायँगी ।

कल कान्यकुब्ज स्कूलका जलसा था । लड़कोंने भा० भा० के अन्त का गीत गाया । श्रोता गद्गद हो गये । बड़ी खुशी हुई । ऐसे समयोचित गीत दो-चार और लिख डालिए ।

२२—३—१५ म० प्र० द्वि०

[९१]

जूही, कानपुर

१६—४—१५

प्रिय मैथिलीशरणजी,

आशीष । चिट्ठी मिली । तिलोत्तमाकी कापी भी मिली । मेरी तबीअत आठ रोजसे अच्छी नही । नीद बहुत कम आती है । चित्त उदासीन रहता है । काम नहीं होता । तबीअत सुधरने पर तिलोत्तमा देखूँगा ।

आठ-दस दिन बाद गाँव जानेका इरादा है। वे कौन साहब हैं जिन्होने रद्दी भरकर आपको धोखा दिया। आपका इसमे क्या अपराध, अपने ही कर्म्मोंसे वे जल गये। आपके भाई साहब अबतक नहीं आये। मिलने पर उन्हे "बङ्ग भाषा" दे दूँगा। फाल्गुनके बादका 'भारतवर्ष' नही आया। अगली कापियाँ भेजनेके लिए लिखता हूँ। आप न भेजिएगा।

बार्हस्पत्यको न अब मै कभी उस विषयमे लिखूँगा न आप लिखे। मैंने चुना चुनी एक चिट्ठी लिखी थी। उत्तर आया कि बहुत पढ़ने-लिखनेसे दृष्टि खराब हो गई है। कुछ नहीं लिख सकता। पेंशन लेनेके बाद लिखूँगा। जब वे पेंशन ले लें तभी आप उर्म्मिला लिखें। उसके पहले शायद उसे पढ़नेकी फ़ुरसत ही न मिले।

मोटो कोई प्रूफ पढ़ा तो बताऊँगा। मोटो आप ही चुनिए तो अच्छा हो। जितने आपने चुने हैं सब अच्छे हैं।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९२]

दौलतपुर

२५—५—१५

प्रियवर बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

आशीष। कृषक कथाकी कापी मिली। तीन नही, तो दो महीनेके लिए ज़रूर काफ़ी होगी। जूनकी 'सरस्वती' कम्पोज हो रही है। अब यह कथा जुलाईसे निकलेगी, 'फीज़ी'का हाल इससे निकाल दिया, यह बहुत अच्छा किया। ज़माना फिर नाजुक आ गया है।

छन्द बदलनेकी अब जरूरत नहीं। लक्ष्मीको न पढ़ना ही अच्छा है। सिकन्दर और उस योगीपर अवश्य लिखिए। विषय बड़ा ही हृदयाकर्षक है।

हम्मीरकृत चित्तौड़के उद्धारपर भी नाटक लिखिए। यह भी अच्छा विषय है, आशा है, बाबू सियारामशरणकी तबीअत अब अच्छी होगी।

मैंने अपना हाल आपको नहीं लिखा। मेरा कौटुम्बिक जीवन विषमय हो रहा है। मेरे शरीरकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं। जिनको मैंने अपना कुटुम्बी बनाया है वे मुझे फलवान् वृक्ष समझकर डंडो और ईंटोंकी मारसे शीघ्र ही कच्चे, पक्के फल गिराकर हड़प कर जाना चाहते हैं।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९३]

दौलतपुर

२–६–१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। इन नीचोंकी बातोंपर ध्यान न देना चाहिए। जो लोग १६ हजार रुपया दे डालनेकी शक्ति मुझमे समझते है वे पागलके सिवा और कुछ नहीं। डरानेके लिए आप चाहे एक नोटिस भले ही भेज दें। और कुछ करनेकी जरूरत नहीं। इस महात्माने कई दफे मुझे धोखा दिया है। लिखें आप, नाम नीचे दे दे स्त्रीका।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[९४]

दौलतपुर, रायबरेली

१८–६–१५

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरण गुप्त,

आशीष। कार्ड मिला। व्रजाङ्गनाकी कापी भी मिली। मुझे तो छपाई पसन्द है। मात्राएँ जरूर टूटी है, पर पढा जा सकता है। इस

पुस्तककी जो-जो कविताएँ 'सरस्वती'मे नहीं निकलीं उनके नाम लिख भेजिए। मौका मिला तो 'सरस्वती'मे छापूँगा। कृषक कथाका अर्धांश जुलाईमें छपने भेज दिया।

हम्मीर आदि लिखना शुरू कर दीजिए, विषय माकूल है। कल एक गाँव गया था। जनेऊ था। एक बिगडे दिल ब्रह्मचारी मिले। शिक्षित है। गंगातटपर एक ब्रह्मचर्याश्रम खोल रक्खा है। आपके बडे भक्त हैं। सारी भा० भा० कण्ठाग्र है। कहते थे—रोज गीताकी तरह उसका पाठ करता हूँ और शिष्योसे कराता हूँ। कोई ५०० आदमियोका मजमा था। अनेक लोग उनमे शिक्षित थे। भा० भा० के कितने ही अंश गाकर उन्होंने सबको मुग्ध कर दिया। मुझे जो खुशी हुई उसकी सीमा नही।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९५]

जूही, कानपुर
१–४–१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पत्र मिला। रजिस्टर्ड पैकेट भी आ गया। 'तिलोत्तमा' बहुत ही अच्छी छपी। जैसी सुन्दर छपाई है वैसा ही सुन्दर जिल्द और कागज है।

'साकेत'के दोनो सर्ग धीरे-धीरे अवकाशानुसार पढ़ूंगा। तब आपकी बातोका उत्तर दूँगा। मेरी राय है कि आप इस विषयमे मुझसे अधिक ज्ञान रखते हैं। रामायणकी ग्रन्थिल बातोपर मैंने कभी विचार नही किया।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९६]

जूही, कानपुर
१४—४—१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। पद्य-प्रबन्धके दूसरे संस्करणकी कापी मिली। थैंक्स।

'साकेत' देखनेके लिए अब तक समय नही मिला। अब शीघ्र ही देखूँगा।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९७]

जूही, कानपुर
२२—४—१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। १६ की चिट्ठी मिली। हो सका तो 'साकेत'के दोनो सर्ग दो ही अङ्कोमे छाप दूँगा। नही तो आपके लेखानुसार एक-एक अङ्कमे आधा आधा छापूँगा।

अभी मै कुछ भी संशोधन न करूँगा। पुस्तकाकार छपानेके पहले जब आप पुस्तकको दुहरावें तब उचित संशोधन कर दीजिएगा।

एक ही छन्दका दो, तीन, चार सर्गोंमे भी महाकवियोने प्रयोग किया है। आप भी ऐसा ही करें। जो छन्द खूब मंजे हुए हों उनका प्रयोग अधिक कीजिए। "क्षमा छाया तले नत था, निरत था"—यह छन्द बुरा नहीं। "वह पारायण, हे नारायण"—भी मजेका है। "पर श्री कमला-सी कल्याणी"—पढनेमे अच्छा नही लगता। वसन्त-तिलका, वंशस्थ, उपजाति, इन्द्रोपेन्द्रवज्रा, द्रुत०, शिखरिणी आदि भी रखिए। पर रखिए

वही जो आसानीसे बन जायँ और पढ़नेमे अच्छी मालूम हों। गणवृत्तोकी अपेक्षा मात्रावृत्त बनानेमें कम परिश्रम पड़ेगा। क्यो न एक सर्ग सवैया छन्दमे लिखा जाय?

मेरा इरादा १ मईको दौलतपुर जाने का है।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[९८]

जूही, कानपुर
२६-४-१६

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी,

आशीष। सुहाग शब्दका जो भाव है (हिन्दीमे) वह सौभाग्यसे ठीक-ठीक व्यक्त नहीं होता। इस कारण भाग-सुहाग पाठ सुख-सौभाग्यसे अधिक उपयुक्त है।

भाग-सुहागकी जगह सुखद-सुहाग भी हो सकता है। जो पद्य आपने लिखा उसका दूसरा चरण मुझसे ठीक पढ़ते नहीं बनता। गति ठीक है न?

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[९९]

जूही, कानपुर
१७-४-१७

प्रियवर बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। १४ का कार्ड मिला। अर्जुनके तरकसके विषयमे आपका बताया आशय ही ठीक है:—

"सर्वदा सर्वदोऽसीति त्वं मिथ्या कथ्यसे बुधैः।
नारयो लेभिरे पृष्ठं न वक्षः परयोषितः॥"

और कुशल। ८, १० रोज़ बाद दौलतपुर जानेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१००]

दौलतपुर, रायबरेली
६–५–१७

श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त,

आशीष। वैतालिक नाम बुरा नहीं। यही रहने दीजिए। पद्य कोमल और भाव बहुत ऊँचे हैं। पुस्तिका छपने योग्य है। छपा डालिए।

यहाँपर मेरे असिस्टेण्ट नहीं। कापी करनेके लिए मुझे समय नहीं। यदि कोई लेखक कभी आपको मिल जाय, तो १०, १५ पद्य लिखाकर भेज दीजिएगा। चुन-चुनकर जो बहुत अच्छे हों वही भेजिएगा। कापी लौटाता हूँ।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

****

राय कृष्णदास

राय कृष्णदास काशीके प्रसिद्ध राय खानदानके है। ये प्रसिद्ध राजा पट्टनीमलके वंशज हैं। इनके पिता राय प्रह्लाददास भारतेन्दुजीके भांजे थे। ये काशीके प्रसिद्ध रईसोमे थे। सस्कृत और हिन्दी साहित्यमे इनकी विशेष रुचि थी।

राय कृष्णदासजीका जन्म काशीमें स० १९४९ में हुआ। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। ११ वर्षकी अवस्थामें ही इनके पिताकी मृत्यु हो गई। बचपनसे ही कला और साहित्यकी ओर इनकी विशेष रुचि थी। अपनी विपुल सम्पत्तिके ये मालिक भी थे। अतः थोड़े समयमे ही इनका साहित्य-जगत्के प्रसिद्ध व्यक्तियोसे सम्पर्क और सम्बन्ध हो गया। इस कारण इनकी कलात्मक प्रतिमा का तेजीसे विकास हुआ। हिन्दीके कहानी-साहित्य और गद्य-काव्यके क्षेत्रमे इनका अपना स्थान बन गया।

राय कृष्णदासजी चित्रकलाके अपूर्व पारखी हैं। चित्रकलाका ऐसा मार्मिक आलोचक हिन्दीमे दूसरा नही है। भारतीय मूर्तिकला के भी यह प्रथम श्रेणीके विद्वान् हैं। कलाके प्रत्येक क्षेत्रमें आपकी दृष्टि सधी है। वस्तुत. कलाकी आराधनामें ही इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया। अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति स्वाहा कर दी। 'भारतकला भवन' इनकी सम्पूर्ण साधनाका रूप है।

****

****

इनकी रचनाएं इस प्रकार हैं :—

१. गद्य काव्य—साधना, छायापथ, संलाप, प्रवाल ।

२. कविता-संग्रह—भावुक व्रजरज ।

३. कहानी-संग्रह—अनाख्या, सुधांशु, आंखोंकी थाह ।

४. कलाकी आलोचना—भारतीय चित्रकला, भारतीय मूर्ति-
कला, भारतीय चित्रकला पर एक
वृहद् ग्रन्थ अभी अप्रकाशित है ।

५ चित्र-चर्चा [अप्रकाशित] ।

६ इतिहास—इक्ष्वाकु वंश, भारतीय संगीत कला अभी
अप्रकाशित है ।

राय कृष्णदासजीका पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीसे घनिष्ठ सम्पर्क था । उनके पास द्विवेदीजीके बहुतसे पत्र हैं । उन पत्रोंमेंसे छाँटकर कुछ पत्रोंको यहाँ दिया जा रहा है ।

************०******************************

[१०१]

लखनऊ
१२—३—०९

प्रिय महाशय,

२—५—०६ का कृपा-पत्र मिला। काशीमे आपसे न मिलनेका हमे भी बड़ा रंज हुआ। जी हाँ, हम हरद्वार गये थे। वहाँसे डेढ़ महीने बाद अब लौट रहे है। कल कानपुर चले जाएँगे। संस्कृतमे दर्शक और द्रष्टा भिन्नार्थवाचक शब्द है। पर हिन्दी और मराठीमे दर्शक शब्द देखने वालेके अर्थमे भी प्रयुक्त होता है :—दर्शकवृन्द, दर्शक-मण्डली आदि उदाहरण है। मार्चकी 'सरस्वती' पास नही। नही मालूम उसमे क्या लिखा गया है।

निवेदक
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१०२]

जूही, कानपुर
२—१०—१०

आशीष,

कल शामको ८ बजे आपका तार मिला। उसका उसी क्षण उत्तर दिया कि मैं १२ अक्टोबरके बाद आऊँगा। आज अभी ७ बजे आपका दूसरा तार आया। आपकी आज्ञा है—"Start within next week please"।

पाठकजीसे मैं अपना हाल कह चुका हूँ। उनके चले जानेपर मुझे ज्वर आ गया। पर एक ही दिन आया। विशेष कष्ट नहीं हुआ तथापि कमजोरी है। मेरे एक मित्र लखनऊमे है। उनसे मैंने वादा कर लिया है कि दुर्गापूजाके दिनोंमे मैं उनसे मिलने जाऊँगा और ३, ४ दिन उनके यहाँ रहूँगा। मेरा इरादा था कि मैं ६ या ७ ता० को लखनऊ जाऊँ। १० को प्रयाग रहूँ। ११ को मिर्जापुर। बाद आपके यहाँ जाऊँ। आप कृपा करके यह लिखिए कि मेरे लिए काम क्या है? कल शाम तक आपको यह पत्र मिल जायगा। परसो उत्तर आप पोस्ट कर दीजिए। नरसो ५ को वह मुझे मिल जायगा। तब मैं आपको अपना निश्चय सूचित कर दूँगा। मैं सम्मेलनमे शरीक नहीं होना चाहता और न सम्मेलनके दिनोंमे काशीमे रहनेकी इच्छा है। इसीसे मै उसके बाद आना चाहता हूँ। आपका उसके पहले ही बुलानेका क्या अभिप्राय है? सो साफ़ लिखनेकी कृपा कीजिए। यदि १२ ता० के पहले मेरे आनेसे आपका कोई काम हो सके जो कि बादमे आनेसे न हो सकता हो तो कृपा करके वैसा लिखिए। मैं नही चाहता कि मै वहाँ आऊँ और लोग मुझे सम्मेलनमे जानेके लिए लाचार करे। सम्मेलनसे मेरा कोई विरोध या द्वेष नही। मै उसमे इसलिए शरीक नही होना चाहता कि सभाके भवनपर अहातेमे वह होगा और सभा हीके कार्यकर्त्ता उसके कार्यकर्त्ता हैं। जिस सभाने मुझे सभासे हटानेकी कोशिश की और जिसके मैंने इतने दोष दिखलाये, उससे मैं अब सम्पर्क नही रखना चाहता। यह मेरी कैफ़ियत आपके जाननेके लिए है, प्रकाशित करनेके लिए नहीं। आप अब अपनी कैफियत स्पष्टतापूर्वक लिखनेकी कृपा कीजिए। मै ६ ता० तक आपके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[१०३]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
२६-४-१२

आशीर्वचांसि विलसन्तुतराम्

पत्र मिला। आपकी माताकी बीमारीका हाल सुनकर दुःख हुआ। ईश्वरको धन्यवाद है जिसने नैरोग्य प्रदान किया।

पं० कृष्णकान्त मालवीयजीके जो जीमे आवे करे। हमलोग अपना कर्त्तव्य यथाशक्ति करनेमे त्रुटि न करेंगे।

आप अपने चित्र औरोको तो देते है हमे क्यो नही देते? दो-एक देनेकी कृपा कीजिए—शीघ्र।

इलियड आफ़ दि ईस्ट पर हमने क्या लिखा था याद नही। आप कुछ लिखिए जिससे याद आ जाय।

मथुरा-सम्बन्धिनी कालिदासकी भूलका उल्लेख 'सरस्वती'मे कर देंगे। निरङ्कुशताविषयक आपके मतभेदको हम प्रकाशित कर देंगे। शर्त यह है कि आप अवशिष्ट भूलोंको भूल स्वीकार करें और उस लेखकी उपयोगिता और अनुपयोगिता आदिपर भी कुछ लिखे। आपके पत्रके साथ आपका कोई लेख नहीं मिला।

अभी कुछ दिन मेरा विचार यहीं अपने गॉवमे रहनेका है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१०४]

दौलतपुर,
भोजपुर, रायबरेली
२८-४-११

आशीष,

मुझे इस लेखके छापनेमे जरा भी उज्र नहीं। पर मेरी राय है कि आप इसे अभ्युदय या हितवार्ताको भेज दे। ऐसा करनेसे इसका महत्त्व बढ जायगा। लोग जानते है कि मुझसे और आपसे स्नेह है। अतएव आपकी कृत प्रशसा 'सरस्वती'मे जरा कम अच्छी लगेगी। एक बात और है। मईकी 'सरस्वती' छप चुकी। जूनकी निकलनेमे अभी सवा महीनेकी देरी है। अतएव तबतक इस लेखको ठहरना पड़ेगा। पूर्वोक्त पत्रोमे भेजनेसे शीघ्र ही निकल भी जायगा और प्रभाव भी इसका अच्छा होगा। यदि आपको मेरा कहना अच्छा न समझ पड़े तो रघुवंशके उन श्लोकोंको लिखकर लेख लौटा दीजिए। मै 'सरस्वती'मे ही छाप दूँगा। रघुवंश यहाँ मेरे पास नही। पुरानी 'सरस्वती' भी नही।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१०५]

दौलतपुर,
डाकघर भोजपुर, रायबरेली
३०-७-११

आशीष,

आपके दोनो कार्ड मिले। मै आपका बहुत कृतज्ञ हूँ। हितचिन्तनाके लिए अनेक धन्यवाद। मेरे कुटुम्बमे कोई दस आदमी है। वे सब मेरे आश्रित है। मै इस फ़िक्रमे हूँ कि कोई काम ऐसा करूँ जिससे उन लोगो

को कोई कष्ट न हो। उनकी जीविका चलती रहे। इसका प्रबन्ध हो जानेपर साहित्यके कार्यसे किनाराकश हो जाऊँगा। तबतक किसी तरह चलाना ही पड़ेगा।

शुभाध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१०६]

Commercial Press
Cawnpore.
२२ फरवरी १९१२

आशीष,

कौटिल्य-कुठार मिल गया। पोस्टकार्ड भी मिला। आशा है आपकी तबीअत दिन पर दिन अच्छी होती जायगी।

मैंने अपने एक मित्रके साझेमें एक छोटा-सा प्रेस कर लिया है। अंगरेज़ी, हिन्दी, उर्दू तीनों भाषाओंमें काम होता है। यदि आपका या आपके मित्रोंका मैं कोई काम कर सकूँ तो याद कीजिएगा। कृपा होगी।

शुभैषी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

[इसीके साथ]

लीजिए,

न्याय करो तो निबाह नहीं पै दया जो करो तो हया रहती है।

१६–३–१२ **म० प्र० द्विवेदी**

[१०७]

दौलतपुर, रायबरेली
२६—६—२०

आयुष्मान्,

पो० का० मिला। आम-काम कुछ न भेजिए। विपत्तिग्रस्त हूँ। १६ जूनकी रातको मेरे घर यहाँ चोरी हुई। नकद, जेवर, कपडे, बर्त्तन कोई २०००) का माल उठ गया। यहाँ और था ही क्या। १० रोज हुए न चोरीका पता न चोरोंका। जूता टोपी तक मेरी गई। धोती मात्र रह गई। नंगा बैठा हूँ। कुटुम्बियोंकी प्रायः यही हालत है। कानपुरसे पहननेके कपड़े मँगाने है। मैं शान्त हूँ। संसार ही नाशवान है, चीज-वस्तुकी कौन बात। पर कुटुम्बियोंको बहुत कष्ट हुआ है।

शुभानिध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१०८]

दौलतपुर, रायबरेली
८ जुलाई २०

आयुष्मान,

आपके पत्रके उत्तरमे मैने एक पोस्टकार्ड भेजा था। कोई एक हफ्तेसे अधिक हुआ। उसमे चोरीका हाल भी लिखा था। उस समय चित्त क्षुब्ध था। इस कारण यदि कोई बात अनुचित लिख गई हो तो खयाल न कीजिएगा।

आम भेजनेकी कोई ऐसी जरूरत नहीं। लेकिन मेरा मना कर देना यदि आपको खटके तो आप पारसल Takia station O. X. R. P. (Cawnpore—Rai Bareli Branch) को भेज दीजिए।

रसीद मुझे दौलतपुर। आम क़रीब-करीब कच्चे हो। पारसल मज़बूतीसे बँधा हो।

मेरे घरसे जो कपड़ा चोरी गया है उसमे बहुत-सी चीज़े काशीकी भी थी। उनमेसे कुछ लेनी पड़ेगी। कुटुम्बियोको उनके चले जानेका रंज है। आप कृपा करके अपने किसी जानकार मुलाजिमको बाज़ार भेजकर नीचे लिखी चीजोके दाम दरियाफ्त करा लीजिए—

१—पीताबर रेशमी, नारंगी रंग, सफेद ज़री किनारी बारीक अंगुल डेढ अंगुल चौड़ी, पल्लुवोमे भी वैसा ही ज़रीका काम।

२—उपरना (दुपट्टा) नबर (१) के सदृश।

३—पीताबर मामूली, रंग पीला, रेशमी किनारी (रंग लाल या नीला) किनारी पतली।

४—उपरना (दुपट्टा) नंबर (३) के सदृश।

५—साड़ी बनारसी, रंग कंजई या और कोई खुशनुमा, जरी किनारी, हल्की।

६—एक दुपट्टा काशी सिल्कका मामूली।

७—आसाम या ऐडी सिल्क, एक कोटके लिए।

ये चीज़े मेरे सदृश मामूली गृहस्थोके योग्य जो हो उन्हींके दाम जानना चाहता हूँ। जियादह क़ीमती चीज़ोके नही।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[१०६]

दौलतपुर, रायबरेली
९—८—२९

बहुविध आशीष,

७ अगस्तका पोस्टकार्ड मिला। आपके कुटुम्बपर वज्रपात होनेकी

सूचना मुझे काशीसे बाबू मैथिलीशरणने समयपर दी थी । मैंने उसी वक्त अपनी समवेदना-सूचक पत्री उन्हे भेजी, यथा बुद्धि सान्त्वना भी दी । शायद उन्होने इसकी खबर आपको दी हो ।

मै भुक्तभोगी हूँ । अपने अनुभवसे जानता हूं कि आपपर क्या बीती होगी और अब भी आपके मनकी क्या दशा होगी । यह रोग समझाने-बुझानेसे नहीं जाता । इसका कुछ इलाज यदि किसीके हाथमें है तो समयकी गतिके हाथमे है । संसार छोड़नेसे छूटता नहीं । सैकड़ो प्रकारके मायाजाल या बन्धनोंसे मनुष्य जकड़ा हुआ है । विरक्ति काम विरलो हीके आती है । जो दशा हो उसीमे समाधान माननेके सिवा और कोई उपाय नहीं । मुझपर जो बीत रही है मैं ही जानता हूँ । पर उसके विलेखन और तदर्थ रोदनसे क्या लाभ ?

एक बात आपकी मुझे खटकी । "कभी-कभी अवश्य स्मरण कीजिए"। यह ठेना क्यो ? सत्तरके घर-घाट मे आपका स्मरण करूँ और कलके बच्चे आप मुझ जरठ, अपाहिज, अशक्त और मरणोन्मुखका स्मरण न किया करे ! यह कहाँका न्याय है ? बूढोका सहारा या अन्धोको लकड़ी तो बच्चे ही होते हैं ।

काशीमे कई पुस्तक-प्रकाशक हैं । मेरे फुटकर लेखोके कई सग्रह मेरे पास है । विषय भिन्न-भिन्न हैं । मुनासिब उजरत देकर कोई छापे और प्रकाशित करे तो बताइएगा । १५, २० पुस्तके निकल गई । कुछ ही बाकी हैं ।

शुभाकांक्षी

म० प्र० द्विवेदी

[११०]

दौलतपुर, रायबरेली
२७-८-२९

शुभाशिषः सन्तु

चिट्ठी २३ अगस्तकी मिली। अच्छा तो आप भी पुस्तक-प्रकाशक बन गये। आशा है काम अच्छा चलता होगा। मेरे लेख-संग्रहकी कोई १६ पुस्तकें तो छप गई। कोई ८ छप रही है। ६ बाकी हैं। उनके नाम आदि अलग काग़ज़पर इसी लिफ़ाफ़ेमे मिलेगे।

वाद-विवादवाले लेख वाग्विलास नामक पुस्तकमे गये। वह दरभङ्गा (लहेरियासरायवालो) ने ले ली है। बहुत-सी समालोचनाएँ नं० ६ पुस्तकमे हैं। आर्य्य-समाजका कोप वग़ैरह लेख और छोटे-छोटे नोट विचार-विमर्शमे है। उसके आठ खण्ड या अध्याय है।

कुछ प्रकाशकोने मुझे धोखा दिया है। साहित्यालाप नामक पुस्तक खड्गविलास प्रेसने छापा है। छपे ५ महीने हो गये। ५००) से ऊपर उनसे पाना है। पर चिट्ठीका जवाब तक नही देते। आपकी जान-पहचानका वहाँ कोई हो तो उसकी मारफ़त उलाहना दिलाया जाय।

मेरी पुस्तके यो ही सरपटकी है। विशेष बिक्री होनेकी संभावना नही। छापनेसे कही आपको घाटा न हो।

जिन पुस्तकोके नाम मैं भेज रहा हूँ उनमेसे कुछ मतवालावालोने माँगा है — साहित्य-सीकर आदि। कुछके विषयमे प्रयागके बाबू रामनारायणसे लिखा-पढ़ी हो रही है।

आपकी प्रकाशित पुस्तकें बड़े महत्त्वकी है। जो मुझे भेजी उनके लिए मैं कृतज्ञ हुआ। भैय्या, मै अब १०, १५ मिनटसे अधिक नहीं

पढ सकता। सिर-दर्द हो जाता है। आगे कोई पुस्तक भेजना हो तो मुझसे पूछकर भेजिएगा।

ईश्वर आपको चिरञ्जीव करे और सुखी रक्खे।

शुभचिन्तक
म० प्र० द्विवेदी

१. विचार-विमर्श—साहित्य-समालोचना, विवेचना, पुस्तक-परिचय आदि ८ अध्यायोमे, छोटे-छोटे मेरे १८१ नोट. १६ पेजी पुस्तककी पृष्ठ-संख्या कोई ३०० ।
२. विशिष्ट वार्ता—पुरातत्त्व-विषयक लेख, पृ० १५० ।
३. साहित्य-सीकर—साहित्य-विषयक लेख, पृ० २०० ।
४. निबन्ध-संग्रह—फुटकर लेख पृ० १८० ।
५ संकलन—फुटकर लेख पृ० १८० ।
६. समालोचना-समुच्चय—आलोचनाएँ पृ० ३०० ।

[१११]

दौलतपुर, रायबरेली
६—१०—२९

आशीष,

मैं कानपुरमे सिर्फ़ ३ हफ़्ते रहने पाया। यहाँ मेरे दोनो कुटुम्बी सख्त बीमार हो गये। इससे बीच हीमे लौट आना पड़ा।

आपका २० सितम्बरका पोस्टकार्ड मेरी गैरहाजिरीमे कानपुर पहुँचा। इधर-उधर घूमता रहा। कल शामको मुझे यहाँ मिला। अब तक मैं बड़ी चिन्तामे था। सन्देह हुआ कि कही आप बीमार तो नही जो पुस्तकोंकी पहुँच तक न लिख सके। इसीसे तीन चार रोज हुए मैंने बाबू श्यामसुन्दर

टासको लिखा कि किसीको आपके पास भेजकर आपका हाल दरियाफ्त करे और मुझे लिखे।

कार्डमे आपने जो चुनाचुनीकी बातें लिखीं उनकी जरूरत न थी। "निधि" दी और "गौरवान्वित किया"—यह क्या?

आप मुझे रुपया न भेजे। मुझे अभी रुपयेकी जरूरत् नहीं। कम-से-कम "विचार-विमर्श" को किसी अच्छे प्रेसमे छपनेको जल्द दे दें। पुस्तकमे १६ पेजी शायद ४०० पृष्ठोंसे कम न होंगे। देखिए क्या खर्च आपको पड़ता है। कितनी कीमत आप रखते हैं। बिकनेकी कितनी उम्मेद है। तब सुभीता अपना देखकर रुपया जनवरी-फरवरीमे भेजिएगा। अभी तक पुस्तक छापनेका आपने वादा किया है।

एक बात और। प्रयागमे रामनारायणलाल अच्छे प्रकाशक है। उनकी स्कूली किताबे भी कई जारी है। उनका तकाजा है कि मै अपने लेखोंके संग्रहकी कुछ ऐसी पुस्तकें उन्हे दूँ जो Inter, B. A और M. A. मे कोर्स हो जायँ। उधर प्रयाग विश्वविद्यालयके हिन्दीके प्रोफेसर पं० देवीप्रसाद शुक्ल भी यही काम मुझसे कराना चाहते हैं। मैंने इन दोनोंको अभी दुटप्पी जवाब दे दिया है—आज्ञापालनकी चेष्टा करूँगा। विचार-विमर्शमें मेरे सब तरहके छोटे-मोटे लेख हैं। उनका समय भी व्यापक है—१ से २० वर्ष पहले तकका। संभव है, कोशिश करनेसे यह पुस्तक कोर्स-क़रार दे दी जाय। काशी और आगरेवाले भी बहुत करके इसे ले लेंगे। अतएव इसे जल्दी छपवा दीजिए। छप जानेपर मै इन लोगोको लिख दूँगा कि एक वैसी पुस्तक तैयार हो गई। इसकी पहुँच शीघ्र लिखिएगा।

शुभाकांक्षी

म० प्र० द्विवेदी

[११२]

दौलतपुर, रायबरेली
२१-१-३०

शुभाशिषः सन्तु

बहुत दिनोंके बाद आज आपका १८ जनवरीका पोस्टकार्ड मिला।

खड्गविलास प्रेसवालोंने बहुत तंग किया। तब मैंने जायसवालजीको लिखा। उन्होने रुपया भिजवा दिया।

सभाकी पत्रिकासे यह तो मुझे मालूम हो गया था कि आपने कला-परिषद्‌को सभाके भवनमे मिला दिया है; पर यह आज आप हीसे मालूम हुआ कि उसका सारा काम भी आप हीको करना पड़ता है। कीजिए। आप ही इसके योग्य भी हैं।

आप अपने वादेको भूल-सा गये है। आपने मुझे लिखा था कि मेरी पुस्तकें जनवरीके अन्त तक छप जायँगी। आपने अपने किसी विज्ञापनमे भी उनके शीघ्र निकलनेकी घोषणा की थी। खैर लाचारी है। आप और काममें लग गये। क्या किया जाता।

कृपा करके लिखिये, कुछ काम हुआ या नहीं। हुआ तो कितना हुआ और किस प्रेसमें हुआ। यदि कुछ फार्म छप गये हो तो उनकी एक-एक कापी मुझे भेज दीजिए।

अब मेरी पुस्तकोंके प्रकाशनका क्या प्रबन्ध आपने किया है और कबतक निकल जायँगी, यह भी लिखनेकी कृपा कीजिए।

आपने अपने एक पत्रमे दिवाली तक मुझे रुपया भेजनेको लिखा था। पर मैंने मना कर दिया था। मै आपको लिखनेवाला ही था। इतनेमे आपका कार्ड आ गया। नये सालका आरम्भ है। कुछ ग़ैरमामूली ख़र्च आ रहे है। मेरे भानजेकी बहू अपने मायके प्रयाग गई हुई है। उसको भी कुछ रुपया भेजना है। अतएव विशेष कष्ट न हो तो जो कुछ आप पुस्तकोंके

हिसाबमे मुझे देना चाहते हो, उसका अर्द्धांश मुझे अभी भेज दीजिए। अवशिष्ट अर्द्धांश पुस्तकें छप जाने या मुझे उसकी जरूरत होनेपर भेजिएगा।

मैं अभी कही बाहर जानेका विचार नहीं रखता। कहीं दूरका सफर करने योग्य मैं अब हूँ भी नहीं।

कुम्भ-यात्रामे स्वास्थ्य-रक्षाका खूब ख्याल रखिएगा।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[११३]

दौलतपुर, रायबरेली
२९-११-३३

शुभाशिषः सन्तु,

बहुत दिनोसे आपके हाल नहीं मिले। आशा है आप अच्छी तरह हैं। कुछ समयसे मेरा उन्नीद्र रोग बढ गया है। बहुमूत्र (Diabetes) के भी लक्षण दिखायी दे रहे है। देखूँ कबतक शरीर चलता है।

पेन्शनको छोड़कर मेरी आमदनीके और सब ज़रिये अब प्रायः बन्द-से हैं। सहूलियतके लिए कुछ काश्तकारी भी यहाँ कर ली हैं। उसके लगानका तकाज़ा है। सख्ती हो रही है। मेरी पुस्तकोंके हिसाबमे अगर आप सुभीतेके साथ कुछ भेज सके तो भेज दीजिए। मगर मेरे कारण कष्ट न उठावें। प्रयागके एक प्रकाशकसे रुपया मिलना है। पर पत्रका उत्तर तक वे नहीं देते। औदार्य्य!

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[११४]

कमर्शल प्रेस
कानपुर
२२–१२–३४

आशीष,

आज मुझे जनरल मैनेजर न्यूज पेपर्स लिमिटेडसे आपके हिसाबमे १००) मिल गये। आपकी इस कृपाके लिए धन्यवाद।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[११५]

दौलतपुर, रायबरेली
१०–३–३५

शुभाशिषः सन्तु,

५ वर्षसे अधिक हुआ, मैंने आपको लिखा था कि बनारसमे कोई प्रकाशक मेरी दो-एक पुस्तकें ले सके तो बताइए। इसपर आपने खुद ही मेरी पुस्तकें ले लीं और अपने ५-१०-२९ के पत्रमे लिखा :—

"भारती भण्डारकी महत्ता इन पुस्तकोंसे बहुत बढ़ गई। अतः यह अपनेको अत्यन्त गौरवास्पद समझता है। अपने पूज्य आचार्यसे इस जनको आशीष रूपमे जो दिव्य निधियाँ मिली है उनकी भेट यह दीवाली तक सेवामे उपस्थित करेगा।"

फिर ११ मार्च १९३० के पत्रमे आपने लिखा—

"आपके दोनो ग्रन्थोंके लिए मेरा विचार ५५१) श्री चरणोंमे भेट करनेका है। × × × आगामी १५ जूनके भीतर-भीतर यह भेट सेवामे अवश्य पहुँच जायगी।"

अपनी पुस्तकें लेनेके लिए न तो मैने आपसे इसरार किया और न कुछ माँगा। दो-तीन महीने पहले तक मैंने शायद आपको कभी याद भी नहीं दिलाई कि मुझे आपसे कुछ पाना है। आपने खुशीसे पुस्तके ली और खुद ही उजरतका निश्चय किया। आपके भण्डारकी पुस्तके यदि लीडर प्रेसमे न चली जाती तो बहुत करके हज़ार कष्ट सहनेपर भी मै आपसे तकाज़ा न करता।

मेरे याद दिलानेपर लीडर प्रेसवालोने इधर हालमे, एक विज्ञापन, मेरी पुस्तकोका दो-तीन बार भारतमे निकाला। बस। फिर चुप। वही व्यास, प्रसाद, पाठक आदिकी अनमोल पुस्तकोका विज्ञापन बराबर प्रकाशित हो रहा है। खैर, हर्ज नही। हर्ज जिस बातसे है वह यह है—

मुझे मालूम नहीं, उजरतके बारेमे लीडर प्रेसके साथ आपने क्या शर्ते की है। और इसे जाननेका मुझे हक भी नही। मेरी प्रार्थना सिर्फ़ यही है कि मुझे आपने जो कुछ देना निश्चित किया था उसे आप उन लोगोंसे दिलवा दीजिए। वह मुझे ४ वर्ष पहले ही मिल जाना चाहिए था। उसमेसे १००) दो महीने हुए मिल चुका है। ४५१) बकाया है।

मै आज कल कुछ तकलीफमे हूँ। मै कुछ अच्छा होकर घर आया तो भानजेकी बारी आई। वह ढाई महीनेसे कानपुरमे पड़ा है। कैप्टन पाईका इलाज है। उसका खून खराब हो रहा है। इंजेक्शन लग रहे हैं। बड़ा खर्च है। वह किसी तरह संभलता नही देख पड़ता।

संग्रह-पुस्तकोसे जो कुछ मिलना था मिल चुका। आमदनीका और कोई द्वार नहीं। आज मार्चकी १० तारीख है। अब तक इण्डियन प्रेस से पेशनके भी टके, फरवरीके नही मिले। इन्हीं कारणोसे तंग आकर आपको लिखना पड़ा।

मै आपको ज़रा भी तंग नहीं करना चाहता। आपके मत्थे जाय तो मुझे कुछ न चाहिए। लीडर प्रेससे मिलना हो तो फौरन उनको लिख कर दिलाइए—मेरी पुस्तकें बिके चाहे न बिके। ऐसी कोई शर्त भण्डारने मुझसे नहीं की जिनसे पुस्तकें बिकने तक मैं अपनी उजरतसे महरूम रक्खा जा सकूँ।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

पं० लल्लीप्रसाद पाण्डेय

पं० लल्लीप्रसाद पाण्डेयका जन्म-स्थान ग्राम, सनोदा, ज़िला-सागर (मध्यप्रदेश) है। इनका नाम अयोध्याप्रसाद तिवारी था। पण्डित रामलाल पाण्डेयके यहाँ गोद आनेके बाद इनका नाम लल्लीप्रसाद पाण्डेय पड़ा। यह साधारण किसान और ग्रामीण पुरोहित थे। लल्लीप्रसादजीका जन्म ज्येष्ठ कृष्ण त्रयोदशी सं० १९४३ को हुआ। दो सालके बाद ही उनकी बुआ उन्हें लेकर सागर ले आई। सागरमें ही आपने संस्कृतका अध्ययन किया।

सन् १९०७ ई० मे आप नागपुर चले गये। वहाँ हिन्दी केसरी में ११ महीना काम किया। पुन: सागर वापस चले गये। १९११ में नवलकिशोर प्रेस लखनऊ आ गये। यहाँ प्रूफ-संशोधकका काम किया। १९१४ में कुछ समयके लिए कलकत्ते चले गये। ८ महीने बाद पुनः नवलकिशोर प्रेस आ गये। १९१५ ई० में सप्रेजीके कहने से गीतारहस्यके प्रकाशनके लिए पूना चले गये।

सन् १९१७ ई० मे बालसखा और साहित्य विभागमें काम करनेके लिए इंडियन प्रेस प्रयाग आ गये। यहीं पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके घने सम्पर्क मे आये। बराबर द्विवेदीजीके सहायक और विश्वासपात्र रहे। द्विवेदीजी के १४१ पत्र आपके पास मिले। उन सबको देखनेके बाद जो सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण पत्र समझमें आये, वे २१ पत्र यहाँ दिये जा रहे हैं।

[११६]

जूही, कानपुर
२१–८–१७

प्रणाम,

ये कार्ड लीजिए। मै नहीं चाहता कि ऐरे-गैरे जो चाहे 'सरस्वती'की कविता नकल करके ग्रन्थकार बन बैठें। ऐसी महँगीके समयमे और जब आपकी आलमारी "कापियो"से भरी है तब भीलोके देशके एक गुमनाम ज़मीन्दारका किया हुआ कविता-संग्रह छापनेके लिए आप कैसे तैयार हो गये! उसे देखा तक नही और छापनेकी स्वीकृति! क्या मैं या आप 'सरस्वती'मे प्रकाशित कविताओका संग्रह नही तैयार कर सकते? जब प्रेस कहेगा मै एक संग्रह कर दूँगा। जमीन्दारजीसे कहिए कि 'सरस्वती' वाली कविताएँ अपने संग्रहसे निकालकर बाकी आपको भेज दे। अगर प्रेस खुद ही चाहता हो कि वे कविताएँ इस मालवी-संग्रहमे रखी जायँ तो किसीसे पूछनेकी क्या ज़रूरत। रख दीजिए। बहुत हो तो लिख दीजिएगा कि सर० से उद्धृत।

मेरे पास इस तरहकी चिट्ठियाँ आया ही करती है। मै बहुत कम जवाब देता हूँ।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[११७]

जूही-कलाँ, कानपुर
११–१०–१९

नमोनमः,

कृपा-पत्र मिला। अपने अनुवादित *प्रहसनके विषयमे आप बाबू

---

* प्रहसन 'रायबहादुर'। प्रकाशक- गंगापुस्तकमाला, लखनऊ।

महावीरप्रसाद पोद्दार* हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, हैरिसन रोड, कलकत्ताको लिखिए। बहुत करके वे ले लेगे। उनको लिखनेमे मुझे सङ्कोच होता है। नही, मैं ही लिख देता। मुझसे एक आध पुस्तक वे माँगते थे। सो नहीं दे सका। थी ही नही। संकोचका यही कारण है।

राम, कृष्ण, युधिष्ठिर, व्यास, वाल्मीकि आदि हम सबके आदरके पात्र हैं। उनके लिए आदरार्थक बहुवचन ही लिखना अच्छा है। औरोंके लिए एकवचन। दुष्ट, शिष्टके सम्बन्धमे भी यही।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[११८]

पाण्डेजी,

१. शुक्लजीके† पास जो लेख हो, उन्हे मगाकर देखिए कुछ छपने लायक है? जो हो उनकी भाषा ठीक कर दीजिए।
२. नये लेख और कविताएँ प्राप्त करनेकी चेष्टा कीजिए।
३. जनवरीकी 'सर०'की कापी तैयार करके मुझे देखनेको भेजिए। मै देखकर लौटा दूँगा, छापनेके लिए। हर महीने यही किया कीजिए। आखिरी प्रूफ मै देखा करूँगा।
४. गुरुजीसे पूछ-पूछकर काम कीजिए, उनकी निगरानीमे।
५. 'सरस्वती'के बदलेमे जो पत्र आदि आते है आप ही वहाँ लिया कीजिए। समालोचनाके लिए पुस्तके और सरकारी रिपोर्टे भी।

---

* श्री महावीरप्रसादजी पोद्दार अब हिन्दी पुस्तक एजेंसीसे अलग है। वह गोरखपुरमें रहते है और गान्धीजीके रचनात्मक कामोंकी देख-भाल करते है।

† देवीप्रसाद शुक्ल बी० ए० सुपरिण्टेण्डेण्ट हिन्दू बोर्डिंग हाउस, प्रयाग।

६. रिपोर्टें या अंगरेजीकी पुस्तकें जो आप न पढ़ सकें मुझे भेज दिया कीजिए। अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें भी, समालोचनाके लिए।

७. बाकी पुस्तकों और रिपोर्टोंकी समालोचना या उनपर नोट लिखकर, नोट और पुस्तकें चौथे-पाँचवें या हर हफ्ते मुझे देखनेके लिए भेज दिया कीजिए।

८ विविध विषयके नोट जितने आप लिख सकें लिख भेजा कीजिऐ। तीसरे चौथे।

९. सम्पादक 'सर०'की डाक आप खोला कीजिए। काम लायक लेख रखकर बाकी रद्दी कर दिया कीजिए। पसन्द किये गये लेखोंकी भाषाका संशोधन करके मुझे भेज दिया कीजिए।

१०. मामूली चिट्ठियोंका जवाब भी आप ही दे दिया कीजिए।

११. जनवरीके लिए मेरे पास न कोई चित्र न लेख। मोतीलाल नेहरूका चित्र वहीं प्राप्त करके ब्लाक बनवाइए, जनवरीके लिए सूचना मिलनेपर मैं नोट लिख दूँगा। नोटकी सामग्री आपको मिल सके तो आप ही नोट लिख दीजिए।

१२. दो महीनेकी कापी मैं खुद ही पोदी *बाबूको दे आया था। कुछ चित्र भी। कुछ लेख उसमें छपे हैं। जो चित्र या लेख बचे हों, शीघ्र मुझे डाकसे लौटा दीजिए।

१३. आपके और गुरुजीके ही भरोसे मैं चार-छः महीने अपना नाम 'सर०' पर और बना रहने दूँगा। पर दो तीन घंटेसे अधिक काम न कर सकूँगा। मेरी नेकनामी-बदनामी आप ही लोगोंके हाथ है।

१४. जनवरीसे शुक्लजीका नाम 'सर०' पर न रहेगा।

२३—१२—१९ म० प्र० द्वि०

---

* चिन्तामणि बाबूके ज्येष्ठ पुत्र

[११६]

दौलतपुर
७-१-२०

नमोनमः

५ का पत्र मिला। पैकेटके भीतरकी सब चीजे भी मिल गईं।

घोषणाका* अनुवाद मैंने ही कर डाला। अब वही छपेगा। आपका भेजा हुआ रक्खा रहेगा।

नोट आपके भेजे पढकर निश्चय करूँगा कि छपेंगे या नहीं।

प० मोतीलालका चरित लेखकको मैंने ही लौटा दिया।

जनवरीमे रगीन चित्र कोई और छापिए। सम्राट्का सादा छापिए। सम्राज्ञीका कोई नहीं। ए० पी० सिंह और माटेगूका सबसे अच्छा जो आपको मिल सके।

मौलिक और अनुवादित ग्रन्थवाले लेखकी बात भूल जाइए।

जनवरीके ७ दिन बीत गये। जो कुछ मेरे पास है उसकी कापी कल परसो भेजूँगा। शीघ्र ही कम्पोज कराकर प्रूफ खूब पढ़िए। अन्तिम प्रूफ निर्दोष मुझे भेजिएगा।

आप और गुरुजी मेरी ऐसी सहायता करें कि मेरा निस्तार हो जाय।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* भारतके सम्बन्धमें ब्रिटिश सम्राट्की घोषणा।

[१२०]

दौलतपुर, रायबरेली
८-१-२०

नमस्कार,

१९१९की 'सरस्वती'के दूसरे खण्ड—जुलाईसे दिसम्बर तक—की जिल्द बँधाकर हमेशाकी तरह भेजनेकी कृपा कीजिए। बदलेकी लिस्ट तथा फ्री लिस्ट भी एक-एक कापी भेजिए, देखूँ कुछ परिवर्तनकी तो दरकार नही।

जनवरीकी कापी आज भेजूँगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२१]

दौलतपुर
१२-१-२०

नमस्कार,

१० जनवरीका पत्र मिला। निवेदन यह है—

१. प्रूफके साथ कापी जरूर भेजिएगा। खूब लगाकर, बराबर करके, मीकर।

२. रंगीन चित्रके प्रूफके साथ अपना लिखा हुआ परिचय भी भेजिएगा।

३. बदलेके पत्रोकी बाबत महीने-पन्द्रह रोज़ बाद लिखूँगा। अभी जाने दीजिए। लिस्ट रखी है। १० रोज बाद आप लिखिएगा, आपके पास कौन-कौन आते हैं।

४—वङ्गविजेताकी समालोचना न छपेगी। बात मनमे रखिए।

५—दिसम्बरके लेखोंका पुरस्कार आप, शुक्लजी और गुरुजीसे पूछ कर भेजिए। आप न जा सकें तो पं० देवीदत्त पूछ आवें।

प्रबन्ध* चौकस न हो तो विशेष हर्ज नहीं। कोई गड़बड़ न होने पावे। उसे अपना समझे रहिएगा—जबतक मालिक हाजिर नहीं या बीमार हैं।

आज काशी संगीत-सम्मेलनके २ चित्र भेजे हैं। पढ़कर पहुँच लिखिएगा।

कुछ अच्छे नोट लिखिए, लेख भी। प० देवीदत्तसे भी लिखाइए। 'सर०'के कामसे जितना समय बचे प्रेसके अन्य काममे लगाइए। समय टेढा है। संभालिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२२]

दौलतपुर
१७-१-२०

नमोनमः

सेवासदनके† संशोधनमें मुझे बहुत श्रम करना पड़ा। कृपा करके धीरजके साथ समय-समय पर भाषाकी शुद्धता और मुहावरेका खयाल करके, संशोधन किया कीजिए जिससे मेरी मिहनत कम हो जाया करे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* प्रेसमें हड़तालके कारण

† यह सेवासदन प्रेमचन्दजीका उपन्यास नहीं है।

[१२३]

दौलतपुर
५-२-२०

नमस्कार,

२ फरवरीका कार्ड मिला। पेरिसपर मैंने लेख लिख लिया।

मस्तिष्कके तर्कके लेखकको भी लिख दिया और लेखके लिए।

उनकी आज्ञा हो तो हवाई द्वीपकी सैर नामक लेखके नीचे बाबू* " का नाम दे दीजिए। उनसे पूछ लीजिए—पता—ज्ञानमण्डल, काशी।

चित्रोंके लिए टिहरीको लिखा, अच्छा किया। कलकत्तेके बंगाली चित्रकारोंको भी लिखाइए। रामेश्वरप्रसादको मैं लिख चुका हूँ।

गोस्वामीजीका रङ्गीन चित्र व्रजाङ्गना फरवरीमें छापिए। उस पर नोट भेजिए। चित्र उन्हें लौटा दीजिए। उन्होंने दो सादे चित्र भी भेजे हैं न? अच्छे हैं? मैंने उनसे कहा है कि उनपर कुछ लिख भेजें। उनके पास और भी चित्र हैं। वे बड़े हैं। मैंने नाम पूछे हैं। लिख दिया है भेजनेका खर्च प्रेस देगा या एक आदमी जाकर उन्हे ले आवेगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१२४]

दौलतपुर
२४-१-२०

नमोनमः,

२२ का पत्र और पाकेटके भीतरकी चीज़ें मिलीं।

प्रूफ़ पढ़कर लौटाऊँगा। उन्हींपर लिख दूँगा, क्या छपे क्या रख छोड़ा जाय।

---

* नाम जान-बूझकर छोड़ दिया है। मूल-पत्रमें सुरक्षित है।

शुक्लजीसे आप या देवीदत्तजी परिव-विषयक लेख प्राप्त करके मुझे भेजिए। लेख जरूर उन्हे मिला होगा, नहीं ब्लाक क्यो बनवाते।

मुकुटधरको ठीक जवाब दिया। लेख और चित्र आने दीजिए।

शुक्लजीवाली कविताएँ ३ रखी। बाकी रद्दीमें डाल दीं।

कौंसिल शब्दको सदा पुलिङ्ग रखा कीजिए।

अनुस्वार अर्द्धचन्द्रका झगड़ा आपपर छोड़ता हूँ।

समालोचनाएँ और पुस्तकें मिलीं। क्या इतनी ही पुस्तकें शुक्लजीसे मिलीं। मिली हो तो और की भी समालोचना समेत भेजिए। फरवरीकी कापीके लिए विभूतिकी कविताका फैसला मैं कर दूँगा।

अच्छा किया शारदाका विज्ञापन इस प्रकार टाला। ऐसा ही किया कीजिए।

किसी अखबार वगैरहकी आलोचना मुझसे पूछकर लिखा कीजिए। प्रभाकी केवल एक आलोचना वेंकटेश्वरमें छपी मुझे पैकेटमे मिली।

निवेदक
म० प्र० द्विवेदी

[१२५]

जूही, कानपुर
७–३–२०

नमस्कार,

राजनाँदगाँवके बाबू पदुमलाल पुन्नालाल बख्शीने सब शर्तें मंजूर कर लीं। वे वहाँ मास्टर है। ८०) पाते हैं। इस्तेफा उन्होंने भेज दिया। चार-पाँच अप्रैल तक खाली हो जायँगे और चले आवेंगे। ६ महीने परीक्षाके तौरपर रहेंगे—६०) पर। बाद मुस्तकिल होनेपर १००) पावेंगे। पहले दो महीने आपके पास प्रेसमें काम करेंगे फिर इतने ही दिन मेरे पास कानपुरमे। काम सीख जानेपर वे प्रेससे ही सरस्वतीका सब

काम किया करेंगे। आनेपर उन्हें अच्छी तरह रखिएगा। उनकी सहायता कीजिएगा। बड़े बाबू*को यह कार्ड सुना दीजिएगा।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[१२६]

प्रणाम,

४ता० का पत्र मिला। पैकेट भी मिला। पैकेटमे पूनेके प्राच्य विद्या-सम्मेलनका चित्र नहीं मिला। वहीं रह गया होगा। ढूँढिए। मिला या नहीं, लिखिए। मिले चाहे न मिले उसकी कीमत ३॥)

पं० हरिरामचन्द्र दिवेकर एम० ए०

महिलाश्रम, हिंगणे [पूना]

को मनी० आ० से भेजिए। भेजनेकी सूचना मुझे दीजिए।

टासीटोरीवाला नोट निकाल दीजिए। उनपर अगली संख्यामे १ लेख निकालूँगा। पत्रका चित्र मैंने रख लिया है। फोटो भी भेजूँगा। यू० पी० गैजट लौटा दूँगा। पञ्चायत-बिल निकालकर। वह आपके कामका नहीं, मेरे कामका है। मुझे और कापी मिल गई तो उसे भी पीछे लौटा दूँगा।

सब मैटर १४६ कालम है। २२ कालम हवाई द्वीपकी सैर निकालिए। ५ कालम बंटीवाला लेख निकालिए। ६१ कालममें जहाँ "काउंसिल ड्राफ्ट" हेडिंग है, उस हेडिंगके ऊपर ही तक इस संख्यामे छापिए। शायद इससे भी कम। चित्र-परिचय और पोदी बाबू पर भी नोट जायगा। इस तरह कोई आधा फ़ार्म बढ़ेगा याने ७ के ७॥ हो जायँगे। सो इतना ही छापिए। प्रूफ़ कल-परसों तक लौटाऊँगा। साथके नोटमे संशोधन कर दूँगा।

---

* स्व० श्री चिन्तामणि घोष।

निजामके उर्दू-फ़ारसी-ग्रन्थ विषयक नोट मिल गया।

पोद्दी बाबूपर नोट लिखकर आप जल्द भेजिए। मेरी बुरी दशा है। परसों रातको मुझे फिर मूर्च्छा आयी। ३ घंटे बेहोश रहा। मानसिक काम करनेसे फिर यह रोग लौट पड़ा। बुरा दौरा हुआ। कल तो चल-फिर तक न सकता था। आज कुछ अच्छा हूँ। दिमागी काम नहीं कर सकता। कृपा कीजिए। अच्छा नोट भेजिए। मेरी कुछ अधिक मदद कीजिए—आप और देवीदत्त दोनों। ३ लेख संशोधन करके आपने नहीं लौटाये। १ पुस्तककी समालोचना भी नहीं भेजी। पं० देवीदत्तको यह पत्र दिखा दीजिएगा।

हाय-हाय, बड़े बाबूकी लड़की भी चल बसी। भगवान् बड़ा निष्ठुर है। क्या करनेवाला है।

म० प्र० द्विवेदी

६–३–२०

[१२७]

जूही, कानपुर

१२–३–२०

प्रणाम,

१० का कार्ड मिला। मैं तो ५ अप्रैल तक भानजीके गौनेके लिए गाँव जाऊँगा। वहाँ दो-ढाई महीने रहना पड़ेगा। वहाँ *बख्शीजीको कैसे बुलाऊँ। गाँवकी तकलीफें देखकर कहीं भाग न जायँ। अपने यहाँ कुछ दिन रखिए। भले आदमी हों और रहनेके लक्षण देख पड़ें तो गाँवपर ही बुला लूँगा। मैं तो यही चाहता हूँ कि कोई मेरे पास ही रहे। नहीं, कानपुर लौटनेपर बुलाऊँगा। बड़े बाबूसे कह दीजिए।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

---

* श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

[१२८]

प्राइवेट—गोपनीय

दौलतपुर, रायबरेली
५ जून १९२०

प्रणाम,

आचार्य व्रजराजके* विषयमे आपका पत्र मिला। बड़े बाबूकी आज्ञा शिरसाधार्य है। एक पत्र आचार्य महोदयके नाम भेजता हूँ। उसे बड़े बाबूको सुनाकर उन्हे दे दीजिएगा। फिर इस पत्रको भी बड़े बाबूको सुनाकर फाड़ डालिएगा। इसका मज़मून और किसीके कानमे न पड़े।

व्रजराज हिन्दी खासी लिख लेते है। अपने विचार भी वे अच्छी तरह प्रकट कर सकते है। पर उनके इस अकेले लेखसे उनकी योग्यताका ठीक-ठीक पता नहीं लग सकता। उनके और कोई लेख या ग्रन्थ कभी मैंने नही पढ़े। यह लेख तो उन्होने शा (Shaw) वगैरहकी किताब—अँगरेज़ी ग्रन्थकारोके चरितके बलपर ही लिखा है। औरोके भाव हिन्दीमे लिख दिये हैं। भाषा इनकी है भाव औरोके। फिर लेखमे यत्रतत्र अनावश्यक अँगरेज़ी नाम और अँगरेज़ी अवतरण दिये है। लोग अन्त तक शायद इनका लेख पढ़ेगे भी नहीं।

व्रजराज संस्कृत नहीं जानते। इस दशामे इनसे शब्द-शुद्धिकी आशा विशेष नहीं की जा सकती। इन्होंने हिन्दी साहित्यके अच्छे-अच्छे ग्रन्थ पढ़ डाले हैं, यह भी इनके इस लेखसे पता नहीं चल सकता। परिश्रम करें और साहित्य-सागरमे डूबकर अच्छे-अच्छे रत्न निकालना चाहे तो इनसे प्रेसका कुछ काम अवश्य चल सकेगा। पर यह सब इन्हे

---

* अध्यापक कायस्थ पाठशाला, प्रयाग।

गवारा होगा या नहीं, मैं नहीं कह सकता। अँगरेजीके एम० ए० तो समझते हैं कि हिन्दी और संस्कृतमे उनके सीखनेको कुछ है ही नहीं। जबतक ये हिन्दीसे प्रेम न करेंगे और हिन्दीकी नई पुरानी पुस्तकें देखेंगे नहीं, तबतक अच्छी-बुरी पुस्तकका भेद ये कैसे समझ सकेंगे और यह कैसे जान सकेंगे कि किस पुस्तकके प्रकाशनसे प्रेसको ४ पैसे मिलेंगे। इन्हें पुस्तक-प्रकाशन सम्बन्धी दूर-दूर तककी खबर रखनी होगी।

जहाँ तक केवल हिन्दीसे सम्बन्ध है वहाँ तक बख्शीजी* इनसे अधिक रसहृदय और हिन्दी-प्रेमी जान पड़ते हैं। वे कवि भी हैं, सस्कृतज्ञ भी हैं। हिन्दी भी मजेकी लिख लेते हैं। आगे और भी तरक्की करनेकी उम्मेद है। व्रजराजको २००) पर और बख्शीजी को १००) पर रखनेसे कहीं ऐसा न हो जो बख्शीजी छोड़ जायँ। उनको जबलपुरके कर्मवीर और शारदा वाले बहुत प्रलोभन दे चुके हैं। और अब भी शायद दे रहे हों। खुद सप्रेजीने उन्हें इंडियन प्रेसमे आनेसे रोका था। सब बातोंपर बड़े बाबूको विचार कर लेना चाहिए। मै बख्शीके कामसे सन्तुष्ट हूँ। इस सन्तोषका कुछ बोध आपको भी है क्योंकि आपकी मददसे ही जो कुछ उन्होंने किया है, किया है। मै उन्हे तीन ही महीने बाद याने जुलाईसे ही मुस्तकिल कराना चाहता हूँ, जिससे उन्हे १००) मिलने लगे। अगर वे असन्तोषके चिह्न प्रकट करे तो उन्हे पहले ही उस पाँच रुपयेकी तरक्की और दे देनी चाहिए, जिसमे जायँ नहीं। ऐसा और आदमी अब न मिलेगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

---

* श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी। हिन्दीके प्रसिद्ध कहानी लेखक और समालोचक।

[१२६]

दौलतपुर
५–६–२०

प्रणाम,

१ जूनका पत्र मिला। अब मेरे पैरका रोग अच्छा है। चित्त शान्त है।

लेख और नोट सब आपके निर्देशानुसार मिल गये।

परमाणुकी शक्तिके विषयके तीनो चित्र लौटाता हूँ। ब्लाक बनवाइए। छपनेके लिए लेख आनेपर लेख देखकर चित्रोका नामकरण कर दीजिएगा।

सूचीकी कापी भी लौटाता हूँ। किसी भी लेख या चित्रका नाम न रह जाने पावे।

एक लेख संशोधनके लिए पैकेटमे मिलेगा। उसे बख्शीजीको दे दीजिएगा।

वेंकटेश्वर मेरे पास यो ही कभी-कभी आ जाता है। सब अङ्क नहीं आते। हलवाइयोंने मेरे नोटके उत्तरमे क्या लिखा है मैने नहीं पढा। पढ़नेकी इच्छा भी नहीं।

रविबाबूके चित्रकी छपी हुई कापी लौटाता हूँ। बेहतर है, इसी ब्लाकको छाप दीजिए। शान्तिनिकेतनके छात्रो और अध्यापकोंका चित्र ठीक न हो तो जाने दीजिए। या पटल बाबूसे कहिए, रवि बाबूको लिख दे। वे और चित्र भेज देगे। चित्र छापना उनके आश्रमके फ़ायदेकी बात होगी।

पटल बाबूके नाम अँगरेज़ीमे चिठ्ठी भेजता हूँ। उन्हें दे दीजिएगा। बख्शीजीको किसी पुस्तकालयका मेम्बर करा दीजिए, जिसमे मार्डनरिव्यू '

इण्डियनरिव्यू वगैरह आते हों। चन्दा प्रेस दे। यही मैंने अँगरेजीमें लिखा है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३०]

दौलतपुर
५—६—२०

श्रीयुत पांडेजीको प्रणाम,

मैं जुलाईसे बख्शीजीको मुस्तकिल कराना चाहता हूँ। अभी तक उन्होंने आपकी मददसे काम किया है। अब मैं उनकी स्वतन्त्र कारगुजारी देखना चाहता हूँ। आप कृपा करके उन्हींसे अब 'सरस्वती'-सम्पादनका सारा काम कराइए। जो कुछ पूछें वह बतला अवश्य दीजिए। देखूँ तो ये अकेले काम कर सकेंगे या नहीं। मेरे शरीरकी बुरी दशा है। मैं अलग होना चाहता हूँ। अगर बड़े बाबू आज्ञा देंगे तो नाम अपना दिसम्बर तक 'सरस्वती' पर रहने दूँगा। पर काम अब मैं इन्हींसे कराना चाहता हूँ। कापी मैं देखूँगा, प्रूफ़ भी।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

पुनश्च—

बड़े बाबूको सुना दीजिएगा।

[१३१]

दौलतपुर, रायबरेली
१०—६—२०

प्रणाम,

७ जूनकी चिट्ठी कल मिली। व्रजराजजीका हाल मालूम हो गया। ठीक है। इस दशामें बख्शीजीको बुरा माननेकी बात नहीं। बड़े बाबूने

सोच-समझकर काम किया है। बहुत अच्छा है। ब्रजराजजी काम संभाल ले तो फिर क्या कहना।

मेरी शक्ति अत्यन्त क्षीण है। नोट या चिट्ठी लिखनेसे भी सिरमे दर्द पैदा हो जाता है। अन्यथा बड़े बाबूकी कृपासे घर बैठे इतनी आमदनी न छोड़ता। अगर उनकी यही आज्ञा है तो ६ महीने मेरा नाम सरस्वतीपर और रहे। बख्शीजी जुलाईसे लिखने और संशोधन आदिका सब काम करें। कापी देखकर मै पास करूँगा और प्रूफ देखूँगा। हो सका तो दो-एक नोट भी लिख दूँगा। इधर सितम्बर तक तो काम चला ले जाऊँगा। आगे जाड़ोमे मेरी तकलीफ़े बढ़ जाती हैं। तभी डर है। जो कुछ हो, बड़े बाबूकी आज्ञाका पालन शरीरमे प्राण रहते अवश्य करूँगा। उन्हे यह पत्र चुपचाप सुनाकर फाड़ डालिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३२]

दौलतपुर, रायबरेली
२२–७–२०

प्रणाम,

२० जुलाईका पत्र मिला। आप या बड़े बाबू अन्तर्यामी हैं। कल बख्शीजीकी भेजी हुई दो रंगीन तसवीरें सुबह मिलीं। आज ही उन्हें लौटाया। उनके पैकेटके भीतर अपनी चिट्ठीमे मैने खुद ही लिख दिया है कि जुलाईसे आपका भी नाम सरस्वतीके कवर पर रहे। पैकेट बन्द करनेके बाद आज ही ८ बजे आपका पत्र मिला। उनका नाम ज़रूर छपे। मैं यही चाहता

था। इससे लोग उनको जानेहींगे नहीं, उनकी ज़िम्मेदारी भी बढ़ेगी। सरस्वतीकी नेकनामी या बदनामीमे उन्हें भी अपनेको शरीक समझना पड़ेगा। बडे बाबूसे मेरे विचार कह दीजिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३३]

दौलतपुर, रायबरेली
८-४-२८

श्रीयुत पाण्डेयजीको नमस्कार

५ अप्रैलका कृपा-कार्ड मिला। कृतज्ञ हुआ। पुस्तकोंको एकके बाद एक इस क्रमसे छापिए—

१—आलोचनाञ्जलि

२—पुरावृत्त

३—प्राचीन चिह्न

४—चरित-चर्य्या

प्रत्येक पुस्तककी भूमिकाका प्रूफ मुझे भेजिएगा। इससे मुझे मालूम हो जाया करेगा कि कौन पुस्तक कब खतम हुई। इन पुस्तकोंका छपना आप हीकी कृपा पर अवलम्बित है। इनके खतम होनेपर और भेजूँगा।

सम्मेलनके सम्बन्धमे मेरे पास कई चिट्ठियाँ आई हैं। जो आन्दोलन हुआ है उसीसे यथेष्ट सफलता होनेकी आशा है। मन्त्रिमण्डल अब शायद ही जम सके। कुछ न कुछ परिवर्तन इस दफ़े जरूर होगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३४]

दौलतपुर, रायबरेली
२७-१-२९

श्रीयुत पाण्डेयजीको सादर प्रणाम,

चरितचर्य्याकी कापी मिली। पत्र भी मिला। कृतज्ञ हुआ। आपहीकी बदौलत ये पुस्तकें इतना शीघ्र निकल गईं। आपको अनेक धन्यवाद

टी० बी० का काम बहुत ज़रूरी है। उसे कीजिए। जब उससे फ़ुरसत मिले मुझे एक पोस्टकार्ड भेज दीजिए। अब सिर्फ़ एक ही दो पुस्तकें शेष हैं। और सब छप चुकी। आपकी सूचना पानेपर ही मै पटल बाबू को लिखूँगा।

पुनरपि मेरा कृतज्ञताज्ञापन स्वीकार कीजिए।

आपका
म० प्र० द्विवेदी
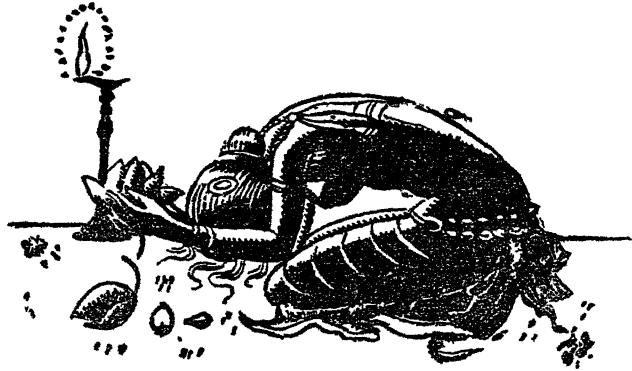
पं० केशवप्रसाद मिश्र

पं० केशवप्रसाद मिश्रका जन्म चैत्र कृष्ण ७ संवत् १९४२ को काशीमें हुआ। इनके पिताका नाम पं० भगवतीप्रसाद मिश्र था।

पं० केशवप्रसादजी वैसे इंटर पास थे। पर संस्कृत, अंग्रेज़ी और हिन्दीका इन्होंने बड़ा ठोस अध्ययन किया था। प्रारम्भमें ये काशी के कुछ स्कूलोंमें अध्यापक थे। सन् १९१४ से १९१६ तक सनातन-धर्म स्कूल इटावामें अध्यापन कार्य किया। इसी कालसे इनका सम्बन्ध साहित्य-जगत्से हुआ। ये बड़े अच्छे कवि थे। सन् १९१७ से १९२७ तक मिश्रजी ने हिन्दू स्कूल, कमच्छा (काशी) में अध्यापन कार्य किया। १९२८ से १९४१ तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें हिन्दीके अध्यापक रूपमें काम किया। १९४१ से १९५० तक हिन्दी विभागके अध्यक्ष थे। इसके बाद अध्यापन-कार्यसे अवकाश ले लिया।

फाल्गुन शुक्ल १३ सं० २००७ को आपकी मृत्यु हो गई।

पं० केशवप्रसाद मिश्र विद्याचरण-सम्पन्न ब्राह्मण थे। भाषा-विज्ञानके वह अधिकारी विद्वान् थे। बहुत ही अच्छे अध्यापक, सीधे, मर्मज्ञ और सरल चित्तके व्यक्ति थे। मिश्रजीका प० महावीर-प्रसाद द्विवेदीसे बहुत घना सम्बन्ध था। मिश्रजीके नाम द्विवेदी जीके बहुत से पत्र हैं—जो श्री मुरारीलालजी केडिया (काशी) के पास सुरक्षित हैं। उन पत्रोंमें से महत्त्वपूर्ण पत्रोंको यहाँ दिया जा रहा है।

[१३५]

जूही, कानपुर
१-४-१५

नमोनमः,

पत्र मिला। काशीवाली चिट्ठी पढ़कर बहुत कौतुक हुआ। मेरे पास भी एक चिट्ठी आई है। टाइपमे लिखी हुई। अँगरेज़ीमे।

कविता ठीक बन गई। विशेष मनोहारिणी हो गई। एप्रिलकी 'सर०' कम्पोज हो चुकी, नहीं उसीमे दे देता। अब मईमे दूँगा। विलम्बके लिए क्षमा-प्रार्थना।

विषय मैं क्या बताऊँ, आप ही निश्चय कीजिए। जिस विषयपर लिखनेको जी चाहे लिखिए। संसारमे विषयोंकी कमी नहीं। मुहावरेका ख्याल रखिए। सरलताका भी। दीर्घको लघु न पढना पड़े। बात ऐसी हो कि दिल पर असर करे।

आप धन्यवाद दे दें जो आपके लेखमे दो ही गलतियाँ रह गईं। मैंने अनेकोंकी सूचना प्रेसमे दे दी है। स्थायी प्रूफ संशोधक बीमार है। नये संशोधक बहुत ग़लतियाँ करते है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१३६]

दौलतपुर, रायबरेली
६-६-१७

प्रणाम,

मेघदूतके संशोधित पद्य मिले। वैसे ही छाप दूँगा।

इसी क्रमसे नंबरवार मूल श्लोक और उनके नीचे हिन्दी भावार्थ भेजनेका भी कष्ट उठाइए। इस विषयमें मैं आपसे प्रार्थना कर चुका हूँ। उर्सलोन्ध्र वा शिलीन्ध्र कहीं छरीलेको तो नहीं कहते? दोनोंमें नाम-साम्य है। छरीला एक सुगन्धित चीज़ है। सिर मलनेके मसाले और उबटनमें काम आता है। दाक्षिणात्य उसे पहाड़ या पत्थरका फूल कहते हैं। छत्रकहीके सदृश वह पहाड़ी भूमिपर उगता या फूलता है।

भवदीय

म० प्र० द्विवेदी

[१३७]

जूही, कानपुर

१३-१०-२१

प्रणाम,

आपका ८ अक्टोबरका पोस्टकार्ड मिला। आप मंसूरीमें विहार कर रहे हैं। मैं अपने झोपड़ेमें पड़ा सैकड़ों चिन्ताओंकी मारसे अधमरा और हतबुद्धि हो रहा हूँ। कभी-कभी 'सरस्वती' वग़ैरहमें जो कुछ अटसट लिख देता हूँ उसका कारण लाचारी है। मेरी बुद्धिमें जड़ता आ गई है। सुकुमार विचार, मेघदूतकी भूमिकाके योग्य, मुझे नहीं सूझते। दो घंटे लिखनेकी चेष्टा की, पर एक सतर भी न लिख सका। हफ्तों मिहनत करके आपकी कापीमें सूचनाएँ लिखी थीं। भूमिका लिखना तो जरा देरका काम था। परन्तु अब नहीं कर सकता। भूमिका आप कृष्णदाससे लिखाइए। मेरा नाम देना ही हो तो आप और वे जो कुछ लिख भेजेंगे मैं उसपर दस्तख़त कर दूँगा। उस समय यदि कुछ विचार सूझ पड़े तो लेखको घटा बढा भी दूँगा।

निवेदनकारी

म० प्र० द्विवेदी

[१३८]

दौलतपुर
४—७—२४

नमोनमः,

५ जूनका पोस्टकार्ड समयपर मिल गया था। मेघदूतकी कापी आज मिली। कृतज्ञ हुआ। धन्यवाद। मेरा स्मरण व्यर्थ ही किया। मैंने किया ही क्या है? आपका यह अनुवाद आदर्श है और सभी अनुवादोंसे बढ़कर।

मैं बीचमे बहुत बीमार हो गया था। अभी चल-फिर नहीं सकता।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

नोट—पं० केशवप्रसाद मिश्रजी काशी आ गये थे।

[१३९]

[श्री मुरारीलाल केडियाके नाम पत्र]

दौलतपुर, रायबरेली
२२—९—३५

श्रीमान्

कृपा-पत्र मिला। आपने जो कार्य्यारम्भ किया है, ईश्वर करे उसमे आपको पूर्ण सफलता मिले। बहुत ही उपयोगी और श्रेयस्कर आयोजन है।

कार्डपर हस्ताक्षर करके लौटाता हूँ। *

वार्धक्यके कारण और कुछ करन-धरने या लिखने-पढ़नेकी शक्ति मुझमें नहीं। क्षमा कीजिए।

पुस्तकें मिल गईं। कृतज्ञ हुआ। पद्माकर-पद्मामृतका पान करके मैंने आनन्द-लाभ किया। उसके सम्पादक पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र क्या कभी हिन्दू विश्वविद्यालयमें तो न थे! इस नामके एक मिश्रजीने मेरा दिया हुआ वजीफा कई साल तक लेकर मुझे कृतकृत्य किया है। †

कृपापात्र

म० प्र० द्विवेदी

---

* श्रीकेडियाजीने सभी साहित्यकारोंके हस्ताक्षर संग्रह करनेका काम शुरू किया है। उनके उसी कार्डपर द्विवेदीजीने हस्ताक्षर करके वापस किया।

† पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र हिन्दी विभाग, हिन्दू विश्वविद्यालयको ही वजीफा दिया था।

पं० देवीदत्त शुक्ल

पं० देवीदत्त शुक्लका जन्म संवत् १९४५ में हुआ। यह उत्तर प्रदेशके उन्नाव ज़िलेके पुरना बक्सर नामक गाँवके रहनेवाले हैं। अब प्रयागमें रहते हैं।

शुक्लजीने सेंट्रल हिन्दूकालेज बनारससे एफ० ए० तक शिक्षा प्राप्त की है। लड़कपनसे ही साहित्यिक ग्रन्थोंके अध्ययनका इनको शौक था। आपने संस्कृतका भी अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है। रायपुर ज़िलेके एक स्कूलमें अध्यापनका कार्य किया था। पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके कहने पर सन् १९११ ई० में सरस्वतीमें आये।

शुक्लजीका गाँव पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीके गाँव दौलतपुरसे दो मीलके फासले पर था। शुक्लजी प्रारम्भसे ही साहित्यिक रुचिके थे, इसलिए वह द्विवेदीजीके सम्पर्कमें आ गये। द्विवेदीजी ही शुक्लजीके साहित्य-गुरु थे। द्विवेदीजीका शुक्लजीसे घरेलू सम्बन्ध था। द्विवेदीजीके अनेक महत्त्वपूर्ण संस्मरण उनके पास हैं। द्विवेदीजीकी अनेक पारिवारिक और साहित्यिक बातें उनको याद हैं। प्रसन्नताकी बात है कि शुक्लजीने उन सबको लिख लिया है। आशा है उनके ये संस्मरण शीघ्र ही प्रकाशमें आ जायेंगे।

[हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयागके संग्रहालयसे]

[१४०]

जूही, कानपुर
११-११-१५

नमस्कार,

पोस्टकार्ड मिला। दोनो लेख भी मिले। आपने बड़ी कृपा की। मैं बहुत कृतज्ञ हुआ। इन लेखोको सरस्वतीमे निकालनेकी मैं अवश्य चेष्टा करूँगा।

अवकाश मिलनेपर कुछ न कुछ लिख भेजा कीजिए। जहाँ तक हो सके—भाषा सरल बोलचालकी हो। क्लिष्ट संस्कृत शब्द न आने पावे। मुहावरेका ख्याल रहे। वाक्य छोटे।

सब यथा योग्य—

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१४१]

जूही, कानपुर
२०-११-१७

भाई देवीदत्त,

१७ ता० की चिट्ठी मिली। "हमे इस तरहकी भेटे न चाहिएँ" यह जानकर रंज हुआ—

"ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं मित्रलक्षणम्॥"

यदि मुझे आप अपना बन्धु बनाना नहीं चाहते तो क्या मित्र-भाव भी रखना नहीं चाहते ?

आप जब जो चाहिए दीजिएगा। मै ले लूँगा। आपको नही चाहिए, क्या यह मैं नहीं जानता, पर बन्धुत्व और मैत्री भाव क्या चाहनेकी अपेक्षा रखते है ?

म० प्र० द्विवेदी

[१४२]

जूही, कानपुर
१२-११-२०

नमस्कार,

९ नवंबरका पोस्टकार्ड मिला। विदाईकी पहुँच लिख चुका हूँ। मैंने तो बड़े बाबूसे खुद ही कहा था कि देवीदत्तको 'सरस्वती'का काम दीजिए। पर उन्होने आपके लिए 'बालसखा'का स्वतंत्र काम देना ही मुनासिब समझा। मेरी समझमे तो 'सरस्वती'का काम 'बालसखा'से अधिक महत्त्वका है। उन्नति करनेके लिए इस काममे बहुत जगह है। योग्यता की बात जाने दीजिए। काम करनेसे तो अयोग्य भी योग्य हो जाते हैं। आप तो समर्थ योग्य हैं। मुझे यह जानकर संतोष हुआ कि मेरे बाद 'सरस्वती'से आपका संबंध हो जायगा। पूरी आशा है आप और बख्शी जी इस कामको बहुत अच्छी तरह कर लेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१४३]

जूही, कानपुर
१७–११–२०

नमस्कार,

१३ की चिट्ठी मिली। पेंसिलका लेम्प भी मिला। कापी किये हुए लेखको मैंने पटल बाबूको भेज दिया। देखना जनवरीके आरंभमे छपे।

हाँ प्रेसकी चिट्ठीमें अभिनन्दन भी था और ५० रुपया महीना पेंशनकी घोषणा भी।

आज मुझे मालूम हुआ है कि आप 'बालसखा'का भी काम करेंगे और बख्शीजीकी मदद भी। यह और अच्छा हुआ। वह काम जिम्मेदारीका बना रहेगा, इधर 'सरस्वती' के कामका भी अनुभव होगा। पर काम बढ़ेगा। आशा है प्रेस अधिक कामका खयाल करेगा और जनवरीसे ६० के बदले आपको ६५ रु० देगा।

दिसम्बरकी कापी मैं भेज चुका। उसमें एक लेख मकड़ीपर है। उसके नीचे बख्शीजीसे लिखा दीजिए :

ब्रूस साहबकी पुस्तक What Spider Can Do के आधार पर।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१४४]

जूहीकलाँ, कानपुर
२०–३–२४

नमस्कार,

जो पोस्टकार्ड आपने दौलतपुरके पतेपर भेजा था वह भी यहाँ परसों मिल गया। दूसरा भी। फरवरीकी 'सरस्वती' कल मिली। बहुत

विलम्बसे निकली। मार्चकी कापीके साथ मैंने एक नोट भेजा था 'अफीम की बेगेकटोक बिक्री'। उसे आपने फ़रवरीमें ही निकाल दिया सो बहुत अच्छा किया। फरवरीकी कापीमें दो नोट और थे। १. विज्ञापन-विमर्श और २. देशी भाषाओं-द्वारा शिक्षा। वे फ़रवरीमें नहीं छपे। क्या मिले नहीं या खो गये? या छापना ठीक नहीं समझा गया, अगर सबसे पिछली बात हो तो संकोचकी जरा भी जरूरत नहीं। न फाड़ा हो तो अब उन्हें फाड़ फेंकिए। एक भी आक्षेप-योग्य नोट या लेख 'सरस्वती'में न छपना चाहिए।

कमलाकिशोरके रोगकी इतनी चिकित्सा होनेपर भी रुधिर-विकार नहीं गया। डाक्टरोंकी परीक्षासे यह बात मालूम हुई। विकारके चिह्न भी शरीरपर प्रकट हो गये हैं। अब आजसे उन्हें दवाकी पिचकारियाँ (injections) शरीरपर लगवानी होंगी। आठ-बार आठ-आठ रोज बाद। इसमें बड़ा खर्च है। लेकिन लाचारी है। इस दुःखके पीछे बड़ी हैरानी उठानी पड़ी है।

उधर उसकी छोटी बहन असाध्य रोगसे रुग्ण है, शरीरका फूलना, मासिक धर्म न होना, मूत्रमें शरीरस्थ धातुओंका गल-गलकर गिरना, बड़ा भयंकर है। मूत्र-परीक्षासे ये बातें डाक्टरोंको ज्ञात हुईं। यह भी एक प्रकारका प्रमेह है—Nephritis कहाता है, दवा करा रहा हूँ। खाना-पीना बन्द है, सिर्फ दूधपर रहना है।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१४५]

दौलतपुर, रायबरेली
५—११—२५

नमस्कार,

३ ता० का पोस्टकार्ड मिला। बहुत अच्छा। उन दो सतरोंको निकाल दीजिए। उनकी जगह नीचेका मजमून रख दीजिए।

इस कविताकी दो पँक्तियोंका आशय है, कि न मालूम कबसे यह भारत सुनसान मसान हो रहा है। इस कारण हे व्योमकेशजी, झटपट आकर इसे विकराल विपत्ति-विषसे बचा लीजिए।

प्रसंग ठीक कर दीजिए। आवश्यकतानुसार शब्दोंमे फेरफार कर दीजिए या जो मजमून ऊपर मैंने लिखा है, उसे और किसी तरह लिख दीजिए।

इसी नोटमे एक जगह 'अफ़रीकाका सहारा' है। उसे 'अफ़रीकाके रेगिस्तान' कर दीजिए।

बख्शीजीके इस्तीफेका हाल मुझे भी मालूम हो गया है। पटल बाबूने लिखा था। मैंने मुनासिब उत्तर दे दिया है। काम जरूर ज़ियादह होगा। पाडेजी वगैरहसे मदद लेकर किसी तरह निपटाइये। मेहनत जरूर पड़ेगी। मगर योग्यताकी परख ऐसे ही समयमे होती है। मेरे पास इस समय कोई लेख या नोट नही। लिख सकूँगा तो भेजूँगा।

और शिकायतोंके सिवा आजकल मेरा उन्निद्र रोग फिर उभड़ा है। बहुत तंग कर रहा है।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१४६]

दौलतपुर
२९-१-२९

नमस्कार,

जनवरीकी 'सरस्वती'मे आपने एक अच्छी दिल्लगी कर डाली। मेरे लेखके पहले पृष्ठके बीचमे तो मेरे नामका इश्तहार दे दिया। पर

अन्तमे 'द्विरेफ' ही रहने दिया। वहाँ भी क्यो नाम न दे दिया ? मै अपना नाम इस लेखमे न देना चाहता था।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

[१४७]

चौक, कानपुर
५-९-२९

नमस्कार,

घरपर तबीयत बिगड़ चली थी। इससे कुछ दिनके लिए यहाँ चला आया हूँ। 'सरस्वती' और 'बाल-सखा' वगैरह यहीं भिजवाया कीजिए—चौक कानपुर। सबसे कह दीजिएगा।

कानपुरके पं० जगदम्बाप्रसाद 'हितैषी' बड़े अच्छे कवि हैं। 'सरस्वती'के कविता-स्तम्भ चमकानेके लिए मैने उनसे कहा था कि आपको कभी-कभी कविता भेजा करे। उन्होने शायद भेजा भी। पर पुरस्कार देना तो दूर आपने उन्हे 'सरस्वती' तक न भेजी। अब भेजिए। पहा० पं०* से उनकी कविता हजार दर्जे अच्छी होती है। उन्हे कुछ निश्चित मासिक पुरस्कार मिले तो वे हर महीने अच्छी-अच्छी कविता भेजे।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१४८]

दौलतपुर
३-१०-३१

नमस्कार,

पो० का० मिला। टाइमटेबल आजकी डाकसे नहीं आया। भेजा है तो आ ही जायगा।

---

* मूल पत्रमें जो नाम है, उसे हमने ज्योंका त्यों नहीं दिया है।

. . . छोटी बिट्टीकी जेठकी लडकीके पतिके बडे भाई हैं। यहाँ मुझसे मिलने भी आये थे। रीडरबाज़ोकी अकसर खबर लिया करते है। इससे वह लेख उन्हे भेजा। मना किया था कि मेरा नाम प्रेसवालो तकसे न बतावे। उन्होने विश्वासघात किया। अपने पेशेपर बट्टा लगाया। एडिटर ऐसा नही करते। दो-तीन हफ्ते पास रखकर लेखका अन्तिम अंश काटकर छापा। उसमे पाठकोंसे यह भी प्रार्थना थी कि कोई उसका अँगरेजी अनुवाद डाइरेक्टरको भेजे ताकि किताबकी ग़लतियाँ दूर कर दी जायँ। मुनियाँ ७ वर्षकी, मदरसेमे वही किताब पढ़ती है। तारवाले सबककी बातें मुझसे पूछने लगी। वह समझी नही। तब मैंने उसे पढा। पढ़नेपर लिखने, छापने और मंज़ूर करनेवालोपर क्रोध आया। इससे वह लेख लिख मारा—क्या एक रद्दी काग़ज़पर बसीटकर भेज दिया। उस भले आदमीने मेरा नाम प्रकट कर दिया। बताइए अब क्या करूँ।

पं० रामप्रसादकी शकल-सूरत तक मैंने नही देखी। कौन कहाँके हैं, नही जानता। कभी पत्र-व्यवहार तक नहीं हुआ। भक्त-अभक्त होने की मुझे क्या खबर? कुछ दुश्मनी तो निकाली नही। सर्वसाधारणका लाभ समझकर लेख लिखा। जो प्रायश्चित्त कहिए करूँ। या उन्हींसे पूछिए क्या आज्ञा है। * को तो मै अब कुछ लिखना चाहता नही।

आपका

म० प्र० द्विवेदी

---

*नाम जान-बूझकर नही दिया जा रहा है। सम्बन्धित व्यक्ति आज हिन्दीके अध्यापक और साहित्यिकके रूपमें प्रसिद्ध हैं।

कानफिडेंशल

[१४९]

दौलतपुर
४–२–३२

नमस्कार,—

आज ने आपको एक कार्ड लिखा है। मैं उनसे ार उनके कुटुम्बियोंसे यहाँ तक कि चिट्ठी तक से—प्रसन्न नहीं। जबसे शादी हुई, ये लोग मुझसे रुपया ऐंठनेकी फिक्रमे रहते हैं, हालाकि अब तक मैं ६००) के ऊपर नकद दे चुका। कल कहते थे, मुझे डोकरईने जमींदारी मोल ले दो। तब मैं जप्त न कर सका। जो कुछ जीमे आया कह डाला। जीवनी लिखनेका ढकोसला सिर्फ पुस्तक बेचकर रुपया कमानेसे है। न जनताके लाभके लिए, न मुझपर प्रेमके कारण, न हिन्दी-साहित्यकी हितप्रणासे। मैंने लिखनेकी अनुमति नही दी, सिर्फ यह कहा कि मेरे विषयमे जिसका जो जी चाहे लिख सकता है। मेरी लेख-संग्रहकी कुछ पुस्तकें माँगी। मैंने दे दी है।

आपकी प्रश्नावली मैंने रख ली है। उत्तरमें कुछ लिखनेका वादा नही किया। ये सब बातें आपके जाननेके लिए लिखी है। मनमे रखिएगा। इस कार्डको फाड़ फेंकिये। इसकी पहुँच लिख भेजिएगा।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५०]

दौलतपुर, रायबरेली
५–२–३३

नमस्कार,

पो० का० मिला। सर० की कापियाँ भी मिल गईं। मुझमे अब कुछ

विशेष लिखनेकी शक्ति नहीं। आपके कामका हो तो नीचेका श्लोक किसी संख्यामे दे दीजिएगा। किसीको दिखा लीजिएगा; कोई भूल व्याकरणकी न हो—

प्रार्थना

"कवीश्वरैर्वेदविदां वरैस्तथा
समर्चिता भक्तिभरेण या सदा
समस्तविद्याविभवस्य देवता
सरस्वतीं रक्षतु सा सरस्वती ॥"

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५१]

मासिक पत्रिकाओंके कार्यकी व्याप्ति

हम लोगोने जैसे और अनेक बाते विदेशियो—विशेष करके पश्चिमी देशोके निवासियो—से सीखी है, वैसे ही मासिक पत्र और पत्रिकाएँ निकालना भी उन्हीसे सीखा है।

पश्चिमी देशोने अपने मासिक साहित्यका बॅटवारा-सा कर लिया है। ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, स्वास्थ्य, खेलकूद, व्यायाम, राजनीति आदि कितने ही विषय ऐसे है जिनके सम्बन्धमे अलग-अलग पत्र और पत्रिकाएँ प्रकाशित होती है। इससे बहुत सुभीता होता है। पाठक अपनी रुचिके अनुकूल अपने इच्छित विषयके पत्र लेते और पढ़ते है।

अपने देशमे शिक्षाकी कमी है। इस कारण कार्य्य विभाग या विषय-विभाजनसे काम नही चल सकता। क्योंकि पढ़नेवाले पर्याप्त

संख्यामे नही मिल सकते। इस दशामे हमे चाहिए कि हम अपने पाठकोकी विद्या-बुद्धि, ज्ञान-लिप्सा और मनोरञ्जन आदि सभी बातोका खयाल करके ऐसे ही लेखोका प्रकाशन करे, जिनसे पाठकोकी ज्ञान-वृद्धि होती रहे और साथ ही उनका मनोरञ्जन भी हो। हमे चाहिए कि अच्छे कागज, अच्छी छपाई और सुन्दर चित्रोको सिर्फ पाठकोको अपनी तरफ खींच लानेका साधन मात्र समझे। उन्हे गौण और ज्ञान वर्धनकी चेष्टाको मुख्य समझना चाहिए। इसके साथ ही भाषा इतनी सरल होनी चाहिए, जिसे अधिक-से-अधिक पाठक आसानीसे समझ सकें। अपनी विद्वत्ताके प्रकटीकरणकी कदापि चेष्टा न करनी चाहिए।

'सरस्वती' यद्यपि विशेषतया साहित्य-विषयक पत्रिका है। पर उसने अपना नाम उस देवताका ग्रहण किया है जो समस्त वाङ्मयकी अधिष्ठात्री है। अतएव उसे सभी विषयो पर लेख प्रकाशित करनेका अधिकार होना चाहिए। पर उसके उद्देश्य और आकारको देखते हुए यह असम्भव-सा है। इस दशामे उसे अधिक-से-अधिक ज्ञानवर्धक लेख प्रकाशित करके पाठकोका हित-साधन करना चाहिए।

साथ ही उनके शुद्ध मनोरञ्जनकी भी कुछ सामग्री अपने प्रत्येक अङ्कमे प्रस्तुत करके, पिछले महीनेमे हुई देशकी मुख्य मुख्य हलचलोका भी उल्लेख करना चाहिए। सभी लेखो और नोटोकी भाषा यथासम्भव सरल कर देनेके लिए सम्पादकको सदा सचेष्ट रहना चाहिए।

पं० देवीदत्तजी, इसे पटल बाबूको सुना दीजिएगा। पहुँच लिखिएगा।

१६-२-१९३३ म० प्र० द्विवेदी

[१५२]

दौलतपुर, रायबरेली
२-३-३४

नमस्कार,

पो० का० आज मिला। पञ्चाङ्ग और पुस्तक कल्ही मिल गई थी। वाममार्गकी सैर कर ली। आपने यह पुस्तक खूब ही लिखी। हिन्दीमे इसे मै अद्वितीय समझता हूँ। इससे इस सम्प्रदायसे सम्बन्ध रखनेवाले कितने ही भ्रम दूर हो सकते है

फ़रवरीकी 'माधुरी'मे मैंने वेंकटेशजीका लेख देख लिया। मै उनका पहले हीसे कृतज्ञ था। अब तो पूछना ही क्या है? लेखमे मेरी आलोचना कम, ग्रन्थकी और सभाके कर्णधार महाशयो होकी अधिक है। तिवारी जीने अपनी छात्रावस्थामें मेरी बहुत मदद की है! उसका खयाल जब आता है तब मै उनके उपकारके भारसे दब-सा जाता हूँ। मिले तो उनसे कहना, मुझपर झूठे लाञ्छन न लगाया करे। 'कुमारसंभव'मे कालिदासने अनुचित शृङ्गार वर्णन किया है। इस कारण मैंने कविकी खबर "कालिदासकी निरङ्कुशता" के शुरू हीमे ली है। पर मुझे स्मरण होता है कि वेंकटेशजीने अपने किसी लेखमें मुझपर यह इलजाम लगाया है कि मैंने उसपर कुछ कहा ही नही। मेरी तबीयतका हाल आप क्या पूछते है? अच्छे रहनेपर भी आप मुझे बीमार ही समझिए। पटल बाबूकी कृपासे भोजन-वस्त्रकी कमी नहीं, इस सुखको मै थोड़ा नही समझता।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

[१५३]

दौलतपुर, रायबरेली
१६—४—३३

शुभाशिषः सन्तु,

अप्रैलकी 'सरस्वती'के "नये आयोजन" मे सम्पादकोने जो मेरा अभिनन्दन किया है वह सीमासे आगे निकल गया है। तथापि उसे पढकर मेरी आखोंसे आनन्दाश्रु टपक पड़े। अभिनन्दन तो गैरोंहीके द्वारा किया गया अच्छा लगता है। मै तो इंडियन प्रेसको अपना अन्नदाता समझता हूँ। वह मुझे अपना आश्रित समझे रहे। यही प्रार्थना है। *

कृतज्ञ
म० प्र० द्विवेदी

[१५४]

दौलतपुर
२०—१०—३८

नमस्कार,

बहुत समय हुआ, मैने 'सरस्वती'मे 'स्तुति-कुसुमाञ्जलि' पर एक या दो लेख लिखे थे। उन्हे देखकर काशीके प्रेमवल्लभ शास्त्री मुग्ध हो गये। उन्होंने समस्त पुस्तकका हिन्दी भावार्थ लिखा—सान्वय। वह इण्डियन प्रेस, काशीमे मूल समेत छप रहा है। अद्भुत पुस्तक है। शास्त्रीजी अल्पवयस्क पर बड़े अच्छे कवि और पण्डित है। गरीब हैं। मॉग जॉच

* यह पत्र इ० प्रे० के मालिक श्री हरिकेशव घोषको लिखा गया था।

कर किसी तरह छपाईका खर्च दे रहे हैं। अभी देना बाकी है। पुस्तककी छपाई समाप्त प्राय है। ज़रा एक कॉपी मँगाकर देखिए। इण्डियन प्रेस कापी राइट लेना चाहे तो थोड़े ही खर्चसे मिल सकता है। ज़रा पूछिए। उत्तर दीजिए। मेरे पासके छपे फ़ार्म पं० मातादीन ले गये हैं।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

पं० किशोरीदास वाजपेयी

श्री किशोरीदास वाजपेयीकी प्रारम्भिक शिक्षा वृन्दावनमें हुई। १९१९ में काशीसे शास्त्री किया। १९३०, ३४ और ४२ के राष्ट्रिय आन्दोलनोंमें भाग लिया। नौकरीसे हटाये गये, सजा हुई और नजरबन्द भी रहे।

आगरासे निकलनेवाले "मराल" नामक मासिक पत्रका सम्पादन किया। व्याकरणके अधिकारी विद्वान् माने जाते हैं। 'द्वापरकी राज्यक्रान्ति', 'लेखन कला', 'अच्छी हिन्दीका नमूना', 'मानवधर्म मीमांसा', 'कांग्रेसका संक्षिप्त इतिहास' और 'व्रजभाषाका व्याकरण' आदि आपके ग्रन्थ प्रकाशित हैं।

पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदीके भक्तोंमें हैं। आजकल कनखल, हरद्वारमें रहते हैं। आपसे द्विवेदीजीसे बहुत पत्र-व्यवहार हुआ था। आपके पत्र हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयागमें सुरक्षित हैं।

[हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके संग्रहालयके सौजन्यसे]

[१५५]

दौलतपुर, रायबरेली
१२-८-३३

शुभाशिषः सन्तु,

८ अगस्तका पोस्टकार्ड मिला। आपकी कौटुम्बिक व्यवस्था ज्ञात हुई। मेरा भी कुछ-कुछ हाल वैसा ही है। अपना निजका कोई नही, दूर-दूरकी चिड़ियाँ जमा हुई है। खूब चुगती हैं। पुरस्कार स्वरूप दिन-रात पीड़ित किये रहती हैं।

प्रयागमे वही कहींके राजा साहब या उनके भाई मुझसे मिलने आये थे। साथ में, शायद उनके प्राइवेट सेक्रेटरी एक ग्रेजुएट भी थे। नाम भगवतीचरण या कुछ ऐसा ही था। सारे पुराणोका हिन्दी अनुवाद निकालने वाले हैं। मुझसे किसी योग्य सहायकका नाम पूछते थे, जो उनके यहाँ रहकर वह काम करे। इसीसे मैने आपसे आपकी आमदनी पूछी। मगर आप जहाँ है वहीं रहे। वहीं सब तरहका सुभीता है। ये राजे देहात मे रहते हैं। उनकी बातोका कुछ ठिकाना भी नही।

पं० देवीदत्तके नाम चिट्ठी भेजता हूँ। जी चाहे भेज दीजिएगा। नहीं तो फाड़ डालिएगा। मेरी राय तो है 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्'।

'स्तुति-कुसुमाजलि' मे एक स्तुति है कवि-काव्य प्रशंसा स्तोत। आपको भी पसन्द हो तो उसके चुने हुए श्लोकोको सानुवाद कही प्रकाशित करा दीजिएगा। लोग देखे अच्छे कवि और अच्छी कविता किसे कहते है, कल्याण वाले स्तुति कु० का अनुवाद मुझसे कराना चाहते है। एक लेखक भी देनेको तैयार है। पर मुझमे इतनी शक्ति नहीं। किसीने अनुवाद उन्हें भेजा भी है पर वह इन्हें पसन्द नही।

मैं ज्वालापुरमें महीनों सपत्नीक रह चुका हूँ, वहाँके गुरुकुल। कनखल, हरद्वार सब देखे हुए हैं। अब कहीं जाने लायक नहीं। शरीर शिथिल और जर्जर है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१५६]

दौलतपुर, रायबरेली
२९—७—३३

भैय्या किशोरीदास,

चिरञ्जीवी भूयाः,

जुलाईकी 'माधुरी'में आपका लेख पढे विना मुझसे न रहा गया, मनोमुकुल खिल उठा। आप सहृदय ही नहीं, काव्यज्ञ और साहित्यशास्त्रज्ञ भी हैं। कभी-कभी इसी तरह इन लोगोको खटखटा दिया करो। इनकी हरकतें देखकर यदा-कदा मेरा जी जल उठता है। कविता कविकर्म्मके आप विशेषज्ञ हैं और—

"विना न साहित्यविदा परत्र
गुणः कथञ्चित्प्रथते कवीनाम्।
आलम्बते तत्क्षणमम्भसीव
विस्तारमन्यत्र न तैलबिन्दुः॥"

आप कभी-कभी ऐसे वाक्य लिख देते हैं।

पहले सम्पूर्ण मनोभावोंको दो श्रेणियोंमें विभक्त कर दिया गया है। संभले रहिए, महावैय्याकरण पं० कामताप्रसाद गुरु कहीं खफ़ा न हो जायँ।

मेरी तबीयत आजकल अच्छी नही।

शुभाकांक्षी
म० प्र० द्विवेदी

[१५७]

दौलतपुर, रायबरेली
१७–११–३३

आशीष,

मुकुलित वग़ैरहके साथ स्फुटको आप भूल गये। हिन्दीके कोविद उसे फुटकरके अर्थमें लिखते हैं। जिसने लघु-कौमुदीके भी दर्शन नहीं किये उसे बच्चोंका तारतम्य आप सिखलाना चाहते हैं।

आपके लेख देखकर मुझे बड़ी खुशी होती है। आप खूब लिखते हैं। खेद है कि मै बहुत ही कम पढ़ सकता हूँ। मेरा उन्निद्र रोग आजकल बहुत बढ़ गया है। व्याकुल रहता हूँ। एक कार्ड लिखनेसे भी गश आ जाता है। स्मृतिका यह हाल है कि आपका पता भूल गया।

शुभेच्छु
म० प्र० द्विवेदी

[१५८]

दौलतपुर, रायबरेली
२२–२–३४

शुभाशिषः सन्तु,

आपका भेजा हुआ ब्राह्मी तैल एक हफ़्तेसे लगा रहा हूँ। फल कुछ समय बाद शायद मालूम हो।

मेरी आँखोंमें मोतियाबिन्दु प्रारम्भ हो गया है। एक अमेरिकन दवा आखोंमें अब तक डालता रहा हूँ। लाभ नदारद। अब एक देशी दवा शुरू की है। पण्डित श्रीराम शर्म्माने क़मलमधु भेजा है। यह नुसखा पं० शालग्राम शास्त्रीका है। बड़ी तारीफ़ सुनी है, इसे भी आँखोंमे डालूँगा।

आजकल मेरा घर सूना-सा है। भानजे साहब और उनकी पत्नी कानपुरमें हैं। दोनोंको कुछ शिकायत थी। दवा कराने गये हैं।

हिन्दीके पत्रों और पत्रिकाओंको कुछ समयसे एक संक्रामक रोग हो रहा है। इनके सम्पादक उर्दूकी नई-पुरानी दूषित कविताएँ छाप रहे हैं। कुछ हिन्दीके कवि भी उर्दूकी बहरोंमें फ़ातफ़ूत कर रहे हैं। उधर उर्दूवाले हिन्दीके दोहो और चौपाइयों तककी दाद नहीं देते। वहीं अरबी-फ़ारसीकी बहरें और एक ही छन्दमे वही बेतुकी कई तरहकी बातें। बिस्मिलजी भी खूब ज़ोर बाँध रहे हैं। पुराने उर्दू कवि तो हिन्दीमे, कोई-कोई, कुछ लिख भी गये हैं। पर आजकलके शायर हिन्दीको अछूत समझ रहे हैं। आपको भी ये बातें खटकें तो कभी-कभी हिन्दीके गुमराह लिक्खाड़ोंकी खबर तो ले लिया कीजिए।

आशा है, आप सकुटुम्ब अच्छी तरह हैं।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१५९]

दौलतपुर, रायबरेली
२६—७—३४

शुभाशिषो विलसन्तु,

आपका पिछला कार्ड पढ़नेपर मुझे आपका अनुरोध मानना पड़ा। सुबह चाय पीना छोड़ दिया। सिर्फ़ पाव डेढ पाव दूध पी लेता हूँ। अखबार देखनेमे भी कमी कर दी। इससे कुछ लाभ होता मालूम देता है। उचित परामर्शके लिए आपको धन्यवाद।

अजी वह भूमिका नहीं, प्रस्तावना है जिसकी आपने खबर ली है। बाबू श्यामसुन्दरदासकी लिखी प्रस्तावनामे और किस बातकी आशा की

जा सकती थी। अफ़सोस है राय कृष्णदासने भी उसपर दस्तखत कर दिये। बाबू साहबके कोशमे नन्द धातु और अभिनन्दन शब्दका अर्थ है भली बुरी आलोचना करना।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६०]

दौलतपुर, रायबरेली
१–९–३४

शुभाशिषः सन्तु,

भारतमे वीरभद्रके दर्शन हुए। ये लोग सर्वदा उपेक्षाके पात्र हैं। मेरी एक पुस्तक है:—'वाग्विलास' उसमे एक लेख है 'आर्यसमाजका कोप'। उसमें इन लोगोंकी चित्तवृत्तिका निदर्शन है और अंतमें लिखा है:—

"येषां चेतसि मोहमत्सरमदभ्रान्तिः समुज्जृम्भते
तेऽप्येते दयया दयाधन विभो सन्तारणीयास्त्वया॥"

न देखी हो तो लहेरियासरायसे एक कापी भिजवाऊँ। आशा है आप अच्छी तरह हैं। मेरा हाल वही यथापूर्व है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६१]

दौलतपुर
८–९–३४

शुभाशिषः सन्तु,

४ ता० का पोस्टकार्ड मिला। कविताकी पहुँच शायद कल ही लिख चुका हूँ।

हिन्दी पुस्तक-भंडार, लहेरियासरायको लिख दिया कि एक कापी 'वाग्विलास'की आपको भेज दें।

चाय छूट गई। अब उसकी याद भी नहीं आती। मगर नींदका करीब-करीब वही पुराना हाल है। वर्षामें अतिसार संग्रहणी अक्सर हो जाती है। कुपथ्यसे बचिए। सुपच भोजनसे शिकायत जाती रहती है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६२]

दौलतपुर, रायबरेली
२३—९—३४

शुभाशीर्वाद,

आपने तो पद्य-पत्रोंका ताँता बाँध दिया। १७ ता० का भी पत्र मिला। आप भावमयी कविता कर सकते हैं। आजकलके कितने ही तुक्कड़ आपके सामने कोई चीज़ नहीं। कविताका प्रकाशन अब शुरू कर दीजिए। मगर मुझे जब कभी लिखना गद्यमे ही लिखना। गद्यमे बिना प्रयास जी खोलकर लिखनेको मिलता है। 'वाग्विलास'मे आपको मेरे झगड़ालूपनके नमूने मिले होगे। मेरी पूर्वचर्या विलक्षण थी। विवाद कर बैठता था। सहनशीलताका अभाव-सा मुझमें था। वह पुस्तक पढ़नेपर कहीं आप मुझसे विरक्त या उदासीन न हो जायँ, यह डर मुझे था। वह अब दूर हो गया।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६३]

दौलतपुर, रायबरेली
१५-८-३५

शुभाशिषां राशयो विलसन्तु,

११ अगस्तका पो० का० मिला। खुशी हुई। आँखोंका वही हाल है। कमलमधुने कुछ फायदा नहीं किया। जान पड़ता है, जैसे और इन्द्रियाँ शिथिल हो रही है, वैसे ही दृष्टि भी। दवादारू व्यर्थ है।

शीतकालमे इधर आना हो तो मुझसे ज़रूर मिलना।

गंगा पहले तो दर्शन देती थी, अब कई महीनेसे नही। ज़रूरत भी नहीं। पढ़ नहीं सकता।

उस कहानीमें लछिमनपुरके एक महाशयका जिक्र है, वे शायद पं० शिवपाल अग्निहोत्रीथे। डाकखानोंके सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। झाँसीमे हम दोनों अक्सर मिलते थे। एक बार उनके घर भी मैं हो आया हूँ।

'आदर्श'के पिछले अंकमे सम्पादक महाशयने कुछ पत्र-पत्रिकाओंको फटकार बताई है। एक फटकार मुझपर भी पड़ी है। लिखा है। मै बदलेमे आये हुए पत्र लिखकर लौटा देता था। पर बात ऐसी नहीं।

किसी आर्यसमाजीने एक पुस्तक समालोचनाके लिए भेजी। उसमे लिखा था स्वामी दयानन्दके गुरु भट्टोजीके चित्रपर नाम पर जूते लगवाते थे। इसपर मैंने कड़ी टिप्पणी की। आर्यसमाजी बिगड़े। एक सरकुलर निकाला कि कोई समाजी मुझे पुस्तकें न भेजा करे। जवाब मैंने 'सरस्वती'मे दिया। 'आर्यसमाजका कोप' उसमे शायद मैंने लिखा कि अगर कोई भेजेगा भी तो मै न लूँगा लौटा दूँगा। इसी प्रतिज्ञाकी पूर्तिमे मैंने शायद कुछ पुस्तकें लौटाई हो। बदलेके पत्र-पत्रिकाएँ नही लौटाई। सम्पादक रामचन्द्रजी महाशय आप हीके शहरमे हैं। इससे मैंने यह कैफियत दे दी है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६४]

दौलतपुर, रायबरेली
२४—८—३५

शुभाशिषः सन्तु,

२० अगस्तका पत्र मिला। आपके कुछ दोहे कहीं छपे हुए मैंने देखे हैं। मुझे बहुत अच्छे लगे। उनमे प्रसाद गुण बहुत काफी जान पड़ा। ज़रूर छपाइए। नाम भी पुस्तकका आपने अच्छा रखा। मैं होता तो मुकुल, मंजरी, मानजी, मनोविनोद आदि नाम रखता।

मैं सुरमा न लगाऊँगा। जाने दीजिए। भगवान्‌के भरोसे पड़ा रहूँगा।

शुभानुध्यायी
म० प्र० द्विवेदी

[१६५]

दौलतपुर, रायबरेली
७—१—३६

शुभाशिषः सन्तु,

'तरंगिणी'की कापी मिली। देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। बहुत अच्छी छपी। कागज़ जिल्द सभी सुन्दर हैं।

भूमिका तो अनेक ज्ञातव्य बातोंसे पूर्ण है। यथेष्ट पाण्डित्य-प्रदर्शक है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६६]

दौलतपुर, रायबरेली
७-३-३७

शुभाशिषो विलसन्तु,

४ ता० का कार्ड मिला। आपको पुत्रकी प्राप्ति हुई यह सुनकर बड़ी खुशी हुई। मधुसूदनके जोड़का कोई अच्छा नाम नहीं सूझ पड़ता। मेरी बुद्धिकी जड़ता बढ़ गई है। नीचेके नामोंमेसे कोई पसन्द हो तो चुन लीजिए।

मुकुन्द माधव,	मयंक मोहन	राधिकारमण	श्रीकान्त
शशाक सुन्दर	राधिका रंजन	रजनीकान्त,	शशिशेखर
कमलाकान्त,	राजीवलोचन	चारुचन्द्र।	

मनोरमाका विवाह कल रातको हो गया। बड़ी भीड़ घरमे भी, बाहर भी है।

शुभैषी
म० प्र० द्विवेदी

[१६७]

दौलतपुर
१५-३-३७

शुभाशीष,

१२ का पोस्टकार्ड आज मिला। आपके बालबच्चे अच्छी तरह हैं यह जानकर ख़ुशी हुई।

पुस्तकोंका समर्पण बिलकुल ही बेकार है। मैंने भी अपनी दो एक पुस्तकोंका समर्पण पहले किया था। मगर फिर वैसी भूल नहीं की।

आपके प्रेमपाशमें मैं यो ही फँसा हूँ। समर्पणसे क्या होगा? पर यदि आपका कुछ काम निकलता हो या आपको किसी प्रकारकी सन्तुष्टि होती हो तो कीजिए। मुझे कोई आपत्ति नहीं।

आप विवाहमे आते तो कुछ पाते। बड़ी भीड़ थी। बाराती तो २३ ही थे। पर मेरे माननीय आमंत्रित जनोंकी सख्या ६०, ७० तक हो गई थी। सब गये, सिर्फ़ ३ बाकी हैं। आना तो मधुसूदनको ज़रूर लाना।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

[१६८]

दौलतपुर

५-५-३८

शुभाशिषो विलसन्तु,

जयन्तीकी बधाईका पोस्टकार्ड मिला। धन्यवाद। आपने मुझे मेरे जन्म-दिनकी याद दिला दी। मुझे ही भूल गया था। कुटुम्बियोको कैसे याद रहता। किसीने कढ़ी तक बनाकर नहीं चाटी। मेरे कुटुम्बी तो आपही की तरह सन्मित्र हैं। उन्हीका भरोसा है। चिरञ्जीवी भूय्याः।

शुभैषी

म० प्र० द्विवेदी

****

विविध-पत्र

****

[१६९]

पं० गुरुदयाल त्रिपाठीको†

दौलतपुर, रायबरेली
१–१०–३०

श्रीयुत त्रिपाठीजीको प्रणाम,

चन्द्रपालसिंहने आपका पत्र दिया। आपने और पं० शिवगोविन्दने बड़ी कृपा की जो बाग़के मुकद्दमेमे पैरवी कर दी। मै कहाँ तक आपका शुक्रिया अदा करूँ। मै आमरण आपसे उऋण नहीं। कृपा करके डिप्टी साहबके हुक्मकी नकल भिजवा दीजिए।

पर-सवर्णका सवाल हिन्दीमे उठाना अनुचित है। उसका खयाल तो संस्कृतमे भी लोग कम ही रखते है। आप खुशीसे अन्त, दिसंबर, कर्म्मकाड आदि लिखिए। इस तरहकी लिखावट सर्वथा शुद्ध है। नागरी प्रचारणी सभा, काशी वाले तो अनुस्वार हीसे काम चलाते है। उनके इतने बड़े कोशमे भी पर-सवर्णका खयाल नही रक्खा गया।

जिस वक्त चन्द्रपाल चलने लगे मेरे पास एक भी रुपया न था। १) का नोट बतौर Curio या curiosity के बक्समे रख छोड़ा था। लाचार वही भेज दिया। मैने कहा, शायद ट्रेज़रीवाले ले ले। मगर Currency office के सिवा शायद ही कोई उसे लेकर रुपया दे। आप उसे मेरो बेवक़ूफ़ीका चिह्न समझकर पड़ा रहने दे। आज १) मनीआर्डरसे भेजता हूँ। कोर्ट फीस वग़ैरहकी कीमत तो पं० शिवगोविन्दको न देनी पड़े। मैं उनसे और आपसे कभी उद्धार नही। मिहनताना देने या भेजनेकी तो हिम्मत ही नही होती।

आपका

म० प्र० द्विवेदी

† पं० गुरुदयाल त्रिपाठी, एडवोकेट, रायबरेली।

[१७०]

दौलतपुर, रायबरेली
१३ अगस्त ३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको सादर प्रणाम !

बड़े असमंजसमें पड़कर आज आपको कुछ कष्ट देने पर उतारू हो गया हूँ।

रायबरेलीमे श्रीमान् शिवशंकरजी त्रिपाठी नामके कोई वकील—शायद एडवोकेट—हैं। आपके वंशज नहीं तो आपके फिरके ही के ज़रूर होगे। डिस्ट्रिक्टबोर्डकी चेयरमैनीका भारी बोझ आजकल उन्हींके दोनों कन्धो पर है। मेरी तरफसे हाथ जोड़कर मेरी एक प्रार्थना उन तक पहुँचाइए और अपनी तरफ़से उसकी मंजूरीके लिए उनसे सिफ़ारिश भी कीजिए।

यहाँ दूर-दूर तक न तो कोई अस्पताल या दवाखाना है और न औषधालय। वैद्य एक आध दूर-दूरके मौजोंमें है। पर चतुरी चमार और प्रेमा पासीको मुफ्त दवा देने वाले नहीं। मैंने अपने खर्चसे कुछ आयुर्वेदिक और कुछ एलोपैथिक पेटेंट दवाएँ मँगा रक्खी हैं। भानजा मेरा होमियोपैथिक बक्स लिये बैठा रहता है। मगर मै एक मामूली गृहस्थ हूँ। यह सब खर्च नहीं उठा सकता। दिनमे दस पाँच मरीज़ घेरे ही रहते है। ग़रीबोका दुख-दर्द नही देखा जाता।

यहाँ तक लिख चुकने पर लोकई चमारकी दुलहिन सिर पीटते आई। उसका १४ वर्षका लड़का बीमार है। हैज़ेके दस्त आ रहे हैं। उसे अर्क कपूर दिया। न फ़ायदा होगा तो क्लोराडिन दूँगा।

तीन वर्षसे बोर्डको लिख रहा हूँ कि यहाँ एक वैद्य भेज कर औषधालय खोल दो। पहले तो बोर्डने अलजलूल एतराज किये। फिर

मंजूरी दे दी। लिखा कि कहींका औषधालय बन्द करके यहाँ खोल दिया जायगा। तब तक बोर्ड पर सरकारने कब्ज़ा कर लिया। अब जो फिर हमलोगोंकी अमलदारी हुई तो कोई चिट्ठीका जवाब तक नहीं देता।

राजा साहब शिवगढ़की मुझपर कृपा है। वे दौलतपुर आनेवाले भी थे। पर मै उन दिनों बीमार था। उन्होंने अपने सिर पर, खुद ही लाई हुई, बला पूर्वनिर्दिष्ट त्रिपाठीजी पर पटक दी है। बाबू सीतलासहाय की मारफ़त राजा साहबसे सिफ़ारिश कराई तो त्रिपाठीजी हीले हवाले कर रहे हैं। कहते हैं बजटमें गुजायश नहीं, पहलेसे क्यों नही कहा! जैसे बोर्डके दफ्तरके काग़ज़ात नष्ट हो गये हो! प्रार्थना कीजिए कि किसी और मदमे ढाई तीन सौकी बचत निकाल लें, या खास तौरसे मंजूरी मागें, या बजटसे ज़ायद खर्च हो जाय तो Supplementary बजट पेश करें। करने और देनेके हजार तरीक़े हैं। इस तरफ़के देहाती सिर्फ बोर्डके स्कूलोंसे ही फ़ायदा उठाते हैं। हम लोगोसे अब Tax भी ज़्यादा लिया जाता है। हम लोगोके लिए दवा-दारूका भी तो कुछ प्रबन्ध करना चाहिए।

आपके भाई साहब या आपके अन्य मित्र जो बोर्डके मेम्बर हो उनसे भी कहिए, कुछ मदद करे। मुझे तो विश्वास है कि आपकी सिफ़ारिशसे चेयरमैन त्रिपाठीजीका हृदय जरूर पसीज उठेगा और वे मेरा मनोरथ सफल करके यहाँके दीन-दुखियोंके आशीर्वादका पुण्य प्राप्त करेंगे। उन्हे महाभारतके इस श्लोककी याद दिलाइएगा—

"न त्वहं कामये राज्य न स्वर्गं नापवर्गकम्।
कामये तापतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥"

कृपापात्र

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७१]

दौलतपुर, रायबरेली
७–११–३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको बहुशः प्रणाम ;

कल सुबह एक पोस्टकार्ड मैं आपको भेज चुका हूँ। कल ही शामकी डाकसे ३ ता० का आपका कार्ड मिला। अनेक धन्यवाद।

"कल्याणमस्तु भवतां हरिभक्तिरस्तु।"

अब जो काम शेष रह गया है उसे कृपापूर्वक सिद्ध करा दीजिए। अन्यत्र यदि कम्पौंडर रहता हो तो वह भी दिया जाय। सबके लिए रहने की जगह बनी बनाई तैयार है। मेरे संग्रहमे आयुर्वेदकी ढेरों पुस्तकें हैं। डाक्टरी और होमियोपैथीकी भी है। जो कोई भेजा जाय अनुभवी और संस्कृतज्ञ हो। उसे अपनी विद्या और चिकित्सा-कौशलकी उन्नतिके लिए यथेष्ट सामग्री है। यहाँ दूर-दूर तक चिकित्साका प्रबन्ध नही। मेरा भानजा दिन भर दीन-दुखियोंको होमियोपैथी दवाएं बाटा करता है। मेरे पास भी आयुर्वेदिक और कुछ पेटेट दवाएं है। उनका उपयोग मै भी औरोंके लिए करता हूँ।

आपकी कृपाके लिए पुनरपि धन्यवाद।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७२]

C/O कमर्शल प्रेस,
बगिया मनीराम, कानपुर
१३–१२–३४

श्रीमान् त्रिपाठीजीको सादर प्रणाम,

गाँवपर मेरा उन्निद्रता रोग बहुत बढ़ गया। और भी कुछ शिकायतें

नई-नई पैदा हो गईं। इससे यहाँ इलाज कराने चला आया। अब कुछ-कुछ आराम है। यहाँ आये १ महीना हो गया। २५ तारीख तक घर लौट जानेका विचार है। शर्त यह है कि तबीयत ठीक रहे।

बन्दूक रखना मेरे लिए जीका जंजाल हो रहा है। मै जमा कर देना चाहता था। पर घरवाले रखना चाहते है। मेरी तरफ़ चोरियाँ बहुत होती हैं। डाके तक पड़ जाते है। पिछली कई दफ़े वहाँ दौरेपर हाकिमोंसे लायसेंस नया करा लिया था। इस साल यहाँ पड़ा हूँ। लायसेंस भेजता हूँ। तीन सालके लिए नया करा लीजिए। फीस ७॥) और ऊपरी खर्च २॥) इस तरह १०)का मनीआर्डर आज आपके नाम भेज रहा हूँ। लैसंस इसी चिट्ठीके साथ है। वकालतनामेका फ़ार्म भी। एक चिट्ठी भी D. C. के नाम भेजता हूँ। जरूरत पड़े तो दे दीजिएगा। वे मुझे जानते हैं; मेरे घर आये हैं। जो न जानते हों उनसे कह दीजिएगा—खैरख्वाह हूं, पंचायतका पञ्च हूँ इत्यादि। काम हो जानेपर लायसेंस रजिस्ट्री करके लौटा दीजिएगा। २३ दिसम्बरके बाद पत्र दौलतपुर भेजिएगा। पं० शिवगोविन्दजी कृपा करके मेरे वकील हो जायँ। कष्टके लिए क्षमा-प्रार्थना।

कृपापात्र

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७३]

दौलतपुर, रायबरेली

१५-१-३५

श्रीमान् त्रिपाठीजीको प्रणाम,

सेमरीके लाल वीरेन्द्रबहादुरसिंहने रायबरेलीमे कोई संघ स्थापित किया है या करनेवाले हैं। उसके सम्बन्धमे मुझसे रायबरेली चलनेको इसरार कर रहे हैं। मैं इन बातोंसे सदा दूर रहा हूँ और रहना चाहता

हूँ। मै प्रसिद्धि नहीं चाहता। मेरी इज़्जत आप लोगोके हाथ है। कृपा करके नीचे लिखी हुई बातोंका जवाब दीजिए:—

इस आयोजनमे अग्रणी कौन है ? शहरके और ज़िलेके कौन कौन संमाननीय सज्जन इसके पृष्ठपोषक है ? आजतक कितने सज्जन इसके मेम्बर हुए हैं ? संघके लिए कौन-सा स्थान चुना गया है, वह कैसा और किसका है ? संघकी नियमावली या Article of Association बन गई है या नहीं ? बनी है तो कहाँ है ? आपकी निजकी राय इसके सम्बन्धमें क्या है ? कष्ट तो होगा; पर रायबरेलीमे आपके सिवा मेरा सहायक और कोई नहीं। मुझे उपहाससे बचा लीजिए।

बन्दूकके लायसेंसकी किताब मिल जाने पर भेज दीजिएगा। बन्दूक मेरे पास १ जनवरीसे बिला लायसेंस है।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७४]

दौलतपुर, रायबरेली
२३–१–३५

श्रीयुत त्रिपाठीजीको प्रणाम,

२० जनवरीका कृपापत्र मिला। संघके विस्तृत समाचारके लिए धन्यवाद। इधर दो तीन महीनेमे मैं कही बाहर जाने योग्य नहीं। आगे आप जो आज्ञा देगे करूँगा। आँखोमे मेरी मोतियाबिन्द शुरू हो गया है।

अपनी तन्दुरुस्तीका क्या हाल लिखूँ। शरीर किसी तरह लस्टम पस्टम चल जाता है, पं० प्रतापनारायण मिश्रकी एक लाइन है:—

"छिन मां चटक छिनै मां अनकनि जस बुझात खन होय दिया।"

बस मैं इसीका उदाहरण हो रहा हूँ।

डिस्ट्रिक्टबोर्डके अकौटेंट पं० चन्द्रशेखरजी मिश्रके पत्रसे मालूम

हुआ कि Supplementary Budget मंजूर हो गया। कृपापूर्वक अपने मित्रों पर ज़ोर डाल कर अब यहाँ औषधालय खुलवा दीजिए। चेयरमैन साहबसे भी मैंने प्रार्थना कर दी है।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७५]

दौलतपुर, रायबरेली
१७-७-३५

श्रीमान् तिवारीजीको सादर प्रणाम,

कालीचरण सुनारके हाथ आपकी १५ मार्चकी चिट्ठी मिली।

इण्डियन प्रेसके बाबूने भूलसे पारसल रायबरेली भेज दिया। उसकी रसीद मैंने २३ फरवरीको आपको भेजी थी। लिफाफेके भीतर पारसलका महसूल ६ आना भी था। वह किसीने भाँप लिया और चिट्ठी उड़ा दी। अब मैंने उसे प्रेसको लिख दिया है कि अपना पारसल वापस मँगा ले।

आपने १॥) नाहक़ लौटाया। जिन महाशयके नाम वकालतनामा था उन्हींको दे देना था। लायसेंस बन्दूक पुलिससे अब तक नहीं मिला। शायद वे लोग अपने आप भेजें। खबर तक न देंगे। मुझमे थाने तक जानेकी शक्ति नहीं। खैर आपकी चिट्ठी लायसेन्सकी जगह रख लूँगा। ६ महीने हुए तलवार वग़ैरह ५ हथियार पुलिसमे जमा कर दिये थे। अब उनको रखनेकी मुमानियत नहीं। पुराना नोटिफिकेशन हो गया। पुलिसको लिख चुका—हथियार लौटावो, उस दिन अस्थाना साहबको भी लिखा। मगर कोई दाद नहीं देता। मालखानेके मुन्तज़िमने लिखा है—यहाँ आकर ले जाव। ये हैं इंतजामकी खूबियाँ।

पं० शिवशंकर तिवारीने मुझे औषधालयकी बाबत कुछ नहीं लिखा। एक महाशय रायबरेली गये थे। वे कहते थे, पिछली मीटिंगमें कुछ नहीं हुआ। रुपयेकी मजूरी मिल जाने पर भी किसीने रेज्योल्यूशन नहीं मूव किया कि इस रुपयेसे दौलतपुरमें दवाखाना खोला जाय। ये है, हमारे स्थानिक स्वराज्यकी नियामतें! भगवान् करे, यह बोर्ड फिर Supersede हो जाय। भला हो इन्चिसन साहबका। वह यहाँ खुद आया। दो घण्टे तक मेरे कमरेमे बैठा। शरबत-पानी किया। मेरी प्रार्थना पर मवेशीखाना १ हफ्तेके अन्दर खोल दिया। कई हज़ार रुपयेकी पुख्ता इमारत मदरसेकी बनवा दी। मेरी अक्लपर पत्थर पड़े थे। कहता तो दवाखाना भी कबका खुल गया होता। एक ये हज़रत हमारे देशी भाई हैं जो चिट्ठीका जवाब तक नहीं देते। मवेशीखानेका बाड़ा लकड़ी काटोंका है। एक ऊँट उस दिन उसे तोड़कर भाग गया। बोर्डका ८०) का नुकसान हुआ। एक भैंसने कल रातको फाटक ही तोड़ डाला। मरम्मत कराओ तो छः छः महीना तक रुपया ही नहीं मिलता। कहाँ गई आपकी वह Majority। इन सब ऐबोंको दूर कराइए। २ वर्षसे मवेशीख़ाना है। बोर्डको मुनाफ़ा है। पिछले ११ महीनोमे बोर्डको कई ६०) का Net-profit हुआ है। ८ रोज हुए मैंने चेयरमैन साहबको लिखा है कि अगले बजटमे ढाई-तीन सौ रुपयेकी मज़ूरी माँग कर पुख्ता इमारत बनवा दें। मगर शायद ही उनके नक्कारखानेमे मुझ तूतीकी आवाज़ कोई सुने। मुझे मालूम हुआ है कि चेयरमैन साहब पं० जानकीशरणके लड़के हैं। आप जानते ही होगे वे मुझसे मिलने आपके स्थान पर आया करते थे। मै भी उनसे मिलता रहता था। पर उनके साहबजादे मुझपर कम कृपा करते हैं। अबके दफ़े मैंने उन्हें हिन्दीमे चिट्ठी लिखी है और शेख़सादीकी इस उक्तिकी उन्हे याद दिलाई है—

"अय ज़बरदस्त ज़ेरदस्त आज़ार,
गर्म ता कै बुमानद ईं बाज़ार,
बचे कार आयदत जहाँदारी,
मुर्दनत बेह के मर्दुम आज़ारी,"

अगर वे आपके मित्र हो तो मेरी यह चिट्ठी उन्हें सुनाइएँ। शायद मेरे रोने-धोनेका कुछ असर उन पर हो। दवाखानेकी मंजूरी कराइए। D. C. की मंजूरीसे बहुत-सा रुपया पञ्चायतका मैं दवा खरीदनेमे खर्च कर चुका। कोई १००) अपने पाससे खर्च किया। ५, ७ बक्स दवाओके मेरे कमरेमे है। देते-देते थक गया। उस दिन D–M. C. आये थे। खुद दवायें देख गये हैं।

कॉजीहौसकी इमारतके बारेमे मैंने पं० चन्द्रशेखर मिश्र, Accountant, को भी लिखा है कि वही कोशिश करके अपने किसी मित्रसे एक रेज्यूल्यूशन पेश कराकर बजटमे Provision रुपयेकी करा दें।

आप धन्य हैं जो रामायणसे प्रेम करते हैं। विनय-पत्रिका भी पढ़ा कीजिए। मै तो कूलद्रुम हो रहा हूँ। संसारमे मेरा आत्मीय कोई नहीं रहा। इस कारण निराश दशामे मैं सुबह रोज़ भगवान्से यह प्रार्थना करता हूँ।—

"क्षुद्र सी हमारी नाव चारों ओर है समुद्र
वायुके झकोरे उग्र रुद्र रूप धारे हैं।
शीघ्र निगल जानेको नौकाके चारों ओर
सिंधु की तरङ्गें सौ-सौ जिह्वायें पसारे हैं॥
हारे सभी भाँति हम, अब तो तुम्हारे बिना
झूठे ज्ञात होते और सबके सहारे हैं।

और क्या कहें अहो डुबा दो या लगा दो पार
चाहे जो करो शरण्य शरण तुम्हारे हैं ॥"

लौकिक कार्योंके लिए मै आपकी शरण चाहता हूँ।

शरणार्थी
म० प्र० द्विवेदी

[१७६]

दौलतपुर
४–९–३५

श्रीमान् तिवारीजीको सादर प्रणाम,

एक शिकायत सुन लीजिए, आप लोगोंके प्रयत्न करने और मेरे बहुत रोने-धोने पर बोर्डने यहाँ एक दवाखाना खोला। वैद्य जो आये, सज्जन और शिक्षित थे। उनके लिए मकान दिया, दवाखानेके लिए एक अच्छा कमरा दिया, बैठने और मरीजोंको देखनेके लिए बँगला दिया। वे बड़े आरामसे यहाँ सस्त्रीक रहने लगे। रोज गंगा-स्नान करते थे। वे ४ महीने ही रहे थे कि बिला पूर्व सूचनाके यहाँसे हटाकर रोख भेज दिये गये।

मैंने दूसरा वैद्य माँगा तो उनका तबादिला मुल्तवी कर दिया गया। मगर यह हुक्म आनेके पहले ही वे चले गये थे। अब कोई ३ हफ्तेसे यहाँ कोई वैद्य नहीं। बेचारे मरीज दूर-दूर से आते हैं और नाउम्मेद लौट जाते है। चेयरमैनको लिखा तो जवाब नदारद। क्या करूँ, कुछ समझमे नहीं आता। सुनता हूँ, खुशामद जरूर कामयाब होती है, वह हजम नहीं होती—

"केश पचैं, मक्खी पचैं, हालाहल पचि जाय।
जाहि खुशामद पचति है, तासों नाहिं उपाय ॥"

मगर इन लोगोंको खुशामद भी पच जाती है। औषधालयके लिए इतनी आरामकी जगहे दीं। मगर जब २) माहवार किराया माँगा तो सूखा जवाब। हालाँकि बोर्डके पास हजारों रुपया बचतमे दिखाया गया है। यह मुझे चेयरमैन साहबकी रिपोर्टकी उस आलोचनासे मालूम हुआ जो लीडरमे निकल चुकी है।

कृपा करके आप खुद या भाई साहबकी मारफ़त फिर एक बार चेयरमैन साहबसे कह सुन दीजिए।

दवाखाना यहाँका न तोड़ें। जो वैद्य यहाँ थे वे न भेजे जा सके तो और ही कोई भेज दिया जाय। बोर्डके मुलाजिमोंको अगर अपने कर्तव्य-पालनकी चिन्ता नहीं, तो न सही। दया-दाक्षिण्यको तो वे धता न बतावे।

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

[१७७]

दौलतपुर, रायबरेली
२६-११-३७

श्रीमान् पं० गुरुदयालजीको सादर प्रणाम,

कृपा करके, मेरे लिए, कुछ बेगार फिर कर दीजिए। बंदूकका लायसंस दिसम्बर ३७ के अन्त तक ही है। उसे अगले ३ सालके लिए फिर नया करा दीजिये। बुढ़ापेके कारण बदूक लेकर चलनेमे मुझे कष्ट होने लगा है। हो सके तो लायसंसमे एक attendant भी दर्ज करा दीजिए। ऐसा होता है। न हो सके तो न सही।

लायसंस रजिस्टर्ड पैकेटसे अलग भेज रहा हूँ। उसीके भीतर

वकालतनामा भी है। पं० शिवगोविन्दजीको यह काम सौप दीजिए। वे न कर सकें तो और ही किसीसे करा दीजिए।

१०) का मनिआर्डर भेज रहा हूँ। ७||) तो तीन सालकी फीस नये लैसंसकी है, २||) ऊपरी खर्चके लिए है। और जो आज्ञा हो भेज दूँ।

आपको मै बहुधा कष्ट देता हूँ। मुझ पर आपके अनेक एहसान हैं। कहाँ तक धन्यवाद दूँ।

कृपापात्र

महावीरप्र० द्विवेदी

[१७८]

पं० ज्वालादत्त शर्माको

जूही, कानपूर

६–११–१२

श्रीमान्,

कृपा-कार्ड मिला। दर्शन दीजिए। कृपा होगी।

आप शायद जानते ही होगे कि मै शहरसे ३–४ मील दूर देहातमे क्या जंगलमें रहता हूँ। पहले मै यहाँ आरामसे था। पर कई कारणोसे अब तकलीफ़मे हूँ। यदि आप अपने हाथसे भोजन बना सके और माफ कीजिए बर्तन-चौका भी कर सके तो आप यही चले आइए। अन्यथा नहीं। क्योकि यहाँ अहाते भरमे इस समय एक भी ऐसा आदमी नहीं जो चौका-बर्तन कर सकता हो। इसीसे शिष्टताके विरुद्ध मैंने यह बात साफ़-साफ़ लिख दी कि ऐसा न हो जो आपको तकलीफ हो।

भवदीय

महावीरप्रसाद द्विवेदी

[१७९]

दौलतपुर
भोजपुर, रायबरेली
१५-५-१४

नमोनमः,

१२ ता० का आपका कार्ड मिला। पुस्तकोका पैकेट भी मिला।

"Truth" की समालोचना करनेकी शक्ति मुझमे नहीं। क्षमा कीजिए।

आपका लेख अवश्य छापूँगा। मूलके संस्कृत प्रमाणोंका मुकाबला लेखमे उद्धृत प्रमाणोंसे करके बंगला पुस्तक लौटा दूँगा।

आत्मतत्त्व-प्रकाशका अनुवाद प्रकाशित करने लायक है। जरूर छपाइए।

अभी कोई २ महीने यहाँ रहनेका विचार है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

श्री बदरीनाथ भट्टको

[१८०]

दौलतपुर
२७-८-१६

प्रणाम,

महाभारतके विषयमें आपका २५ अगस्तका पत्र मिला। उसका अनुवाद बरसोका काम है। अभी वादा करना न करनेके बराबर है।

शायद उस समय मेरा स्वास्थ्य और भी बिगड़ जाय, क्योंकि मेरी शक्ति दिनपर दिन क्षीण होती जा रही है।

बंगलासे आप अनुवाद कराइए। ३/४ हो जाने पर मुझे खबर दीजिए। उस समय तबीयत काम करने योग्य रही तो संशोधन कर दूँगा। आप एक आदमी दीजिएगा। वह बंगला पढ़ता जायगा। मैं अनुवाद देखता और उसका संशोधन करता जाऊँगा।

पुरस्कारका निश्चय अभी न कीजिए। महीने भर संशोधनका काम करके मैं सूचना दूँगा। सम्भव है, अनुवादक बेपरवाही करे। उनकी बेपरवाहीसे मेरा काम बहुत बढ़ जायगा। उनसे कह दीजिए, अनुवादका मुकाबला और उसमें संशोधन अच्छी तरह किया जायगा। उपाय भर कसर न करें। विशेष करके जनार्दन झाको ताकीद होनी चाहिए।

अनुवादके मैं कुछ नियम भेज दूँगा। उनकी कापी अनुवादकोंको भेज दीजिएगा। उनकी पाबन्दी होनी चाहिए।*

भवदीय
म०प्र० द्विवेदी

---

* यह पत्र पं० बद्रीनाथ भट्ट, बी० ए० को लिखा गया था। ये पं० रामेश्वर भट्टके तृतीय पुत्र थे और उन दिनों इण्डियन प्रेसके साहित्य विभागमें, प्रयागमें, काम करते थे। द्विवेदीजीकी इच्छा इनको सरस्वतीका सम्पादक बनानेकी थी। इसीलिए द्विवेदीजीके यहाँसे सरस्वतीकी सामग्री आनेपर भट्टजी जब उसे देख लेते तब वह कम्पोज़ करनेको दी जाती थी। भट्टजी 'बालसखा'के प्रथम सम्पादक थे। इण्डियन प्रेससे अलग होने पर कई वर्ष बाद भट्टजी लखनऊ विश्वविद्यालमें हिन्दी अध्यापक हो गये। वहाँ उन्होंने मकान बनवाये, विवाह किया, सन्तानवान् हुए और युवावस्थामें ही चल बसे।

पं० कामताप्रसाद गुरुको †

[१८१]

दौलतपुर, रायबरेली
३१-७-१९१९

प्रणाम,

मैं बहुत समयसे प्रेसके लिए दो एक अच्छे आदमियोंकी खोजमें हूँ, बड़े बाबूकी आज्ञासे। एक महाशय बरेलीसे आये भी। पर चले गये। दो-एकने आना मंजूर किया, मगर आये नही।

आज अनायास ही एक बडे योग्य सज्जनने प्रेसमे काम करना मंजूर किया है। ये मेरे पड़ोसी है और मेरे हार्दिक मित्र भी हैं। साहित्यसे निःसीम प्रेम है। डेढ-दो सालसे इनका बहुत-सा समय मेरे ही सहवासमे बीता है। कानपुर तक जानेकी कृपा करते रहे हैं। इनका नाम है पं० देवीदत्त शुक्ल। इनकी अर्जी इसी चिट्ठीके साथ भेजता हूँ।

शुक्लजीकी उम्र कोई ३० वर्षकी है। सेण्ट्रल हिन्दू-कालेज, बनारसमे ए० फ० (एफ० ए०) तक पढ़ा है। पर फ़ेल है। बाहरी पुस्तकें पढ़नेमें मस्त रहनेके कारण पास नही हुए। संस्कृत भी साधारण जानते हैं। कुछ उर्दूका भी ज्ञान रखते है। हिन्दी-साहित्य और हिन्दी-लेखकोंसे खूब परिचय रखते हैं। बडे विद्या-व्यसनी है। प्रतिष्ठित खानदानके हैं।

---

† पं० कामताप्रसाद गुरुका जन्म २४ दिसम्बर १८७५को हुआ था इनकी मृत्यु ७३ वर्षकी उम्रमें १६ नवम्बर १९४८ में हुई। हिन्दीमें व्याकरण के लिए प्रसिद्ध हैं। १९१८ ई० से १९१९ तक—एक साल—'सरस्वती' में काम किया था। उसी समयका यह पत्र है, जो पं० लल्लीप्रसादजी पांडेय के पास सुरक्षित है।

स्वभाव और वेश-भूषामें सादगीका अवतार हैं। इनके कई एक लेख 'सरस्वती'में निकल चुके हैं। दो-एकका हवाला भी लीजिए—

१. कनक-प्रकाश (समालोचना) मार्च १६१५, पृ० १६१।
२. बनाम—मुफ्त शिक्षाके शत्रु-समूह (अनुवाद) सितम्बर १६१८, पृ० १२८।
३. हिन्दीप्रचारके कुछ बाधक कारण (नया लेख, मौलिक) जुलाई १६१७, पृ० ४२।

इन्हें आप पढ़कर देखिए, कैसे हैं। ये पहले रायपुर जिलेमें एक अंगरेजी स्कूलमे असिस्टेंट मास्टर थे। अपने ऋषि-कल्प चचाके प्यारे होनेके कारण उनकी सेवा करनेके निमित्त नौकरी छोड़ आये थे। चचा परलोकवासी हो गये। इस कारण अब ये फिर कही बाहर जानेवाले हैं। बात-चीतसे मालूम हुआ कि यदि किसी प्रेसमे साहित्य-सम्बन्धी कोई काम मिल जाय तो सरिश्ते तालीममे जानेकी अपेक्षा यह काम ये अधिक पसन्द करेंगे। इण्डियन प्रेसकी प्रशंसा सुनकर आपके यहाँ ये बड़ी खुशीसे रहनेको कहते हैं। दिल लगाकर काम करेंगे। वक्तकी पाबन्दीकी परवा न करेंगे, उसके बाद भी, जरूरत होनेपर काम करेंगे। प्रेसके कामको अपना समझेंगे। कोई अनिवार्य बाधा न आई तो काम कभी छोड़ेंगे नही। मुझे मालूम तो अभी यही होता है कि बड़े बाबू और अन्य लोग भी इनसे प्रसन्न रहेंगे। ईर्ष्याके लड़ाई-झगड़े ये जानते ही नही। हाँ, महीने-दो महीने इन्हें कामका ढर्रा ज़रूर बताना पड़ेगा। इन्हे वैद्य-विद्याका भी ज्ञान है। वैद्यक इनके घरकी परम्पराप्राप्त विद्या है। इस समय भी इनके दो भाई और दो भतीजे नामी वैद्य हैं।

ऐसे आदमी मुश्किलसे मिलते है। इन्हे आप कोई काम दीजिए। ५०) महीनेमे इनका खर्च अभी चल जायगा। अगर पाच-छः महीने काम करने पर ये सुयोग्य देख पड़ें तो छः महीने बाद ६०) कर

दीजिएगा। आगे इनका काम आप ही इनकी तरक्की करा लेगा। बड़े बाबूको यह पत्र और इनकी अर्जी सुना दीजिए और जो आज्ञा हो लिख भेजिए। मै कानपुर जानेवाला हूँ। पर आपके उत्तरकी राह अभी ५, ६ दिन देखकर जाऊँगा। अगर मै 'सरस्वती'का काम करने लायक हुआ तो ये मेरे सहकारी हो सकेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

श्रीमती ऊषादेवी मित्रको

[१८२]

दौलतपुर, रायबरेली
४ जून १९३३

देवीजी !

चिट्ठी मिली। उसमें यह पढ़कर कि मै निःसहाय विधवाओंका सहायक हूँ, मै विकल हो उठा; मेरी आखोंसे आँसू निकल पड़े।

आपकी चिट्ठीसे प्रकट है कि आप अभी हिन्दी अच्छी तरह नही लिख सकतीं। शायद आप वङ्गदेशीया हैं। तथापि आप एक छोटी-सी कहानी हिन्दीमे लिखकर पं० देवीदत्तजी शुक्ल सम्पादक 'सरस्वती', प्रयाग, को भेज दीजिए। उसीके साथ यह पोस्टकार्ड भी नत्थी कर दीजिए। यदि उसमे कुछ भी तत्त्व या मनोरञ्जकता होगी तो भाषाका सशोधन करके वे उसे 'सरस्वती'मे छाप देंगे।*

निवेदक
म० प्र० द्विवेदी

---

*यह पत्र श्रीमती ऊषा मित्र (जबलपुर) को द्विवेदीजीने लिखा था, जिसे उन्होंने पं० देवीदत्त शुक्लजीके पास भेज दिया। यह पत्र भी सम्मेलन के संग्रहालयमें सुरक्षित है।

पं० लक्ष्मीधर वाजपेयीको

[१८३]

दौलतपुर, रायबरेली
३०-१-१५

श्रीमान्,

दिसम्बर १५ मे, ४०) महीनेके हिसाबसे मैं २००) दे चुकूँगा। तब मेरा देना सिर्फ १,१२०) रह जायगा। यदि जनवरी १६ मे किसी तरह ६००) देनेसे छुटकारा हो जाय तो मै खीच-खाँचकर इतने रुपयेका प्रबन्ध करनेकी चेष्टा करूँगा। अगले साल मुझे अपनी······भानजीकी शादी करना है। इस कारण मै चाहता हूँ कि यदि बैंकका देना चुकता कर दिया जाय तो उस कामकी फ़िक्रमे लगूँ। मै रिश्वत देना नहीं चाहता। बीस-पचीस रुपये मै आपको खुशीसे भेज दूँगा। मै इसीको पुण्यखाते देना समझूँगा। इतनेसे यदि काम न चल सकेगा तो दस पाँच और दे दूँगा। इस रुपये को आप चाहे जिसे दें और जिस तरह खर्च करें। आप अपने मित्रोसे मिलकर मुझे लिखिए कि यह हो सकेगा या नही। यदि हाँ, तो क्या कार्रवाई करनी पड़ेगी। ड्राफ्ट जैसा वे बतावें लिख भेजिए, या जो वजूहात लिखनेकी राय दे वही बता दीजिए। बड़ी कृपा होगी। मैं झूठ बोलनेसे डरता हूँ। यह मुझे न करना पड़े, तो बहुत अच्छा हो। मैं लाहौर चला आता। मगर मेरी तन्दुरुस्ती इतनी दूर सफर करने योग्य नहीं। अतएव इस उपकारका भार आप ही पर छोड़ता हूँ।

"सिपुर्दम ब तो मायये खेशरा
तु दानी हिसाबे कमो बेशरा"

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी मृत्युका समाचार

[१८४]

प्रेषक :—

श्री कमलाकिशोर त्रिपाठी
(द्विवेदीजीके भांजे)

बाबू हरिप्रसन्नजी घोष
मालिक—इण्डियन प्रेस,
इलाहाबाद

दौलतपुर, रायबरेली
२२-१२-३८

प्रिय बाबूजी,

अत्यन्त शोकके साथ सूचित करना पड़ रहा है कि पूज्य मामाजीका देहान्त कल सुबह ४-४५ पर रायबरेलीमे हो गया। उसी वक्त शवको कार द्वारा गाँव ले आया और दाह-संस्कार किया। मैने क्रिया कर्म किया है। शुद्धता ३०-१२-३८ और तेरही ता० २-१-३९* सोमवार को है।

आपका
कमलाकिशोर त्रिपाठी

---

* मूल पत्रमें (जो कार्ड पर है) गलतीसे ३८ लिखा है।

—मूल पत्र श्री मुरारीलालजी केडियाके संग्रहमें सुरक्षित है।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदीजीकी रचनाओंकी सूची

१ अतीत स्मृति
२ अद्भुत आलाप
३ अपर प्राइमर रीडर
४ अमृतलहरी
५ अवधके किसानोंकी बरबादी
६ आख्यायिका-सप्तक
७ आत्मनिवेदन (अभिनन्दनके समयका भाषण)
८ आध्यात्मिकी
९ आलोचनाजलि
१० ऋतु-तरंगिणी
११ औद्योगिकी
१२ कविता-कलाप
१३ कान्यकुब्ज-अबला-विलाप
१४ कान्यकुब्जली-व्रतम्
१५ कालिदास और उनकी कविता
१६ कालिदासकी निरंकुशता
१७ काव्य-मंजूषा
१८ किरातार्जुनीय
१९ कुमारसम्भव
२० कुमारसम्भव-सार
२१ कोविद-कीर्तन
२२ कौटिल्य-कुठार*
२३ गंगालहरी
२४ चरितचर्या
२५ चरित-चित्रण
२६ जल-चिकित्सा
२७ जिला कानपुरका भूगोल
२८ तरुणोपदेश*
२९ दृश्यदर्शन
३० देवी-स्तुति-शतक
३१ द्विवेदी-काव्यमाला
३२ नागरी
३३ नाट्यशास्त्र
३४ नैषध-चरित-चर्चा
३५ पुरातत्त्व-प्रसंग
३६ पुरावृत्त
३७ प्राचीन-चिह्न
३८ प्राचीन पण्डित और कवि
३९ बालबोध या वर्णबोध
४० बेकन-विचार-रत्नावली
४१ भामिनी-विलास

४२ भाषण (द्विवेदी मेला)
४३ भाषण (कानपुर. साहित्य-सम्मेलनके स्वागताध्यक्ष पदसे)
४४ महिम्नस्तोत्र
४५ महिला-मोद
४६ मेघदूत
४७ रघुवंश
४८ रसज्ञ-रंजन
४९ लेखाजलि
५० लोअर प्राइमरी रीडर
५१ वनिता-विलास
५२ वाग्विलास
५३ विक्रमाक देवचरित-चर्चा
५४ विश्व-विनोद
५५ विज्ञान-वार्ता
५६ विचारविमर्श
५७ विदेशी-विद्वान्
५८ विनय-विनोद
५९ विहार-वाटिका
६० वेणी-संहार
६१ वैज्ञानिक-कोष
६२ वैचित्र्य-चित्रण
६३ शिक्षा
६४ शिक्षा-सरोज रीडर
६५ संकलन
६६ संपत्ति-शास्त्र
६७ समाचार-पत्र-संपादकस्तव
६८ समालोचना-समुच्चय
६९ साहित्य-संदर्भ
७० साहित्य-सीकर
७१ साहित्यालाप
७२ सुकवि-संकीर्तन
७३ सुमन
७४ सोहागरात*
७५ स्नेहमाला
७६ स्वाधीनता
७७ हिन्दी कालिदासकी समालोचना
७८ हिन्दीकी पहली किताब
७९ हिन्दी भाषाकी उत्पत्ति
८० हिन्दी महाभारत
८१ हिन्दी शिक्षावली भाग तीनकी समालोचना

---

* चिह्नांकित रचनाओंका प्रकाशन द्विवेदीजीने उचित नहीं समझा अतः ये रचनाएँ अप्रकाशित हैं।